मूल्य : ₹ 50 नवम्बर 2025 आई.एस.ओ. 9001: 2015 संगठन

भाकृअनुप
ICAR

# खेती

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ

## ''लवणीय पारिस्थितिकी तंत्र पुनः स्थापना हेतु प्रबंधन प्रौद्योगिकियों पर विशेषांक''

**विश्वव्यापी प्रयासः लवणीय पारिस्थितिकीय तंत्र पुनः स्थापना हेतु अत्याधुनिक दृष्टिकोण**
**(अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन, 29 अक्टूबर से 01 नवम्बर 2025, गोवा)**

# मृदा स्वास्थ्य एवं सतत विकास हेतु मार्ग निर्माण

मृदा में लवणता आज वैश्विक स्तर पर कृषि उत्पादकता और खाद्य सुरक्षा के सामने एक गंभीर चुनौती के रूप में उभर रही है। विशेषकर बदलते जलवायु परिप्रेक्ष्य में, लवणीय और क्षारीय मृदा का सतत प्रबंधन अत्यंत आवश्यक हो गया है।

इसी दिशा में जागरूकता बढ़ाने, वैज्ञानिक शोध को प्रोत्साहित करने तथा वैश्विक सहयोग को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से भारतीय मृदा लवणता एवं जल गुणवत्ता सोसाइटी, करनाल, भाकृअनुप-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल एवं भाकृअनुप-केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संघ, गोवा के संयुक्त तत्वावधान में 'लवणीय पारिस्थितिकीय तंत्र पुनःस्थापना हेतु अत्याधुनिक दृष्टिकोण पर विश्वव्यापी प्रयास (WE-CARE-2025)' विषय पर अंतर्राष्ट्रीय लवणता सम्मेलन 3.0 का आयोजन 29 अक्टूबर से 01 नवम्बर, 2025 तक भाकृअनुप-केंद्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संघ, गोवा में किया जा रहा है।

इस महत्वपूर्ण आयोजन द्वारा दुनियाभर के विशेषज्ञों, नीति-निर्माताओं और हितधारकों को एक मंच पर लाया जाएगा। इसका उद्देश्य लवणीय मृदा और पारिस्थितिकीय तंत्र से संबंधित समस्याओं के समाधान खोजना है। सम्मेलन में स्थायी कृषि हेतु नए और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किए जाएंगे। इसके साथ ही लवणीय पारिस्थितिकी के सतत प्रबंधन पर चर्चा होगी। इस दौरान विभिन्न चुनौतियों के संभावित समाधानों पर विचार-विमर्श किया जाएगा।

### सम्मेलन के उपविषय

- लवणीय और तनावग्रस्त पारिस्थितिकी की पहचान, सीमांक और मानचित्रण में प्रगति
- लवणीय एवं तनावग्रस्त पारिस्थितिकियों के सुधार में नवाचार
- लवणीय पारिस्थितिकी के लिए बहु-तनाव सहिष्णु फसलों का विकास
- लवणीय पारिस्थितिकी बनाम जलवायु परिवर्तन
- सामाजिक-आर्थिक पहलू, पारिस्थितिकी सेवाएं और नीति-शासन
- 'सतत तटीय कृषि' पर विशेष सत्र

कार्यक्रम का प्रमुख केंद्र लवणीय मृदा के सुधार और स्वास्थ्य पुनर्स्थापन विषय पर रहेगा। इसमें अनुसंधान और तकनीकी प्रगति को भी प्रमुखता दी जाएगी। इसके साथ ही, सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन, कृषि उत्पादन की वृद्धि और खाद्य सुरक्षा में लवणीय मृदा प्रबंधन की भूमिका पर भी चर्चा की जाएगी।

अतः यह सम्मेलन वैश्विक स्तर पर लवणीय पारिस्थितिकीय तंत्रों के पुनर्स्थापन हेतु अनुसंधान और नीतिगत विकास को दिशा देने वाला एक महत्वपूर्ण मंच सिद्ध होगा। इसमें विश्वभर के विशेषज्ञों और प्रमुख वक्ताओं की भागीदारी से भविष्य के शोध, प्रबंधन रणनीतियों और नीतिगत पहल पर सार्थक विचार- विमर्श होगा, जो सतत कृषि एवं पारिस्थितिकी संरक्षण के लिए ठोस मार्ग प्रशस्त करेगा।

### संगोष्ठियों का सफर

अंतर्राष्ट्रीय लवणीय मृदा संगोष्ठी का आयोजन पहली बार वर्ष 1980 में हुआ। इसने लवणीय मृदा की समस्या से निपटने और किसानों के जीवनस्तर को सुधारने के लिए वैश्विक सहयोग की नींव रखी। बदलते जलवायु परिदृश्य में लवण प्रबंधन के महत्व को देखते हुए वर्ष 2008 में करनाल में भारतीय मृदा लवणता एवं जल गुणवत्ता सोसाइटी की स्थापना की गई।

इस सोसाइटी द्वारा प्रथम अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन 'स्वर्ण जयंती अंतर्राष्ट्रीय लवणता सम्मेलन बदलते जलवायु में लवणीय पर्यावरण में अनुकूल कृषि-चुनौतियां और अवसर' का आयोजन 21-23 फरवरी वर्ष 2019 को किया, जो केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल की 50वीं वर्षगांठ को चिन्हित करता है।

नवाचार से भविष्य की हरित दिशा

इसके बाद, दूसरा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन 14-16 फरवरी 2024 को करनाल में आयोजित किया गया। इन संगोष्ठियों ने वैश्विक स्तर पर लवणीय मृदा प्रबंधन पर संवाद को सशक्त किया है और यह सिद्ध किया है कि सामूहिक सहयोग एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इन चुनौतियों का समाधान संभव है।

लवणीय मृदा प्रबंधन कृषि उत्पादकता, पर्यावरणीय संतुलन और खाद्य सुरक्षा से जुड़ी एक महत्वपूर्ण प्राथमिकता है। इस दिशा में अनुसंधान, नवाचार और वैश्विक सहयोग को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से आयोजित 'अंतर्राष्ट्रीय लवणता सम्मेलन 3.0 (WE-CARE-2025)' एक महत्वपूर्ण पहल है। यह सम्मेलन वैज्ञानिकों, नीति-निर्माताओं, कृषि विशेषज्ञों और हितधारकों को साझा मंच प्रदान करेगा। यहां लवणीय मृदा के सुधार, बहु-तनाव सहिष्णु फसलों के विकास, सतत तटीय कृषि, सामाजिक-आर्थिक पहलुओं तथा जलवायु परिवर्तन अनुकूलन जैसे विषयों पर गहन चर्चा होगी। इस आयोजन से प्राप्त अनुभव और सुझाव भविष्य की नीतियों और अनुसंधान की दिशा निर्धारित करने में उपयोगी सिद्ध होंगे। साथ ही, यह सम्मेलन किसानों की उत्पादकता बढ़ाने, मृदा एवं जल संसाधनों के कुशल प्रबंधन को प्रोत्साहित करने तथा सतत कृषि को गति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। निस्संदेह, यह आयोजन कृषि क्षेत्र में लवणीय मृदा प्रबंधन के लिए ठोस समाधान उपलब्ध करवाने के साथ-साथ सरकार की सतत कृषि और पारिस्थितिकी संरक्षण की प्रतिबद्धता को और सुदृढ़ करेगा। ■

**इस विशेषांक हेतु अतिथि संपादकीय बोर्ड**

डा. पारुल सुन्धा (वरिष्ठ वैज्ञानिक), डा. प्रियंका चंद्रा (वरिष्ठ वैज्ञानिक), डा. गजेन्द्र यादव (प्रधान वैज्ञानिक),
डा. अरविन्द कुमार राय (प्रधान वैज्ञानिक एवं विभागाध्यक्ष) एवं डा. राजेन्द्र कुमार यादव (निदेशक)

# खेती

कृषि विज्ञान द्वारा ग्रामोत्थान की मासिक पत्रिका

वर्ष: 78, अंक: 7, नवम्बर 2025



## संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. राजबीर सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. अनुराधा अग्रवाल** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. विनोद कुमार सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-क्रीडा, हैदराबाद
4. **डा. धीर सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल
5. **डा. के.के. सिंह** — **सदस्य**
   कुलपति
   सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि विश्वविद्यालय
   मोदीपुरम, मेरठ
6. **श्री हर्षवर्धन** — **सदस्य**
   प्रधान जनसंपर्क अधिकारी, इफको, नई दिल्ली
7. **श्री रितु राज** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **सुश्री नीलम त्यागी** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
9. **सुश्री सुनीता अरोड़ा** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक (डीकेएमए)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रधान संपादक
**डा. अनुराधा अग्रवाल**
संपादक
**सुनीता अरोड़ा**
संपादन सहयोग
**गजेन्द्र**

प्रभारी (उत्पादन एकक)
**पुनीत भसीन**



प्रभारी (व्यवसाय एकक)
**भूपेन्द्र दत्त**
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: businessuniticar@gmail.com
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

**एक प्रति: रु. 50.00 वार्षिक : रु. 500.00**
**विशेषांक : रु. 200.00**

E-mail : khetidipa@gmail.com



**डिस्क्लेमर**
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।


# इस अंक में


संपादकीय
लवणता प्रभावित पारिस्थितिकी का सतत प्रबंधन, **अरविन्द कुमार राय**

**5 स्मार्ट खेती**
**लवणीय मृदा का डिजिटल मानचित्रण और मूल्यांकन**
अमरेश चौधरी, संदीप कुमार, भास्कर नरजरी, गजेन्द्र यादव **और** ए.के. राय

**8 जीनोम संपादन**
**जलवायु चुनौतियों के खिलाफ फसलों का सशक्तिकरण**
अनिता मान, सुजाता, पूनम, प्रीति, नोयोनिका, हरीश, अन्नु, कृशानु **और** नितीश रंजन प्रकाश

**12 शुष्क क्षेत्र**
**अश्वगंधा उत्पादन में अपशिष्ट ऊन तकनीक**
अनिता मीना, एम.के. जाटव, आर.पी. मीना **और** मनप्रीत कौर

**15 श्रीअन्न**
**लवणीय भूमि में बाजरे की खेती**
अर्चना वाट्स, अरुण चाको, प्रियांशी सेन, अंशुल वाट्स, प्राणजल यादव, सोहम रे **और** शिवानी नागर

**18 मृदा स्वास्थ्य**
**स्वस्थ मृदा से समृद्ध भविष्य**
भावना बाबल **और** गजेन्द्र यादव

**21 समाधान**
**लवणीय जलभराव वाले क्षेत्रों का प्रबंधन**
राकेश बन्याल **और** वरुण सैनी

**24 मशीनरी**
**कट-सॉइलर तकनीक द्वारा सरसों-बाजरा की उपज में वृद्धि**
गजेंद्र यादव, नेहा, राजेन्द्र कुमार यादव, अरविन्द कुमार राय, गोविन्द प्रसाद **और** जून्या ओनिशी

**27 वैकल्पिक**
**जलवायु स्मार्ट पोषक फसल किनोवा**
कैलाश प्रजापत, सतीश कुमार सनवाल, राम किशोर फगोड़िया, सुरेश कुमार **और** अनिल कुमार

# विषय-सूची

30 प्रबंधन

**लवणीय मृदा में चंदन की खेती**
राज कुमार, कमलेश वर्मा, अश्वनी कुमार, मनीष कुमार, राकेश बन्याल, अवनी, अवतार सिंह, राम किशोर फागोड़िया **और** अजय भारद्वाज

34 व्यावसायिक

**लवणीय जल से पॉलीहाउस में सब्जी उत्पादन**
रामेश्वर लाल मीणा, बाबू लाल मीणा **और** प्रियंका चन्द्रा

38 क्षारीय

**खाद्य उत्पादन वृद्धि में मृदा सुधार विकल्पों की भूमिका**
पारुल सुन्धा, निर्मलेंदु बसाक, अरविंद कुमार रॉय, प्रियंका चंद्रा, अमन कुमार, अमरेश चौधरी **और** राजेंद्र कुमार यादव

सम्मेलन

**आवरण II**
**मृदा स्वास्थ्य एवं सतत विकास की दिशा में बढ़ते कदम**

42 लवणीय मृदा

**आर्बस्कुलर माइकोराइजा आधारित जैव पादप वृद्धि वर्धक**
प्रियंका चंद्रा, अरविन्द कुमार राय, पारुल सुन्धा, निर्मलेंदु बसाक **और** राजेंदर कुमार यादव

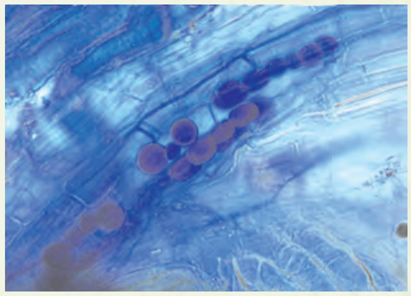

45 लाभकारी

**सुधरी क्षारीय मृदा हेतु समेकित कृषि प्रणाली मॉडल**
राज कुमार, निर्मल सिंह, सुरेश कुमार, राम किशोर फगोड़िया **और** अश्वनी कुमार

49 मृदा पोषण

**सरसों की खली के फायदे**
जीतेन्द्र सिंह, विजयता सिंह, जोगेन्द्र सिंह, धीरज कुमार, गुरुदीन, अनुज चौधरी **और** गोविंद

52 परिदृश्य

**बदलती जलवायु एवं अजैविक तनावों के अनुकूल खेती**
अनुज कुमार, मंगल सिंह, माम्रुथा एच.एम., रिंकी, वनिता पाण्डेय, अश्वनी कुमार आर्य, हर्ष देव चौधरी **और** अरुण शर्मा

56 कृषि कैलेण्डर

**नवम्बर के मुख्य कृषि कार्य**
राजीव कुमार सिंह, कपिला शेखावत, एस.एस. राठौर, आदित्य सिंह **और** अंजली पटेल

नवाचार

**आवरण III**
**लवणीय जल के उपचार हेतु चुम्बकीय जल कंडीशनर**

# लवणीय मृदा सुधार की ओर बढ़ते कदम

वर्तमान में कृषि भूमि में द्वितीयक लवणता और क्षारीयता की समस्या में असंवहनीय कृषि पद्धतियों का महत्वपूर्ण योगदान है। विश्व स्तर पर लवण प्रभावित मृदा का कुल क्षेत्रफल 1381 मिलियन हैक्टर है, जो कुल वैश्विक भूमि क्षेत्र का लगभग 10.7 प्रतिशत है। इसका प्रभाव सीधे तौर पर 2.6 बिलियन से अधिक लोगों की आजीविका पर पड़ता है, जिनमें लगभग 74 प्रतिशत संसाधन-विहीन किसान शामिल हैं। इस समस्या के कारण प्रतिवर्ष लगभग 6.3 अरब अमेरिकी डॉलर का आर्थिक नुकसान होता है।

पूर्वानुमानों से संकेत मिलता है कि आने वाले दशकों में लवण प्रभावित मृदा का और अधिक विस्तार होगा, जिससे वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर संकट गहराएगा। वर्तमान में लवणता प्रभावित क्षेत्रों का सबसे बड़ा विस्तार ऑस्ट्रेलिया (357 मिलियन हैक्टर), अर्जेंटीना (153 मिलियन हैक्टर), कजाकिस्तान (94 मिलियन हैक्टर), रूसी संघ (77 मिलियन हैक्टर), संयुक्त राज्य अमेरिका (73.4 मिलियन हैक्टर), ईरान (55.6 मिलियन हैक्टर), सूडान (43.6 मिलियन हैक्टर), उज्बेकिस्तान (40.9 मिलियन हैक्टर), अफगानिस्तान (38.2 मिलियन हैक्टर) और चीन (36 मिलियन हैक्टर) में है। ये दस देश दुनिया के कुल लवण प्रभावित क्षेत्र का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा रखते हैं।

भारत में लगभग 6.73 मिलियन हैक्टर भूमि लवणता से प्रभावित है। इनमें 16 राज्यों में 2.95 मिलियन हैक्टर लवणीय भूमि सम्मिलित है। लवणता और क्षारीयता के कारण वार्षिक फसल उत्पादन हानि 16.84 मिलियन टन आंकी गई है। इससे लगभग 2300 मिलियन रुपये (27 मिलियन अमेरिकी डॉलर) का नुकसान होता है। अनुमानों के अनुसार, वर्ष 2050 तक यह प्रभावित क्षेत्र बढ़कर 16.2 मिलियन हैक्टर तक पहुंच सकता है, जो गंभीर चिंता का विषय है। मृदा लवणीकरण के मुख्य कारण अपर्याप्त जल निकासी व्यवस्था, जलभराव, असंतुलित कृषि पद्धतियां और सिंचाई के लिए निम्न गुणवत्ता वाले भूजल का बढ़ता उपयोग हैं।

हरियाणा के करनाल स्थित भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान ने लवण प्रभावित मृदा और जल के पुनर्ग्रहण एवं उत्पादक प्रबंधन हेतु प्रौद्योगिकियों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह संस्थान लवणीय भूमि प्रबंधन हेतु प्रौद्योगिकी विकास के क्षेत्र में समर्पित विश्व के अग्रणी संस्थानों में से एक है। दशकों से, संस्थान प्रभावी विस्तार कार्यक्रमों के माध्यम से लाखों किसानों तक पहुंचते हुए लवण प्रभावित मृदा और जल के प्रबंधन हेतु एकीकृत समाधान प्रदान कर रहा है। इसके परिणामस्वरूप लगभग 22 लाख हैक्टर लवण प्रभावित भूमि को पुनः उत्पादक बनाया गया है। अनुमान है कि इस पुनर्ग्रहण से राष्ट्रीय भंडार में 15 मिलियन टन से अधिक खाद्यान्न का योगदान हो रहा है।

भारतीय मृदा लवणता एवं जल गुणवत्ता सोसाइटी की स्थापना 6 अगस्त 2008 को करनाल में सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम XXI, 1860 (पंजीकरण संख्या ROS-088) के अंतर्गत की गई। यह सोसाइटी मृदा लवणता और जल गुणवत्ता के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास को बढ़ावा देने के लिए कार्यरत है। इसका उद्देश्य वैज्ञानिकों, शोधकर्ताओं, छात्रों और विभिन्न हितधारकों को उभरते वैज्ञानिक विषयों पर विचारों एवं ज्ञान के आदान-प्रदान हेतु एक मंच प्रदान करना है, ताकि लवण प्रभावित पारिस्थितिकी प्रणालियों के सतत प्रबंधन पर चर्चा और विमर्श हो सके।

यह सोसाइटी अनुसंधान संस्थानों, विकास संगठनों, उद्योगों और किसानों के बीच एक सेतु के रूप में भी कार्य करती है। अब तक इसने 2 अंतर्राष्ट्रीय लवणता सम्मेलन और 6 राष्ट्रीय सम्मेलन/सेमिनार आयोजित किए हैं। इन आयोजनों के दौरान सोसाइटी ने अपने सदस्यों, विशेषज्ञों, हितधारकों और किसानों को एकजुट कर लवणीय पारिस्थितिकी प्रणालियों की बहुआयामी समस्याओं के समाधान हेतु विचार-विमर्श और कार्य योजना तैयार करने में सक्रिय भूमिका निभाई है।

**(आर.के. यादव)**
अध्यक्ष
भारतीय मृदा लवणता एवं जल गुणवत्ता सोसाइटी

संपादकीय

# लवणता प्रभावित पारिस्थितिकी का सतत प्रबंधन

वर्तमान पारिस्थितिकी परिदृश्य में मृदा लवणता एक गंभीर और व्यापक चुनौती के रूप में सामने आई है, जो शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में कृषि उत्पादन, खाद्य सुरक्षा, जैव विविधता संरक्षण और पर्यावरणीय स्थिरता को प्रभावित करती है। वर्तमान में विश्वभर में लगभग 1381 मिलियन हैक्टर भूमि लवणता से प्रभावित है, जो कुल कृषि भूमि का लगभग 20 प्रतिशत और सिंचित भूमि का 30 प्रतिशत है। यह समस्या 100 से अधिक देशों में पाई जाने वाली क्षारीय और लवणीय मृदा को सम्मिलित करती है। तटीय क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के कारण समुद्री जल के अंतर्ग्रहण और जलप्लावन के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील हैं। असंवहनीय कृषि पद्धतियां और दीर्घकालिक जलवायु परिवर्तन मृदा एवं फसलों में लवणता को और अधिक गंभीर बना रहे हैं। विश्व की लगभग 52 प्रतिशत कृषि भूमि के मध्यम से गंभीर क्षरण से 2.6 अरब (लगभग 74 प्रतिशत) संसाधन-विहीन किसानों की आजीविका प्रभावित होती है, जिससे लगभग 6.3 अरब अमेरिकी डॉलर का वार्षिक आर्थिक नुकसान होता है। इस परिप्रेक्ष्य में पारिस्थितिक स्थिरता, मृदा क्षरण की प्रक्रिया को कम करने और सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु लागत-प्रभावी भूमि प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। भारत इस दिशा में प्रतिबद्ध है और वर्ष 2030 तक 26.0 मिलियन हैक्टर क्षारीय भूमि के पुनर्स्थापन का लक्ष्य निर्धारित कर चुका है।

ये चुनौतियां लवणता प्रभावित भूमि के सतत प्रबंधन की तत्काल आवश्यकता को रेखांकित करती हैं। भूमि पुनर्स्थापन पद्धतियां न केवल मृदा लवणता के विस्तार को रोकने में सहायक हैं, बल्कि खाद्य सुरक्षा एवं समाज के कल्याण को भी सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत में इस उद्देश्य से वर्ष 1969 में केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल की स्थापना की गई। यह संस्थान लवणता प्रभावित मृदा के सुधार एवं प्रबंधन में अग्रणी है। विगत वर्षों में इस संस्थान द्वारा उपसतही जल निकासी प्रणाली, लवण-सहिष्णु फसल किस्में तथा जिप्सम-आधारित मृदा संशोधन जैसी परिवर्तनकारी तकनीकों के माध्यम से 22 लाख हैक्टर से अधिक लवणीय भूमि का सुधार किया गया है। इससे लगभग 1.7 करोड़ टन वार्षिक खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि हुई है। हालांकि उच्च लागत, सीमित किसान जागरूकता, स्थल-विशिष्ट मृदा भिन्नता और जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न द्वितीयक लवणता जैसी चुनौतियां इन तकनीकों के विस्तार में बाधक बनी हुई हैं।

भविष्य की दिशा में संस्थान का लक्ष्य नवीन संशोधन सामग्री, ट्रांसजेनिक फसलें, जैव उपचार तकनीकें और डिजिटल उपकरणों के विकास पर केंद्रित है, ताकि भूमि उत्पादकता में वृद्धि हो सके तथा लवण प्रभावित क्षेत्रों का पुनर्स्थापन सुनिश्चित हो सके। इसके साथ ही, किसान-केंद्रित और जलवायु-अनुकूल कृषि पद्धतियों को भी बढ़ावा दिया जा सके।

इस विशेषांक में शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में मृदा क्षारीयता तथा सिंचित कृषि क्षेत्रों में उत्पादकता वृद्धि हेतु जिप्सम और अन्य विकल्पों जैसे-एलिमेंटल सल्फर, प्रेसमड, फ्लू गैस डीसल्फराइजेशन जिप्सम, बायोगैस स्लरी, नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद के प्रयोग पर लेख शामिल हैं। इसके अतिरिक्त माइकोराइजा द्वारा अजैविक और जैविक तनावों का प्रबंधन, कट-सॉइलर तकनीक से क्षारीय मृदा सुधार और प्रकृति-आधारित समाधानों पर भी विशेष ध्यान दिया गया है। साथ ही जीनोम संपादन के माध्यम से जलवायु चुनौतियों के अनुरूप फसलें विकसित करना तथा संरक्षित खेती के माध्यम से लवणीय जल का उपयोग कर फल-सब्जी उत्पादन एवं कृषि वानिकी की वर्तमान प्रौद्योगिकियों का भी उल्लेख किया गया है।

भाकृअनुप-सीएसएसआरआई, करनाल लवणता प्रभावित क्षेत्रों में रहने वाले किसानों के लिए आशा और समृद्धि का संदेश लेकर कार्यरत है। **'खेती'** पत्रिका का यह विशेषांक लवणता प्रभावित भूमि से जुड़ी चुनौतियों और उनके समाधान पर केंद्रित है। इस जटिल समस्या से निपटने के लिए बहुस्तरीय, दीर्घकालिक और सतत प्रयास आवश्यक हैं। मुझे विश्वास है कि यह विशेषांक संस्थान के वर्तमान अनुसंधान एवं विकास कार्यों, नवप्रवृत्तियों और लवणता प्रबंधन की चुनौतियों पर पाठकों को उपयोगी जानकारी प्रदान करेगा। हम अपने पाठकों से सुझाव और प्रतिक्रियाओं का स्वागत करते हैं, ताकि आगामी अंकों की गुणवत्ता और बेहतर बनाई जा सके।

**(अरविंद कुमार राय)**
अतिथि संपादक
भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान

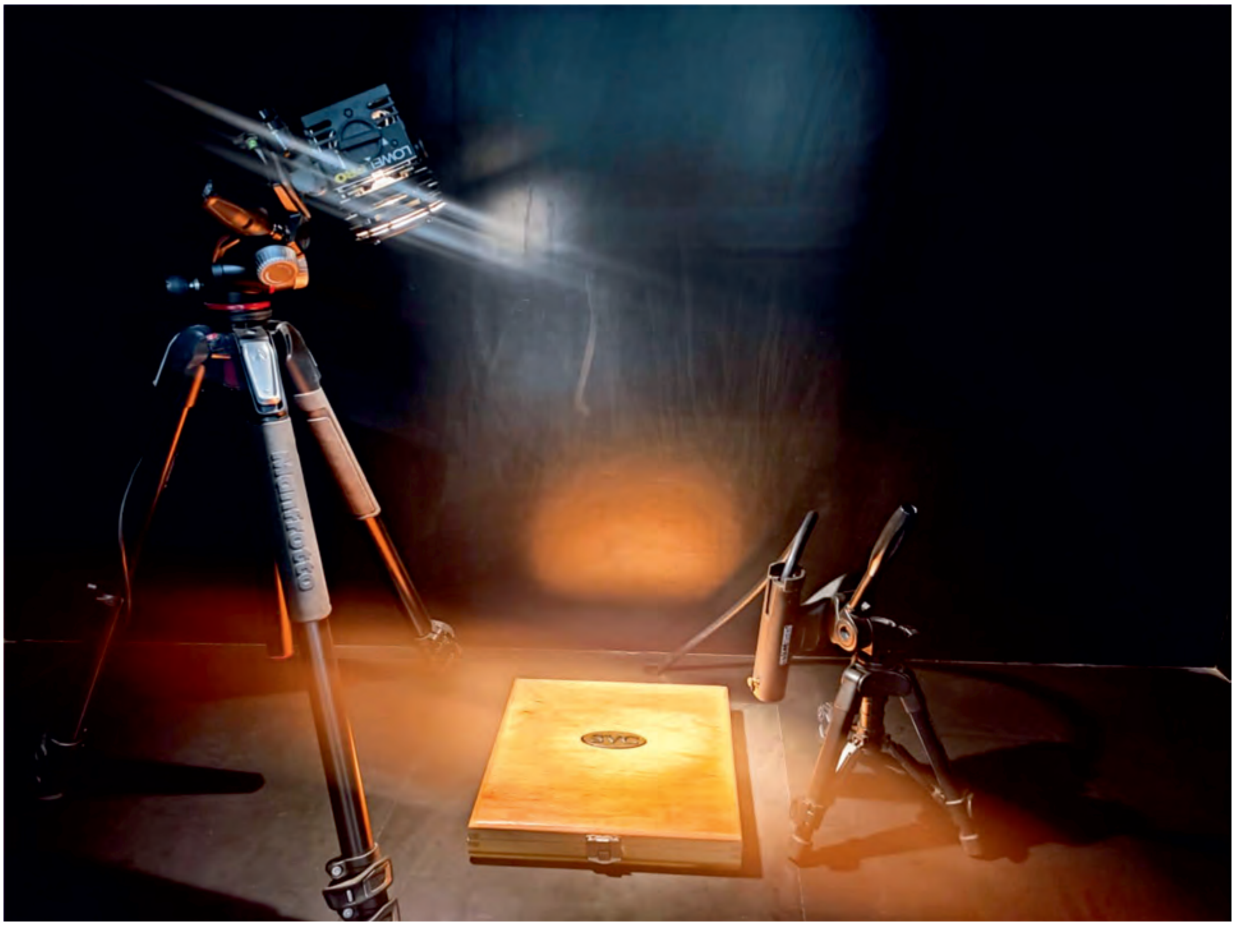

# लवणीय मृदा का डिजिटल मानचित्रण और मूल्यांकन

**अमरेश चौधरी**[1], **संदीप कुमार**[2], **भास्कर नरजरी**[1], **गजेन्द्र यादव**[1] और **ए.के. राय**[1]

"मृदा की लवणता एक ऐसी स्थिति है, जिसमें मृदा में घुलनशील लवणों (जैसे-सोडियम, क्लोराइड, सल्फेट) की मात्रा अत्यधिक बढ़ जाती है। यह समस्या दुनियाभर में मृदा के क्षरण का एक प्रमुख कारण है। जब मृदा में नमक की मात्रा जरूरत से ज्यादा हो जाती है, तो पौधों की जड़ों से जल और पोषक तत्वों का अवशोषण बाधित होता है। इससे फसलों की वृद्धि रुक जाती है और उत्पादन में कमी आती है। यह समस्या विशेष रूप से उन क्षेत्रों में गंभीर होती है, जहां अत्यधिक सिंचाई, जल निकासी की खराब व्यवस्था या समुद्री जल का प्रभाव होता है। जलवायु परिवर्तन, सूखा और भूजल का अधिक दोहन इस समस्या को और बढ़ा रहे हैं। खाद्य एवं कृषि संगठन, संयुक्त राष्ट्र (2024) की रिपोर्ट के अनुसार, वैश्विक स्तर पर लगभग 1381 मिलियन हैक्टर भूमि लवण प्रभावित है, जो कुल भूमि क्षेत्र का लगभग 11 प्रतिशत है। भारत में भी कई राज्य जैसे-गुजरात, हरियाणा, पंजाब, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, ओडिशा और आंध्र प्रदेश इस समस्या से जूझ रहे हैं। मृदा में लवणता की समस्या के समाधान हेतु डिजिटल तकनीकों जैसे-डिजिटल मृदा मानचित्रण, स्पेक्ट्रोस्कोपी, मशीन लर्निंग और रिमोट सेंसिंग ने नई दिशा दी है। ये तकनीकें तेज, सटीक और किफायती हैं। इनका उपयोग करके किसान, वैज्ञानिक और नीति निर्माता बेहतर निर्णय ले सकते हैं। इससे कृषि उत्पादन, भूमि उपयोग और प्राकृतिक संसाधनों का टिकाऊ प्रबंधन संभव हो सकेगा।"

आधुनिक तकनीकें जैसे रिमोट सेंसिंग (उपग्रह चित्रण), जियोग्राफिक इन्फॉर्मेशन सिस्टम और मशीन लर्निंग अब मृदा की लवणता का तेज और सटीक मूल्यांकन करने में सक्षम हैं। ये तकनीकें बड़े क्षेत्रों का विश्लेषण करके डिजिटल मृदा मानचित्र तैयार करती हैं। इनमें मृदा की गुणवत्ता और प्रकार की जानकारी पिक्सल स्तर पर मिलती है। यह कृषि योजना, भूमि प्रबंधन और जल संसाधन प्रबंधन के लिए बहुत उपयोगी है।

[1]भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा); [2]भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग योजना ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र, जोरहाट

## लवण प्रभावित मृदा की पहचान और प्रकार

लवण प्रभावित मृदा मुख्यतः दो प्रकार की होती है:

- **लवणीय मृदा:** इन मृदा में घुलनशील लवण जैसे सोडियम के क्लोराइड और सल्फेट की मात्रा अधिक होती है। इनका पी-एच मान सामान्यतः 8.5 से कम होता है, लेकिन विद्युत चालकता (ईसी) 4 dS/m से अधिक होती है।
- **क्षारीय मृदा:** इनमें सोडियम की मात्रा अत्यधिक होती है, जिससे मृदा की संरचना प्रभावित हो जाती है और मृदा की जलधारण क्षमता कम हो जाती है। इनका पी-एच मान 8.5 से अधिक होता है, लेकिन ईसी 4 dS/m से कम हो सकता है।

इनकी पहचान पारंपरिक रूप से मृदा के नमूने लेकर प्रयोगशाला में विश्लेषण कर की जाती है। इसमें ईसी, पी-एच मान और सोडियम अवशोषण अनुपात जैसे गुणकों को मापा जाता है। हालांकि, ये विधियां समय एवं श्रम प्रधान होती हैं।

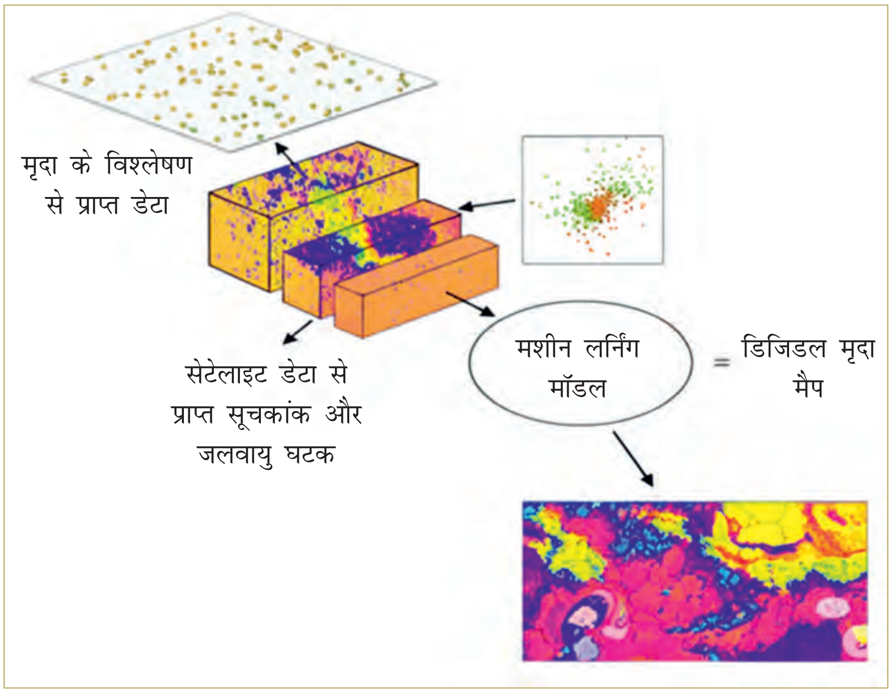


डिजिटल मृदा मानचित्रण तकनीक का प्रवाह

### दूरसंवेदी तकनीक से मृदा की लवणता की पहचान

रिमोट सेंसिंग तकनीक में उपग्रहों या ड्रोन के माध्यम से जमीन की सतह की छवियां ली जाती हैं। इनसे प्राप्त डेटा में कुछ विशेष संकेतक हैं जैसे:

- **नॉर्मलाइज्ड डिफरेंस वेजिटेशन इंडेक्स:** यह सूचकांक पौधों की हरियाली को दर्शाता है। अधिक लवणता वाले क्षेत्रों में एनडीवीआई का मान कम होता है। पौधों की वृद्धि बाधित होती है।
- **एन्हांस्ड वेजिटेशन इंडेक्स:** यह एक परिष्कृत सूचकांक है, जो घने वनस्पति क्षेत्रों में भी बेहतर परिणाम देता है।
- **कैनोपी रेस्पॉन्सिव सैलिनिटी इंडेक्स:** ये सूचकांक विशेष रूप से मृदा में लवणता से प्रभावित वनस्पति की पहचान के लिए विकसित किए गए हैं।

इन संकेतकों के माध्यम से वैज्ञानिक यह पता लगा सकते हैं कि कहां-कहां मृदा

## मशीन लर्निंग आधारित पूर्वानुमान

मशीन लर्निंग एल्गोरिदम मृदा की लवणता का पूर्वानुमान लगाने के लिए अब पारंपरिक भू-आंकिक विधियों की तुलना में अधिक सटीक एवं प्रभावी सिद्ध हो रहे हैं। इसमें प्रमुख एल्गोरिदम में शामिल हैं:

- **रैंडम फॉरेस्ट:** यह वृक्षों पर आधारित विधि है, जो बड़ी संख्या में पर्यावरणीय सूचकों को एक साथ विश्लेषित कर सकती है।
- **सपोर्ट वेक्टर मशीन:** यह वर्गीकरण और पूर्वानुमान के लिए प्रभावी तकनीक है।
- **न्यूरल नेटवर्क्स:** ये एल्गोरिदम जटिल गैर-रेखीय संबंधों को पहचानने में सक्षम होते हैं।

इन तकनीकों का उपयोग उपग्रह चित्रों, जलवायु डेटा, स्थलाकृति और पूर्ववर्ती मृदा नमूनों के साथ किया जाता है। इससे लवणता का व्यापक और उच्च-रिजॉल्यूशन मानचित्रण संभव होता है।

पंजाब के पटियाला में सीएसएसआरआई के वैज्ञानिक क्षारीयता संबंधी समस्याओं का निरीक्षण करते हुए

में लवणता अधिक है और उसका फसलों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है।

**डिजिटल मृदा मानचित्रण**

इस डिजिटल तकनीक की सहायता से मृदा के गुणों का अनुमान लगाया जाता है। इसमें मॉडल का उपयोग होता है:

S = f (S, C, O, R, P, A, N,+ε

जहां:

- S = मृदा के गुण
- **C** = जलवायु
- O = जैविक क्रियाएं
- R = स्थलाकृति
- P = मूल चट्टान
- **A** = समय

लवणीय मृदा

## ड्रोन का उपयोग

ड्रोन अब स्थानीय स्तर पर मृदा का अत्यधिक विस्तृत और वास्तविक डेटा देने में सक्षम हो गए हैं। ये उपकरण:

- जमीन की सतह के उच्च-रिजॉल्यूशन चित्र प्रदान करते हैं।
- कठिन और दूरस्थ क्षेत्रों में आसानी से काम करते हैं।
- मृदा के लवणता, कार्बन, नमी और बनावट जैसे गुणों का आंकलन करते हैं।

ड्रोन की सहायता से लवणता का स्थानीय मानचित्र जल्दी और कम लागत में तैयार किया जा सकता है।

- N = स्थानिक जानकारी,
- ε = अनियमित त्रुटियां

इस प्रणाली की मदद से एक सतत और पूर्वानुमानिक मानचित्र तैयार किया जा सकता है। इसमें पारंपरिक बहुभुज नक्शों की तुलना में कहीं अधिक सटीकता होती है।

**मृदा स्पेक्ट्रोस्कोपी: तेज और बिना नुकसान के विश्लेषण**

मृदा स्पेक्ट्रोस्कोपी एक तेज, किफायती और बिना किसी भौतिक संपर्क वाली तकनीक है, जो मृदा में मौजूद तत्वों की पहचान उनके प्रकाश परावर्तन के आधार पर करती है। इसमें:

- नियर-इन्फ्रारेड और मिड-इन्फ्रारेड तरंगदैर्ध्य का प्रयोग होता है।
- मृदा का किसी रसायन के प्रयोग के बिना विश्लेषण किया जाता है।

गुजरात में लवण प्रभावित मृदा के मानचित्रण हेतु मृदा सर्वेक्षण की प्रक्रिया

- इसमें एक साथ नमी, पी-एच, जैविक कार्बन और लवणता जैसे कई गुणों का विश्लेषण संभव है।

इस तकनीक को जीआईएस और मशीन लर्निंग के साथ जोड़कर क्षेत्रीय स्तर पर मृदा के गुणों की अधिक सटीक पहचान की जा सकती है।

**संस्थान की पहल**

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा देशभर में लवणता प्रभावित मृदा की पहचान और मानचित्रण के लिए विशेष परियोजनाएं शुरू की गई हैं। पहले चरण में पारंपरिक तकनीकों से बनाए गए नक्शों को अब मशीन लर्निंग, उपग्रह चित्रण और फील्ड डेटा से अपडेट किया जा रहा है। हाल ही के एक अध्ययन में लगभग 1.3 मिलियन हैक्टर तटीय भूमि को लवण प्रभावित पाया गया। राष्ट्रीय स्तर पर उच्च रिजॉल्यूशन डीएसएम तैयार कर भूमि सुधार और कृषि प्रबंधन को और प्रभावी बनाया जा रहा है।

**भावी परिदृश्य और चुनौतियां**

डिजिटल मृदा मानचित्रण और इससे जुड़ी तकनीकों का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल है, परंतु कई चुनौतियां भी सामने हैं:

- बड़े डेटा सेट्स को प्रोसेस करना
- बादल या वायुमंडलीय हस्तक्षेप से रिमोट सेंसिंग में बाधा
- विभिन्न डेटा स्रोतों को एकीकृत करने की तकनीकी जटिलताएं।

भविष्य में अधिक उन्नत सेंसर, मशीन लर्निंग मॉडल और भूमि उपयोग से संबंधित जानकारी के जुड़ाव से इन समस्याओं से निजात पायी जा सकेगी।

# जलवायु चुनौतियों के खिलाफ फसलों का सशक्तिकरण

**अनीता मान, सुजाता, पूनम, प्रीति, नोयोनिका, हरीश, अन्नु, कृशानु** और **नितीश रंजन प्रकाश**

"कृषि उत्पादकता पर सूखा, लवणता, अत्यधिक तापमान (गर्मी और शीत) और पोषक तत्वों के असंतुलन जैसे विभिन्न अजैविक तनावों का गंभीर प्रभाव पड़ता है। ये पर्यावरणीय तनाव पौधों की वृद्धि, विकास और उपज को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। इससे वैश्विक खाद्य सुरक्षा के सामने एक बड़ी चुनौती उत्पन्न होती है-विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन और निरंतर बढ़ती जनसंख्या के संदर्भ में। वहीं पारंपरिक प्रजनन विधियों का उपयोग दशकों से तनाव-सहिष्णु फसल किस्मों के विकास हेतु किया जा रहा है, लेकिन ये विधियां समय-गहन और श्रमसाध्य होती हैं। इसके साथ ही इनकी प्रभावशीलता प्राकृतिक आनुवंशिक विविधता की उपलब्धता तक सीमित रहती है। पिछले कुछ वर्षों में, जीनोम संपादन प्रौद्योगिकियां सटीक और लक्षित आनुवंशिक संशोधनों के लिए महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में उभरी हैं। ये अजैविक तनाव की स्थिति में फसलों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए नए मार्ग प्रदान करती हैं। पारंपरिक प्रजनन या ट्रांसजेनिक विधियों के विपरीत, जीनोम संपादन में किसी अन्य डीएनए के समावेश की आवश्यकता नहीं होती। इसके माध्यम से सीधे इन विशिष्ट जीनों या नियामक तत्वों का हेरफेर किया जा सकता है, जो पौधों की तनाव प्रतिक्रिया में भूमिका निभाते हैं। यह सटीकता अनपेक्षित प्रभावों को कम करती है और उन्नत फसल किस्मों के विकास को तेज करती है।"

जीनोम संपादन तकनीक में, CRISPR-Cas 9 अग्रणी उपकरण के रूप में उभरा है। इसके अतिरिक्त TALENs (ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर-लाइक इफेक्टर न्यूक्लिजेस) और ZFNs (जिंक फिंगर न्यूक्लिजेस) जैसी प्रणालियां भी प्रभावी रूप में उपयोग में लाई जा रही हैं। इन उन्नत तकनीकों का सफल प्रयोग धान, गेहूं, मक्का, टमाटर और सोयाबीन सहित विभिन्न फसलों की एक विस्तृत श्रृंखला में किया जा चुका है।

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल

इन तकनीकों के माध्यम से नकारात्मक नियामकों को नियंत्रित करके, तनाव-उत्तरदायी जीन की अभिव्यक्ति को बढ़ाने तथा बेहतर तनाव सहिष्णुता के लिए लाभकारी जीनों को सम्मिलित करने के जैव प्रयास किये जा रहे हैं। पौधों के लक्षणों पर अधिक नियंत्रण प्रदान करने के साथ ही जीनोम संपादन मल्टीप्लेक्स जीन संपादन की संभावना भी प्रदान करता है। इसमें एक साथ कई जीनों का संशोधन संभव है।

जीनोम संपादन न केवल अजैविक तनाव सहिष्णुता को बढ़ाने में सहायक है, बल्कि सतत कृषि में योगदान देने, रासायनिक आदानों पर निर्भरता को कम करने और पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति फसलों को अनुकूलन बनाने में योगदान देता है। हाल के अध्ययनों ने सूखा, लवणता, गर्मी और ठंड जैसे विभिन्न अजैविक तनावों के प्रति फसल की सहनशीलता को बढ़ाने में CRISPR-Cas9 की क्षमता को उजागर किया है। इसके अलावा, जीनोम संपादन तकनीकों में हाल की प्रगतियां जैसे बेस संपादन और प्राइम संपादन, फसल सुधार के लिए और भी अधिक सटीक और कुशल तकनीक प्रदान करती हैं।

**जीनोम संपादन प्रौद्योगिकियों में उन्नति**

जीनोम संपादन में प्रगति ने कृषि जैव प्रौद्योगिकी को नई दिशा दी है, विशेष रूप से सूखा, लवणता और अत्यधिक तापमान जैसे अजैविक तनावों से फसलों की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में। प्रारंभिक विधियां, जैसे विकिरण या रसायनों का उपयोग करके यादृच्छिक उत्परिवर्तन, विविधता उत्पन्न करने में सहायक रही, परंतु इनमें सटीकता का अभाव था।

वर्ष 1980 के दशक में ट्रांसजेनिक प्रौद्योगिकियों की शुरुआत ने विशिष्ट जीनों के स्थानांतरण को सक्षम किया। इससे बीटी कपास जैसी आनुवंशिक रूप से संशोधित फसलें उत्पन्न हुईं, हालांकि सार्वजनिक क्षमता और नियामक प्रतिबंधों ने इनके व्यापक अंगीकरण को सीमित कर दिया।

एक प्रमुख बदलाव पहली पीढ़ी के जीनोम संपादन तकनीकों-ZFNs और TALENs से आया। इन तकनीकों ने लक्षित डीएनए संशोधन संभव बनाएं, लेकिन इनकी जटिलता एवं उच्च लागत प्रमुख चुनौतियां रहीं। वास्तविक सफलता वर्ष 2012 में CRISPR-Cas 9 के विकास से मिली। आरएनए द्वारा निर्देशित एक सरल, सटीक और स्केलेबल समाधान प्रस्तुत किया। इसके पश्चात Cas 12a, बेस एडिटर्स और प्राइम एडिटिंग जैसे नवीन उपकरणों ने डीएनए को काटने, या यहां तक कि आरएनए को संपादित किए बिना फाइन-ट्यून किए गए जीन परिवर्तनों को शामिल करने के लिए क्षमताओं का विस्तार किया है।

हाल के नवाचारों में एपिजेनोम संपादन, आरएनए संपादन, सिंथेटिक जीव विज्ञान

एकीकरण और मल्टीप्लेक्स संपादन शामिल हैं। ये अत्याधुनिक उपकरण जटिल विशेषता के सुधार के लिए कई जीनों के एक साथ संशोधन को सक्षम करते हैं। इसके साथ में, ये उपकरण सटीक कृषि की ओर एक बदलाव को चिन्हित करते हैं। इसमें जलवायु चुनौतियों का सामना करने में फसल के प्रदर्शन और वैश्विक खाद्य सुरक्षा को स्थायी रूप से बढ़ावा देने की क्षमता है।

जीनोम संपादन के लिए धान के बीज का उत्तक संवर्धन के लिए संरोपण

**जीनोम-संपादन एंजाइमों के प्रकार**

जीनोम-संपादन एंजाइमों को दो मुख्य प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

- स्थान-विशिष्ट पुनर्संयोजन (एसएसआर)
- स्थान-विशिष्ट न्यूक्लियस (एसएस एनएस)

**स्थान-विशिष्ट न्यूक्लियस के प्रकार**

स्थान-विशिष्ट न्यूक्लियस चार प्रकार के होते हैं-1-मेगान्यूक्लियस 2-जिंक फिंगर न्यूक्लियस (ZFNs) 3) ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर जैसे प्रभावक न्यूक्लियस (TALENs) 4: CRISPR-Cas 9।

**मेगान्यूक्लियस**

यह एंडोन्यूक्लियस का एक दुर्लभ वर्ग है। यह 14 से 30 या उससे भी अधिक बेस युग्म लंबे डीएनए अनुक्रमों को पहचानकर इन्हें क्लीव करता है। इनकी उच्च विशिष्टता इन्हें जीन संपादन में एक सशक्त उपकरण बनाती है। खमीर और बैक्टीरियोफेज जैसे माइक्रोबियल स्रोतों से उत्पन्न, मेगान्यूक्लियस स्वाभाविक रूप से इंट्रॉन और इंटिन गतिशीलता में संलग्न रहते हैं। जीन संपादन में, मेगान्यूक्लियस विशिष्ट जीनोमिक स्थानों पर डबल-स्ट्रैंड ब्रेक (डीएसबी) को उत्पन्न करते हैं, जिनकी मरम्मत कोशिका के तंत्र (एनएचइजे या एचडीआर) द्वारा की जाती है। इससे जीन व्यवधान या सटीक अनुक्रम सम्मिलन होता है। मेगान्यूक्लियस की असाधारण लक्ष्य विशिष्टता ऑफ-टारगेट प्रभावों को कम करती है, लेकिन प्रत्येक लक्ष्य के लिए नए एंजाइम पुनः तैयार करना जटिल और समय साध्य वाला है।

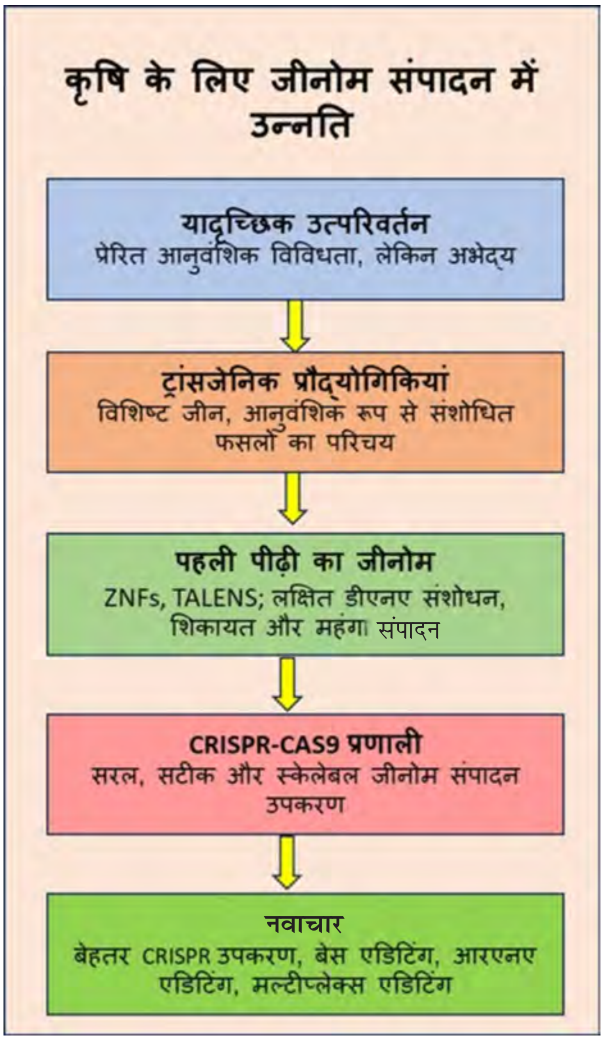


जीनोम संपादन में प्रगति

**जिंक फिंगर न्यूक्लियस**

यह एक उन्नत अभियांत्रिकी जीन-संपादन तकनीक है। इसमें FokI एंडोन्यूक्लियस के कटिंग डोमेन के साथ डीएनए-बाइंडिंग जिंक फिंगर प्रोटीन को जोड़ते हैं। प्रत्येक जिंक फिंगर डोमेन एक विशिष्ट तीन-बेस युग्म वाले डीएनए अनुक्रम को पहचानता है और कई डोमेन लंबे अनुक्रमों को लक्षित कर सकते हैं।

जब दो ZFNs कॉन्स्ट्रक्ट लक्ष्य स्थल पर डीएनए स्ट्रैंड के विपरीत जुड़ते हैं, तो FokI डोमेन डिमराइज हो जाते हैं। इससे डबल-स्ट्रैंड ब्रेक (डीएसबी) बनता है। यह कोशिका की मरम्मत प्रणालियों को सक्रिय करता है। इससे जीन व्यवधान या सटीक अनुक्रम संशोधन संभव हो जाता है।

ZFNs, पहले प्रोग्राम करने योग्य न्यूक्लियस में से एक है। इनका उपयोग विभिन्न फसलों में सफलतापूर्वक किया गया है जैसे-मक्का में शाकनाशी सहिष्णुता और सोयाबीन में तेल की गुणवत्ता में सुधार के लिए। इनकी उच्च विशिष्टता सफलतापूर्वक जिंक फिंगर डामेन के माध्यम से प्राप्त होती है, जो इन्हें शक्तिशाली बनाती है। हालांकि, नए लक्ष्यों के लिए प्रभावी जेडएफएन विकसित करना श्रम-गहन है और इसके लिए उन्नत प्रोटीन इंजीनियरिंग विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है।

**ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर जैसे प्रभावकारी न्यूक्लियस**

ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर-लाइफ इफिक्टर न्यूक्लियस (TALENs) दो मुख्य भागों से बनी योग्य जीन-संपादन तकनीक है: ट्रांसक्रिप्शन एक्टिवेटर-जैसे प्रभावकों (TALNEs) से प्राप्त एक डीएनए-बाइंडिंग डोमेन और एक FokI न्यूक्लियस डोमेन जो डीएनए को काटता है। प्रत्येक टेल रिपीट एक विशेष न्यूक्लियोटाइड से जुड़ता है। इससे शोधकर्ताओं को TALENs डिजाइन करने की सुविधा मिलती है, जो उच्च परिशुद्धता के साथ लगभग किसी भी डीएनए अनुक्रम को लक्षित कर सके।

कार्य करने के लिए, दो TALENs लक्ष्य स्थल के फ्लैंकिंग डीएनए की विपरीत धाराओं से जुड़ते हैं। इसके बाद FokI डोमेन डाइमर बताकर उस स्थान पर डबल-स्ट्रैंड ब्रेक

सारणी: पौधों में स्थान-विशिष्ट पुनर्संयोजन और स्थान-विशिष्ट न्यूक्लियस की तुलना

| सुविधाएं | स्थान-विशिष्ट पुनर्संयोजन | स्थान-विशिष्ट न्यूक्लियस |
|---|---|---|
| परिभाषा | एंजाइम जो विशिष्ट डीएनए अनुक्रमों के बीच पुनर्संयोजन को उत्प्रेरित करते हैं (बिना डीएनए कट के) | एंजाइम जो विशिष्ट डीएनए अनुक्रमों पर डबल-स्ट्रैंड उत्पन्न करते हैं |
| क्रियाविधि | डीएनए पुनर्व्यवस्था: छांटना, एकीकरण, उलटना | मरम्मत के बाद डीएनए दरार (NHEJ या HDR) |
| डीएनए कट | नहीं, ब्रेक के बिना पुनर्संयोजन | हां, डबल-स्ट्रैंड ब्रेक (DSB) को प्रेरित करता है |
| संपादन क्रिया | प्रत्यक्ष पुनर्संयोजन | डीएनए मरम्मत की आवश्यकता है (NHEJ या HDR) |
| लक्ष्य स्थान | क्रे/लॉक्सपी, एफएलपी/एफआरटी, आर/आरएस | ZFNs, TALENs, CRISPR-Cas9, CRISPR-Cas12a |
| सुनिश्चितता स्थान | केवल विशिष्ट पुनर्संयोजन स्थान | कस्टम-डिजाइन किए गए डीएनए अनुक्रम (कोई भी अनुक्रम है) |
| यथार्थता | बहुत अधिक (केवल परिभाषित स्थानों को पुन: संयोजित करता है) | उच्च, लेकिन ऑफ-टारगेट प्रभाव हो सकते हैं |
| पौधों में उपयोग | मार्कर जीन हटाने, ट्रांसजीन स्टैकिंग, प्रतिवर्ती जीन अभिव्यक्ति | जीन नॉकआउट, जीन प्रतिस्थापन, आधार संपादन, विशेषता सुधार |
| पौधों में वितरण | पुन: संयोजक जीन को पेश करने के लिए परिवर्तन विधियों (जैसे, एग्रोबैक्टीरियम या कण बमबारी) की आवश्यकता होती है | प्लास्मिड, एग्रोबैक्टीरियम, आरएनपी या वायरस-आधारित वैक्टर के माध्यम से वितरित; कुछ संपादन डीएनए-मुक्त (ट्रांसजीन-मुक्त) हो सकते हैं |
| प्रतिरोधक क्षमता | उच्च (यदि स्थल पहले से सम्मिलित हैं) | चर (डिजाइन, वितरण और मरम्मत मार्ग पर निर्भर करता है) |
| उपयोग | जीन कैसेट छांटना, सशर्त अभिव्यक्ति, ट्रांसजीन स्थिरीकरण | विशेषता संशोधन, जीनोम संपादन, लक्षित उत्परिवर्तन |

(DSB) सेल इस ब्रेक को गैर-होमोलॉगस एंड जॉइनिंग (एनएचईजे) के माध्यम से मरम्मत करता है, जो जीन को बाधित कर सकता है, या होमोलॉजी-डायरेक्टेड रिपेयर (एचडीआर), जो सटीक आनुवंशिक परिवर्तनों की अनुमति देता है।

TALENs अपनी सटीकता और बहुमुखी प्रतिभा के लिए प्रसिद्ध है, पहले की तकनीकों की तुलना में कम ऑफ-टारगेट प्रभाव उत्पन्न करते हैं। तथापि, जीन संपादन का टैलेंस तंत्र महंगा, श्रम गहन और समय लेने वाला है।

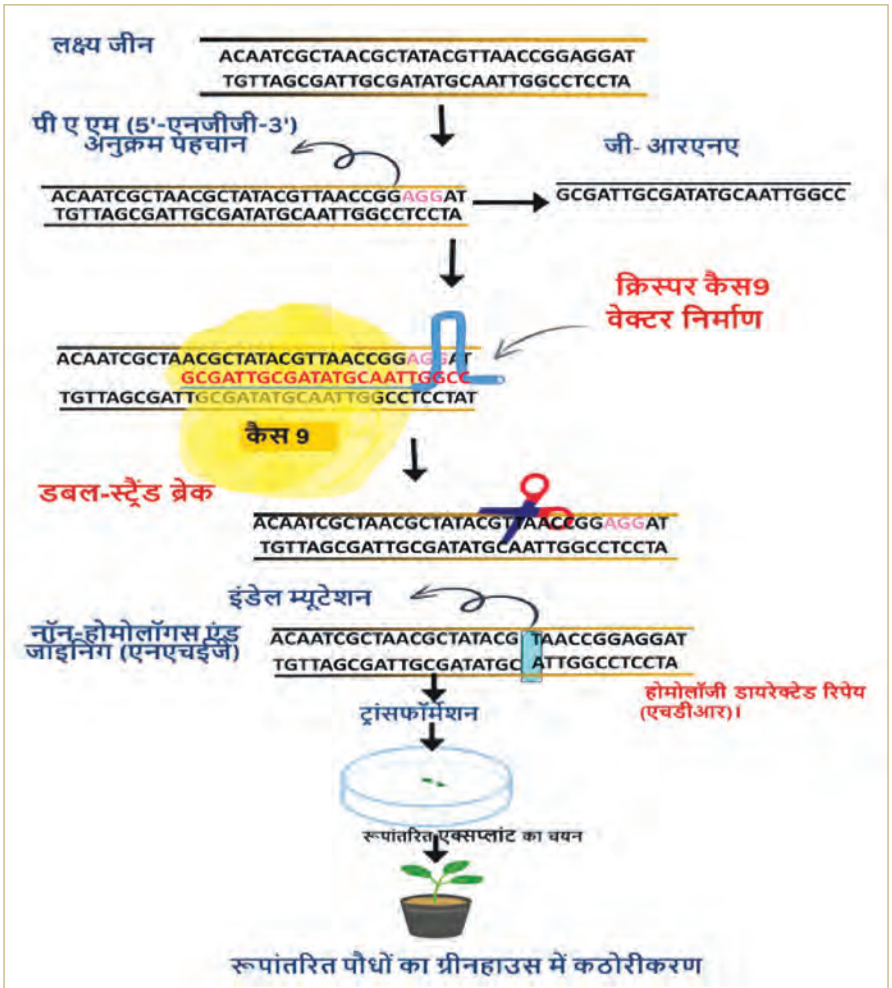


जीनोम संपादन के माध्यम से फसल सुधार के लिए तंत्र का विस्तृत विवरण

**CRISPR-Cas 9**

यह एक जीन-संपादन तकनीक है, जो वैज्ञानिकों को जीवित जीवों के डीएनए में सटीक लक्षित परिवर्तन करने की सुविधा प्रदान करती है। CRISPR शब्द क्लस्टर्ड रेगुलरली इंटरस्पेस्ड शॉर्ट पैलिंड्रोमिक रिपीट्स के लिए है, जो बैक्टीरिया और आर्किया के जीनोम में पाए जाने वाले विशिष्ट अनुक्रम हैं। ये अनुक्रम एक संक्रमण के दौरान वायरल डीएनए की पहचान करने और काटने के लिए सूक्ष्मजीवों द्वारा उपयोग किए जाने वाले प्राकृतिक रक्षा तंत्र का हिस्सा हैं।

Cas 9 प्रोटीन (CRISPR से जुड़े प्रोटीन 9 के लिए छोटा) एक एंडोन्यूक्लिज एंजाइम है, जो आणविक कैंची के रूप में कार्य करता है। यह एक विशेष गाइड आरएनए (जीआरएनए) की मदद से लक्षित डीएनए अनुक्रम की पहचान करता है और वहां डबल-स्ट्रेड ब्रेक उत्पन्न करता है। इसके बाद कोशिका की मरम्मत प्रणाली सक्रिय होती है, आमतौर पर गैर-समरूप अंत में शामिल होने (एनएचईजे) या होमोलॉजी-डायरेक्टेड रिपेयर (एचडीआर)।

यह प्रोग्राम करने योग्य प्रणाली जीन के सटीक संपादन को सक्षम बनाती है। CRISPR-Cas 9 का व्यापक उपयोग अनुसंधान, चिकित्सा और कृषि जैव प्रौद्योगिकी में किया जा रहा है। जिंक फिंगर न्यूक्लियस (ZFNs) और TALENs जैसे पहले के उपकरणों की तुलना में इसकी दक्षता, सादगी और बहुमुखी प्रतिभा के कारण, कई जेनेटिक इंजीनियरिंग कार्यों के लिए पसंद की विधि बन गया है। इस खोज के महत्व को वर्ष 2020 में पहचाना गया जब डौडना और चारपेंटियर को रसायन विज्ञान

में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया, जो जेनेटिक इंजीनियरिंग के इतिहास में एक मील का पत्थर है।

**पौधों में तंत्र**

CRISPR-Cas 9 अपने पशु समकक्ष के समान एक प्रणाली है, जो आरएनए मार्गदर्शन का उपयोग करके पौधों में सटीक जीनोम संपादन को संभव बनाती है। गाइड आरएनए पौधे के जीनोम में एक विशिष्ट लक्ष्य स्थल से मेल खाती है, Cas 9 प्रोटीन को निर्देशित करता है, स्ट्रेप्टोकोकस पायोजेनेस से एक एंडोन्यूक्लिज, इच्छित स्थान पर एक बार बाध्य होने के बाद, Cas9 लक्षित स्थल पर एक डबल-स्ट्रैंड ब्रेक (डीएसबी) को प्रेरित करता है।

पादप कोशिकाएं अपनी डीएनए मरम्मत मशीनरी को सक्रिय करती हैं, गैर-समरूप अंत में शामिल होने (एनएचईजे) या होमोलॉजी-निर्देशित मरम्मत (एचडीआर) को नियोजित करती हैं। एनएचइजे छोटे सम्मिलन या विलोपन (इंडल्स) का परिचय देता है। संभावित रूप से जीन फंक्शन को बाधित करता है, जबकि एचडीआर विशिष्ट डीएनए अनुक्रमों को पेश कर सकता है यदि एक मरम्मत टेम्पलेट प्रदान किया जाए। इससे अधिक सटीक जीन सम्मिलन या प्रतिस्थापन सक्षम होता है।

## पौधों में प्रमुख अनुप्रयोग

**फसल उपज वृद्धि:** CRISPR-Cas9 अनाज के आकार को सीमित करने और फलों के आकार में सुधार करने वाले जीन को अक्षम करके फसल की उपज बढ़ाता है।

**रोग प्रतिरोध:** CRISPR-Cas9 संवेदनशीलता जीन को संपादित करके फसलों में रोग प्रतिरोध प्रदान करता है। उदाहरण स्वरूप यह तकनीक खस्ता फफूंदी और कसावा ब्राउन स्ट्रीक वायरस जैसे रोगों के विरूद्ध प्रतिरोधिता प्रदान करती है।

**तनाव सहिष्णुता और पोषण:** CRISPR-Cas9 फसलों में अजैविक तनाव सहिष्णुता को बढ़ाने में सहायक है। इसके साथ ही तनाव-प्रतिक्रिया नियामकों और चयापचय मार्गों को संपादित कर फसलों की गुणवत्ता सामग्री में सुधार भी करता है।

## पौधों में CRISPR अनुप्रयोगों की चुनौतियां

- **वितरण क्षमता:** पशु कोशिकाओं के विपरीत, पौधों की कोशिकाओं में कठोर कोशिका भित्ति होती हैं। इससे जीन वितरण अधिक कठिन हो जाता है।
- **नियामक बाधाएं:** कई देशों में जीनोम-संपादित फसलों के संबंध में जटिल नियम हैं। कुछ देश जीएमओ के समान CRISPR-संशोधित फसलों को विनियमित करते हैं।
- **ऑफ-टारगेट प्रभाव:** हालांकि दुर्लभ, अनपेक्षित उत्परिवर्तन एक चिंता का विषय है, खासकर पॉलीप्लॉइड प्रजातियों में।

पौधों की कोशिकाओं में CRISPR-Cas 9 घटकों की डिलीवरी एक विशेष चुनौती है। एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमेफेशियन्स मध्यस्थता परिवर्तन आमतौर पर डाइकोटाइलडोनस पौधों में उपयोग किया जाता है, जबकि बायोलिस्टिक डिलीवरी या जीन गन विधि का उपयोग मोनोकॉट्स और पुनर्गणना प्रजातियों में किया जाता है। वितरण विधि का चयन पौधे की प्रजातियों, लक्षित ऊतक और वांछित परिणाम पर निर्भर करता है। इस प्रकार CRISPR-Cas 9 पौधों की आनुवंशिक अभियांत्रिकी, पादप जीव विज्ञान और फसल सुधार में एक शक्तिशाली और सटीक उपकरण हो रहा है।

**भावी परिदृश्य**

जीनोम संपादन में प्रगति, जैसे CRISPR-Cas 12a, बेस एडिटिंग और प्राइम एडिटिंग, प्लांट जीनोम इंजीनियरिंग में सटीकता और दक्षता में काफी सुधार करती है। 12a के विपरीत, ये नए उपकरण डीएसबी के बिना सटीक जीन संशोधनों को सक्षम करते हैं। इससे ऑफ-टारगेट प्रभाव और अनपेक्षित उत्परिवर्तन का जोखिम कम हो जाता है।

CRISPR-Cas 12a में एक अद्वितीय PAM मान्यता और कंपित कटौती प्रदान करता है, जो इसे दुर्गम जीनोमिक क्षेत्रों और उच्च विशिष्टता के साथ मल्टीप्लेक्स संपादन को लक्षित करने के लिए उपयुक्त बनाती है।

बेस एडिटिंग सीधे एक डीएनए बेस को दूसरे में परिवर्तित करती है, सिंगल-न्यूक्लियोटाइड बहुरूपताओं को सुधारा जा सकता है या सूक्ष्म विविधताओं को पेश करता है।

प्राइम एडिटिंग, जिसे अक्सर 'सर्च-एंड-रिप्लेस' टूल कहा जाता है। एक रिवर्स ट्रांसक्रिपटेस के साथ एक उत्प्रेरक रूप से निष्क्रीय cas9 को जोड़ती है, यह विधि बिना डोनर टेम्प्लेट या DSB के बिना सटीक सम्मिलन, विलोपन और प्रतिस्थापन संभव बनाती है।

इन तकनीकों को उच्च-थ्रूपुट फेनोटाइपिंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और एपिजेनोम संपादन के साथ एकीकृत करने से जलवायु-स्मार्ट और संसाधन-कुशल फसलें विकसित की जा सकती हैं। इससे प्रजनकों को नाइट्रोजन-उपयोग दक्षता, बेहतर प्रकाश संश्लेषण और अजैविक तनाव सहिष्णुता जैसे लक्षणों को लक्षित करने में मदद मिलेगी। इसके साथ ही वितरण प्रणालियों में नवाचार, जैसे नैनोकैरियर या डीएनए मुक्त जीनोम संपादन, आनुवंशिक रूप से संशोधित जीवों (जीएमओ) से संबंधित नियामक चुनौतियों और सार्वजनिक चिंताओं का समाधान कर सकते हैं।

CRISPR-Cas 9 एक सटीक, लागत-प्रभावी और अनुकूलनीय जीनोम संपादन मंच प्रदान करके पौधों की आनुवंशिकी में महत्वपूर्ण बदलाव किया है। विभिन्न पौधों की प्रजातियों में इसके सफल कार्यान्वयन ने वैश्विक कृषि चुनौतियों का समाधान करने के लिए नए अवसर उत्पन्न किए हैं।

जलवायु परिवर्तन, मृदा जैसे घटक क्षरण, सीमित कृषि योग्य भूमि और जनसंख्या वृद्धि के रूप में प्रस्तुत करते हैं। ऐसे में जीनोम संपादन उपकरण फसल लचीलापन, उपज और पोषण की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए एक रणनीतिक समाधान प्रदान करते हैं।

अगली पीढ़ी के जीन संपादन उपकरण जैसे Cas 12a, बेस एडिटर और प्राइम एडिटर अधिक परिष्कृत, सुरक्षित और अनुमानित जीनोम संशोधन उपलब्ध करवाते हैं। ये टिकाऊ और अनुकूल फसलें विकसित करने का मार्ग प्रशस्त करते हैं जो कृषि में रासायनिक निर्भरता को कम करते हैं और बदलती जलवायु में खाद्य सुरक्षा में सुधार करते हैं। हालांकि, इन शक्तिशाली उपकरणों के जिम्मेदार और न्याय संगत उपयोग के लिए अंत:विषय अनुसंधान, मजबूत जैव सुरक्षा ढांचे और पारदर्शी सार्वजनिक जुड़ाव की आवश्यकता है। ■

# अश्वगंधा उत्पादन में अपशिष्ट ऊन तकनीक

**अनिता मीना, एम.के. जाटव, आर.पी. मीना** और **मनप्रीत कौर**

"अश्वगंधा *(विथानिया सोमनीफेरा)* एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है। यह अपने तनाव-निवारक, प्रतिरक्षावर्धक और न्यूरोलॉजिकल लाभों के कारण वैश्विक स्तर पर उच्च मांग प्राप्त कर रहा है। यह फसल शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। यह फसल सूखा-सहिष्णु होती है और सीमित संसाधनों में भी अच्छी तरह पनप सकती है। वर्तमान में औषधि एवं हर्बल उद्योगों में इसकी बढ़ती मांग, वैज्ञानिक खेती तकनीकों की आवश्यकता को दर्शाती है। इसमें जल-कुशल सिंचाई प्रणाली, मृदा स्वास्थ्य सुधार एवं उच्च उत्पादक किस्मों का विकास प्रमुख हैं। विथानोलाइड्स जैसे सक्रिय यौगिकों के मानकीकरण और टिकाऊ उत्पादन हेतु जैव प्रौद्योगिकी का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही, अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी का उपयोग एक नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह तकनीक मृदा की जलधारण क्षमता, पोषक तत्व उपलब्धता और पौध वृद्धि में सुधार कर अश्वगंधा की खेती को और अधिक टिकाऊ एवं लाभकारी बनाती है। यह तकनीक अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देती है और शुष्क क्षेत्रों में किसानों की आय तथा पर्यावरणीय संतुलन को सशक्त करती है।"

शुष्क क्षेत्रों में जल की कमी और मृदा की निम्न गुणवत्ता के कारण कृषि एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। ऐसे में जिन फसलों की कम जल में भी अच्छी उपज होती है, उनका महत्व और अधिक बढ़ जाता है। अश्वगंधा ऐसी ही एक औषधीय फसल है। यह एक कठोर झाड़ीदार पौधा है, जो उच्च तापमान, कम नमी और सीमित पोषक तत्वों के बीच भी जीवित रह सकता है। यही कारण है कि इसके प्रति किसानों की रुचि लगातार बढ़ रही है। हालांकि, उत्पादन को बढ़ाने और गुणवत्तापूर्ण जड़ों की प्राप्ति के लिए पारंपरिक खेती पद्धतियों से हटकर उन्नत कृषि तकनीकों को अपनाने की आवश्यकता है।

भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर-334006 (राजस्थान)

## लाभकारी अश्वगंधा

भारत की पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों में जड़ी-बूटियों का विशेष महत्व रहा है और इन औषधीय पौधों में अश्वगंधा का प्रमुख स्थान है। यह पौधा 'भारतीय जिनसेंग' के नाम से भी जाना जाता है और सदियों से तनाव मुक्ति, रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने तथा मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने जैसे अनेक चिकित्सीय लाभों के लिए प्रयोग में लाया जाता रहा है। वर्तमान समय में जब वैश्विक स्तर पर आयुर्वेदिक एवं हर्बल उत्पादों की मांग बढ़ रही है, तब अश्वगंधा की व्यावसायिक खेती न केवल किसानों के लिए एक लाभप्रद विकल्प बनकर उभरी है, बल्कि यह पारंपरिक चिकित्सा विज्ञान को पुनर्जीवित करने का एक अवसर भी प्रदान करती है। विशेषकर भारत के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों जैसे-राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात और आंध्र प्रदेश में अश्वगंधा का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। यहां इसकी सूखा सहिष्णु प्रकृति और न्यूनतम आदान आवश्यकता इसे एक आदर्श फसल बनाती है।

नवाचार की दिशा में अब वैज्ञानिक और किसान दोनों ही मिलकर विभिन्न तकनीकों पर कार्य कर रहे हैं। इन तकनीकों में जल-कुशल सिंचाई प्रणाली (जैसे ड्रिप और स्प्रिंक्लर), मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक पोषण, जैव कीटनाशकों का प्रयोग और रोग प्रतिरोधी किस्मों का विकास

प्रमुख हैं। इसके साथ ही एक अत्यंत नवाचारी पहल के रूप में अपशिष्ट ऊन (वूल वेस्ट) का उपयोग भी सामने आया है। यह तकनीक न केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण से प्रभावी है, बल्कि यह अश्वगंधा जैसी फसलों के लिए स्थायित्व और उत्पादकता में भी सहायक सिद्ध हो रही है।

अपशिष्ट ऊन में नाइट्रोजन, कार्बन, सल्फर और अन्य पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। ये धीरे-धीरे मृदा में समाहित होकर पौधों को पोषण प्रदान करते हैं। इसके अलावा, ऊन की रचना ऐसी होती है कि यह मृदा की नमी को बनाए रखने में सहायता करती है, जो शुष्क क्षेत्रों में एक अत्यंत आवश्यक गुण है। जब ऊन को मृदा में मिलाया जाता है, तो यह जलधारण क्षमता को बढ़ाता है, सूक्ष्मजीव गतिविधियों को प्रोत्साहित करता है और मृदा की संरचना को बेहतर बनाता है। परिणामस्वरूप अश्वगंधा की जड़ों का बेहतर विकास, उपज में वृद्धि और गुणवत्ता में सुधार आता है। इससे किसानों की आय में भी बढ़ोतरी होती है।

वर्तमान में कई अनुसंधान संस्थान और कृषि विज्ञान केंद्र इस तकनीक का प्रयोग कर इसके दीर्घकालिक प्रभावों का अध्ययन कर रहे हैं। प्रारंभिक परिणाम यह दर्शाते हैं कि अपशिष्ट ऊन का उपयोग पारंपरिक जैविक खादों के साथ मिलाकर करने से मृदा की उर्वराशक्ति लंबे समय तक बनी रहती है और पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी सुधार होता है। इसके साथ ही, इससे अपशिष्ट प्रबंधन को भी एक नई दिशा मिलती है। इससे पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा मिलता है। यह दृष्टिकोण अर्थव्यवस्था की अवधारणा के अनुरूप है, जहां एक उद्योग के अपशिष्ट को दूसरे क्षेत्र के लिए संसाधन के रूप में उपयोग किया जाता है।

शुष्क क्षेत्रों में कारगर प्रणाली

## संभावनाओं से भरपूर

अश्वगंधा की खेती में ऊन अपशिष्ट का समावेश केवल एक तकनीकी नवाचार नहीं है, बल्कि यह किसानों के लिए एक सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम भी बनता है। विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए जो सीमित संसाधनों के साथ खेती करते हैं। यह तकनीक एक समाधान प्रस्तुत करती है, जो कम लागत में अधिक लाभ की संभावना प्रदान करती है। इसके अलावा, यह प्रणाली महिलाओं के लिए भी आजीविका के नए अवसर उत्पन्न करती है। ऊन अपशिष्ट को इकट्ठा करना, प्रसंस्करित करना और खेतों में समायोजित करना स्थानीय स्तर पर किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, आधुनिक जैवप्रौद्योगिकी और जीनोमिक्स तकनीकों की सहायता से अब अश्वगंधा के अंदर पाए जाने वाले सक्रिय यौगिकों जैसे-विथानोलाइड्स की पहचान, मानकीकरण और उत्पादन बढ़ाने पर भी कार्य हो रहा है। इससे औषधीय कंपनियां उच्च गुणवत्ता वाले कच्चे माल की प्राप्ति सुनिश्चित कर सकेंगी। किसानों को उनके उत्पाद का बेहतर मूल्य मिल सकेगा। इन पहलुओं के चलते, भारत न केवल अपने घरेलू औषधीय उद्योग की आवश्यकताओं को पूरा कर सकेगा, बल्कि वैश्विक बाजार में भी एक प्रमुख निर्यातक के रूप में उभर सकता है।

ड्रिप सिंचाई के तहत अपशिष्ट ऊन का उपयोग

भविष्य की दृष्टि से देखें तो अश्वगंधा की खेती में नवाचार और सतत कृषि के समावेश से न केवल उत्पादन और गुणवत्ता में सुधार होगा, बल्कि यह शुष्क क्षेत्रों की पारिस्थितिकी तंत्र की बहाली में भी सहायक सिद्ध होगा। यह फसल न केवल आर्थिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह जैव विविधता संरक्षण, मृदा स्वास्थ्य सुधार और जल प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में भी योगदान दे सकती है।

## पर्यावरण अनुकूल

अश्वगंधा एक उच्च मूल्य वाली औषधीय फसल है, जो भारत के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में किसानों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी विकल्प प्रस्तुत करती है। पारंपरिक ज्ञान, वैज्ञानिक नवाचार और टिकाऊ कृषि तकनीकों के समावेश से इसकी खेती को दीर्घकालिक रूप से सफल बनाया जा सकता है। 'अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी' इस दिशा में एक प्रभावी नवाचार है, जो न केवल जल संरक्षण और मृदा स्वास्थ्य सुधार में सहायक है, बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

इस प्रकार, अश्वगंधा की खेती एक बहुस्तरीय समाधान प्रस्तुत करती है जो पर्यावरण, समाज और अर्थव्यवस्था तीनों के लिए लाभकारी है। संक्षेप में, अश्वगंधा की खेती में नवाचार की दिशा में अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी का समावेश एक महत्वपूर्ण कदम है। यह तकनीक न केवल मृदा की गुणवत्ता और फसल की उपज में सुधार करती है, बल्कि यह शुष्क क्षेत्रों में टिकाऊ कृषि की नींव को भी सुदृढ़ करती है।

**अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी**

जल और पोषक तत्वों की तीव्र कमी से जूझते शुष्क क्षेत्रों में, अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी एक अभिनव और टिकाऊ समाधान के रूप में उभरी है। भेड़ों से प्राप्त अनुपयोगी ऊन, जिसे पारंपरिक रूप से कृषि में उपयोग नहीं किया जाता था, अब मृदा संरक्षण, जलधारण क्षमता में सुधार करने और

उन्नत तकनीक से उत्पादित अश्वगंधा

पौध की स्वस्थ वृद्धि

पोषक तत्व आपूर्ति में अत्यंत प्रभावी सिद्ध हो रही है। इस तकनीक में ऊन को जैविक मल्च के रूप में उपयोग किया जाता है। यह मृदा की सतह पर एक सुरक्षात्मक परत बनाकर वाष्पीकरण को कम, नमी को संरक्षित, खरपतवार नियंत्रण और मृदा तापमान को स्थिर बनाए रखता है। इसके अतिरिक्त, ऊन में मौजूद प्राकृतिक नाइट्रोजन, सल्फर और सूक्ष्म पोषक तत्व धीरे-धीरे विघटित होकर मृदा को पोषित करते हैं। अश्वगंधा की खेती में इस तकनीक के उपयोग से कई लाभ प्राप्त होते हैं, जैसे:

- पौधों की सूखा सहनशीलता में वृद्धि
- मृदा की उर्वराशक्ति और जैविक गुणों में सुधार
- जल की खपत में 30-40 प्रतिशत तक की कमी
- जड़ विकास और कुल उपज में उल्लेखनीय वृद्धि
- उत्पादन लागत में कमी और लाभ में वृद्धि

## जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभाव के कारण विशेषकर शुष्क क्षेत्रों में कृषि की पारंपरिक पद्धतियां अप्रभावी होती जा रही हैं। ऐसे में, पर्यावरण के अनुकूल और कम लागत वाली नवाचार तकनीकों की आवश्यकता बढ़ गई है। अपशिष्ट ऊन प्रौद्योगिकी एक ऐसी ही पद्धति है, जो आधुनिक विज्ञान और पारंपरिक ज्ञान का समन्वय करती है। यह तकनीक अपशिष्ट प्रबंधन के सिद्धांतों पर आधारित है, जो अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन देती है। ऊन जैसे जैविक अपशिष्ट का पुन: उपयोग कर पर्यावरणीय प्रदूषण को भी कम करती है। इसका प्रभाव न केवल कृषि उत्पादन पर पड़ता है, बल्कि ग्रामीण क्षेत्र में लघु उद्योगों को भी बढ़ावा मिलता है। इससे किसानों को अतिरिक्त आय के साधन प्राप्त होते हैं और सतत आजीविका के मार्ग प्रशस्त होते हैं।

अपशिष्ट ऊन की मल्च

**लाभ**

अश्वगंधा की खेती में इस प्रौद्योगिकी के सफल उपयोग से विशेष रूप से लघु और सीमांत किसानों को अत्यधिक लाभ मिल सकते हैं। इससे जहां एक ओर सीमित जल संसाधनों के बावजूद खेती करना संभव हो पाता है, वहीं दूसरी ओर उत्पादन लागत में कमी और गुणवत्तायुक्त उपज के माध्यम से बाजार मूल्य में बढ़ोतरी भी सुनिश्चित होती है। इसके अतिरिक्त, कम जोखिम और अधिक लाभ की संभावना इस तकनीक को कृषि व्यवसाय के लिए अधिक आकर्षक बनाती है।

नीति निर्माताओं के लिए यह एक सुनहरा अवसर है कि वे ऊन अपशिष्ट प्रबंधन, जैविक कृषि के विस्तार और औषधीय फसलों की सतत खेती को बढ़ावा देने के लिए सशक्त योजनाएं बनाएं। कृषि वैज्ञानिकों और अनुसंधान संस्थानों को भी चाहिए कि वे अश्वगंधा की उच्च उपज देने वाली, सूखा प्रतिरोधी किस्मों के विकास और विथानोलाइड्स जैसे सक्रिय घटकों के मानकीकरण पर कार्य करें। ■

# लवणीय भूमि में बाजरे की खेती

**अर्चना वाट्स[1], अरुण चाको[1], प्रियांशी सेन[1], अंशुल वाट्स[2], प्राणजल यादव[1], सोहम रे[1]** और **शिवानी नागर[1]**

बाजरा (*पेनिसेटम ग्लोकम*), जिसे पौष्टिक अनाज भी कहा जाता है, यह गरीब तथा सीमांत कृषकों के लिए एक प्रमुख आहार फसल है। यह मुख्यत: भारत के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों या कम उपजाऊ तथा अनुपयुक्त भूमि पर उगाई जाती है। यह अत्यधिक प्रतिकूल कृषि-जलवायु परिस्थितियों में भी अच्छी वृद्धि कर सकती है और सीमित पोषक तत्वों वाली भूमि में भी इसकी अच्छी वृद्धि हो सकती है। बाजरा अत्यंत पौष्टिक तथा आहार संबंधी लाभों के लिए प्रसिद्ध है। यह उन क्षेत्रों के लिए एक उपयोगी फसल सिद्ध हो सकती है, जहां कृषि परिस्थितियां प्रतिकूल हैं और संसाधनों का अभाव है। लवणता तनाव मुख्यत: वर्षा की कमी, क्षारीय जल से सिंचाई और अनुपयुक्त सिंचाई विधियों के कारण होता है, जो फसलों की उत्पादकता के लिए एक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है। एक रिपोर्ट के अनुसार वैश्विक स्तर पर लगभग 1.4 अरब हैक्टर भूमि या कुल भूमि क्षेत्रफल का 10.7 प्रतिशत भाग पहले से ही लवणता से प्रभावित है। बदलती जलवायु परिस्थितियों और मृदा की उर्वराशक्ति में कमी के कारण ऐसी जलवायु-अनुकूल फसलों की आवश्यकता है जिन्हें सीमांत भूमि पर भी सफलतापूर्वक उगाया जा सके। बाजरा विभिन्न प्रकार के प्रतिकूल तनावों, विशेषकर लवणता तनाव को सहन करने की क्षमता रखता है। प्रस्तुत लेख में बाजरा की लवणता सहनशीलता की भौतिकी और आण्विक क्रियाविधियों का विश्लेषण किया गया है। इसके साथ ही लवणता सहिष्णुता संवर्धन की संभावनाओं और इसके उन्नयन हेतु आधुनिक तकनीकों की चर्चा की गई है।

बाजरा एक जलवायु अनुकूल फसल है। यह शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों की सीमांत एवं मरुस्थलीय भूमि में कम वर्षा एवं निम्न पोषण वाली मृदा पर भी सफलतापूर्वक उगाई जाती है। बाजरा के उत्पादन क्षेत्र मुख्यत: दक्षिण एशिया एवं पश्चिम अफ्रीका के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्र हैं, जहां मृदा लवणता प्रमुख बाधा है।

बाजरा सी$_4$ प्रकाश-संश्लेषण उपयोग करता है। इसके तीन उपप्रकार फॉस्फोएनॉल पायरूवेट कार्बोक्सीलेज, BAD-मैलिक एंजाइम तथा NADP-मैलिक एंजाइम प्रकार पाए जाते हैं, जो इसे लवणता तनाव के प्रति सहनशील बनाने में सहायक हो सकते हैं। इसका सी$_4$ मार्ग, विशेषत: क्रैंज रचना, बंडल शीथ कोशिकाओं में उच्च $CO_2$ सान्द्रता बनाए रखता है। इससे फोटो-श्वसन हानि न्यूनतम होती है तथा रूबिस्को की कार्बोक्सीलेशन दक्षता में वृद्धि होती है।

बाजरे की गहरी एवं विस्तृत जड़ प्रणाली इसे विषम परिस्थितियों में जीवित रहने में भी मदद करती है। इसके अतिरिक्त, विशेष पत्ती शिराजाल, उच्च उत्सर्जन दक्षता एवं निम्न $CO_3$ प्रतिपूरण बिंदु इसके अनुकूलन को और सुदृढ़ करते हैं। धान एवं गेहूं जैसे C3 पौधों की तुलना में, बाजरे की वृद्धि एवं उपज ऊंचे $CO_2$ स्तरों पर भी प्राय: अप्रभावित रहती है।

बाजरा औसतन 6 (ECe) dS/m तक लवणता सहनशीलता क्षमता रखता है। लवणता एवं परास्माटिक तनाव की स्थिति में बाजरा विशेष यौगिकों जैसे प्रोलिन एवं ग्लाइसिन बीटाइन का उत्पादन करता है, जो कोशिका को लवणता तनाव से सुरक्षित रखते हैं। इसके अतिरिक्त, एंटीऑक्सीडेटिव एंजाइम्स जैसे कैटालेज एवं सुपरऑक्साइड डिस्म्यूटेज सक्रिय होकर ऑक्सीडेटिव तनाव को कम करते हैं। बाजरा लवणता परिस्थितियों में $Na^+$ आयनों के नियमन एवं आयनिक संतुलन बनाए रखने में भी सक्षम है।

[1]पादप कार्यिकी संभाग, भाकृअनुप-भाकृअनुसं, नई दिल्ली-110012; [2]भाकृअनुप-एनआईपीबी, नई दिल्ली-110012

बाजरा में लवणता सहनशीलता एक जटिल गुण है। यह ट्रांसकिप्शन फैक्टर (TFs), आयन ट्रांसपोर्टर्स, परास्माटिक सुरक्षा यौगिक, एंटीऑक्सीडेटिव एंजाइम्स एवं नियामक आरएनएएक्स के जटिल नेटवर्क द्वारा नियंत्रित होता है। बाजरा जर्मप्लाज्म में लवणता सहनशीलता के लिए पर्याप्त आनुवंशिक एवं स्वरूपगत विविधता उपलब्ध है। विशेषत: देसी किस्में आधुनिक किस्मों की तुलना में अधिक लवणता सहनशीलता प्रदर्शित करती हैं तथा विषम जलवायु परिस्थितियों में बेहतर अनुकूलन क्षमता रखती हैं। ये देसी किस्में लवणता-सहनशील जीन स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण हैं तथा आनुवंशिक सुधार कार्यक्रमों में उपयोगी डोनर जर्मप्लाज्म के रूप में कार्य कर सकती हैं।

प्रमुख आणविक स्तर पर बाजरे से एक वैक्युलर $Na^+/H^+$ एंटीपोर्टर आइसोफॉर्म (PgNHX1) का पृथक्करण एवं विश्लेषण किया गया है। इसके अतिव्यक्ति से ब्रैसिका जुंसेआ में लवणता सहनशीलता में वृद्धि हुई तथा पौधे 300 mM NaCl तनाव में भी जीवित रह सके और फूल एवं बीज उत्पादन कर सके। इन पौधों में पत्तियों में उच्च $Na^+$ संचय एवं बीजों में न्यूनतम स्थानांतरण देखा गया। इसी प्रकार, बाजरे के वैक्युलर सबयूनिट व जीन का क्लोनिंग किया गया, जो लवणता, कैल्शियम एवं सैलिसिलिक एसिड उपचार में उच्च अभिव्यक्ति प्रदर्शित करता है। इसके प्रमोटर विश्लेषण में डिहाइड्रेशन-प्रतिक्रिया तत्व पाए गए, जो इसे तनाव संकेतन मार्ग में सक्रिय भूमिका का संकेत देते हैं।

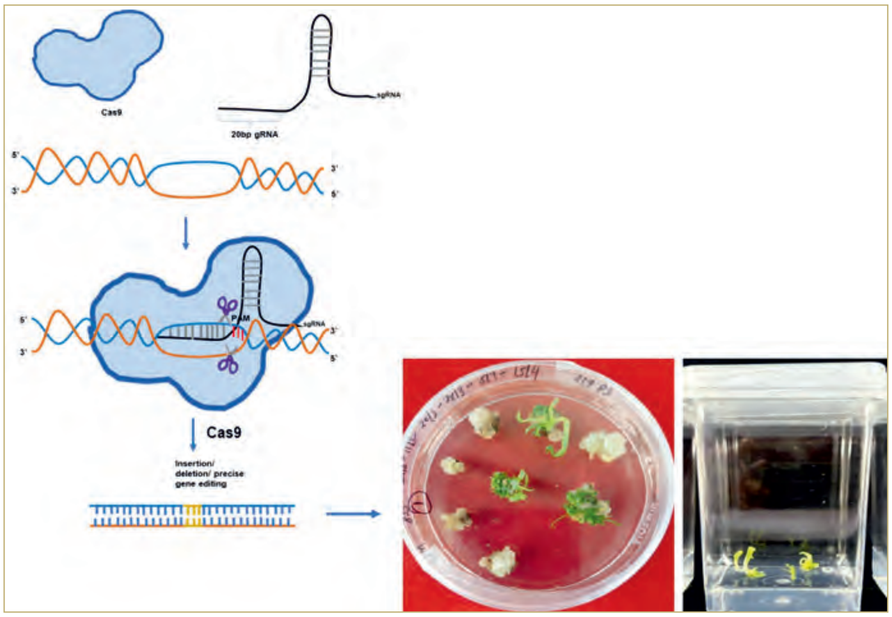


उत्तक संवर्धन से जीन का जीनोम संपादन, पादप बदलाव एवं जीनोम का विकास

इसके अतिरिक्त, वोल्टेज-निर्भर एनीयन चैनल जीन का लवणता तनाव में उच्च स्तर पर अभिव्यक्त होना दर्ज किया गया है। अन्य तनाव सहायक जीन, जैसे लेट एम्ब्रियोजनेस एबंडन्ट प्रोटीन तथा डिहाइड्रिन जीन भी लवणता सहनशीलता में उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इसके साथ ही, कई ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर जैसे अतिव्यक्ति को भी लवणता सहनशीलता में वृद्धि से जोड़ा गया है जो इस गुण के बहुआयामी एवं समन्वित प्रकृति को दर्शाता है।

अत: बाजरे की अंतर्निहित उच्च लवणता सहनशीलता इसे उन सुधार कार्यक्रमों के लिए आदर्श फसल बनाती है, जो लवणता मृदा में उत्पादकता बढ़ाने हेतु लवण-सहनशील किस्मों के विकास को लक्ष्य बनाते हैं।

## लवणता सहनशील कृषि के लिए उपाय

**उचित जल प्रबंधन**

लवणता प्रभावित क्षेत्रों में वर्षा जल संचयन संरचनाओं का निर्माण कर सिंचाई के लिए जल एकत्रित एवं संरक्षित किया जा सकता है। इसके साथ ही, ड्रिप सिंचाई पद्धति द्वारा पौधों को सटीक एवं नियंत्रित जल आपूर्ति कर लवणता के प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सकता है।

**मृदा संशोधन**

मृदा में जिप्सम या जैविक पदार्थ का प्रयोग कर मृदा लवणता को कम किया जा सकता है। इससे मृदा स्वास्थ्य एवं फसल उत्पादकता में सुधार संभव होता है।

**अंत:फसली प्रणाली**

बाजरे को अन्य लवणता सहनशील फसलों के साथ अंत:फसल के रूप में उगाकर मृदा लवणता के दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है।

**समुद्री जल आधारित कृषि**

वैज्ञानिक, क्षारीय जल वाले क्षेत्रों में समुद्री जल को उपचारित कर कृषि हेतु उपयोग करने की नवीन तकनीकों का विकास कर रहे हैं। इससे लवणता प्रभावित क्षेत्रों में कृषि संभावनाओं का विस्तार किया जा सकेगा।

### लवणता सहनशील किस्मों का विकास

लवणता सहनशील फसल किस्मों के विकास हेतु विभिन्न तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है। बाजरा में लवणता सहनशीलता के लिए कई जीन एवं ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर मौजूद हैं, जिन्हें वांछित किस्मों में स्थानांतरित कर लवण सहनशील किस्मों का विकास किया जा सकता है। इसके लिए निम्नलिखित आधुनिक तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है:

**पारंपरिक प्रजनन**

पारंपरिक प्रजनन बाजरे की देसी किस्मों, जंगली प्रजातियों और परंपरागत किस्मों में उपलब्ध आनुवंशिक विविधता पर आधारित है। इन आनुवंशिक विविधताओं का स्वरूपिक और आनुवंशिक स्तर पर मूल्यांकन किया जाता है। सर्वश्रेष्ठ लवणता सहनशील जीनोटाइप का चयन कर, उच्च उत्पादकता वाली किन्तु लवण संवेदनशील किस्मों के साथ संकरण किया जाता है, जिसके बाद कठोर स्क्रीनिंग एवं चयन की प्रक्रिया कई चरणों में की जाती है। चयन एवं संकरण के बाद, विकसित संततियों का मूल्यांकन कर उन पौधों का चयन किया जाता है। इनमें लवणता सहनशीलता के साथ-साथ अन्य वांछनीय कृषिगत गुण भी विद्यमान होते हैं।

**मार्कर सहायक चयन**

अपनी अद्‌भुत जलवायु सहनशीलता के कारण, बाजरे में उल्लेखनीय आनुवंशिक विविधता उपलब्ध है। लोकप्रिय संकरों की इनब्रेड पैरेंटल लाइनों में उच्च स्तर का पॉलिमॉर्फिज्म पाया जाता है। इस आनुवंशिक विविधता का उपयोग आणविक मार्करों जैसे

## लवणता के प्रभाव

मृदा लवणता फसल उत्पादकता के लिए एक महत्वपूर्ण अवरोधक कारक है, विशेष रूप से कम सिंचित तथा शुष्क क्षेत्रों में। यह मृदा में घुलनशील लवणों, विशेषकर सोडियम क्लोराइड के संचय के कारण उत्पन्न होती है। लवणीय मृदा की विशेषता विभिन्न प्रकार के लवणों जैसे-सोडियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम, कार्बोनेट, बाइकार्बोनेट, क्लोराइड, सल्फेट, बोरैट तथा लिथियम लवणों की अधिक मात्रा से पहचानी जाती है। इन लवणों की अत्यधिक मात्रा पौधों में जल अवशोषण को बाधित करती है। इससे वृद्धि में कमी, मुरझाना तथा अंततः पौधों की मृत्यु तक हो सकती है। इसके अतिरिक्त, लवणता पौधों के वृद्धि संबंधी, भौतिकीय, शारीरिक, रचनात्मक तथा जैव-रासायनिक गुणों को प्रभावित करती है तथा प्रभावित क्षेत्रों के पारिस्थितिक संतुलन को भी बिगाड़ती है। उच्च मृदा लवणता पोषक तत्वों के संतुलन को बाधित करती है तथा आवश्यक पोषक तत्वों के अवशोषण एवं स्थानांतरण में हस्तक्षेप करती है। इसके साथ ही, लवणता प्रकाश-संश्लेषण दक्षता को भी प्रभावित करती है, मुख्यतः पत्ती क्षेत्रफल, क्लोरोफिल सामग्री तथा रंध्र चालकता को कम करके। बाजरा में लवणता के स्तर में वृद्धि के साथ अंकुरण प्रतिशत, पौधों की ऊंचाई, दाने का उत्पादन तथा भूसे के जैवभार में गंभीर कमी देखी जाती है। लवणता तनाव के संपर्क में आने पर पौधे विभिन्न चयापचयी समायोजन करते हैं, ताकि परिवर्तित पर्यावरणीय परिस्थितियों का सामना कर सकें। अतः तनाव सहनशीलता तंत्र की समग्र समझ तथा विशेष रूप से बाजरा जैसी श्रीअन्न फसल की आनुवंशिक सुधार प्रक्रिया, सीमांत और अनुपयोगी भूमि पर फसल उत्पादकता बढ़ाकर सतत कृषि को बढ़ावा देने की अत्यधिक संभावनाएं प्रदान करती है, जो अब भी अपेक्षाकृत कम अध्ययनित क्षेत्र है।

जड़ प्रणाली

आरएफएलपी, एएफएलपी, एसएसआर एवं एसएनपी के माध्यम से किया जाता है, जो लवणता सहनशीलता जीन अथवा क्यूटीएलएस से घनिष्ठ रूप से संबद्ध होते हैं। ये मार्कर लवणता सहनशीलता से जुड़ी वांछित एलिली वाले पौधों की पहचान को संभव बनाते हैं। इससे क्षारीय वातावरण में श्रमसाध्य स्वरूपिक परीक्षण की आवश्यकता नहीं रहती। इसके उपरांत, मार्कर सहायक बैकक्रॉस प्रजनन द्वारा लक्षित लवणता सहनशीलता जीन को उच्च उत्पादकता वाली लवण संवेदनशील किस्मों में प्रविष्ट करवाया जाता है। इससे तनाव सहनशीलता एवं उत्कृष्ट कृषिगत गुणों का संयोजन संभव होता है।

**CRISPR/Cas9 आधारित जीनोम संपादन**

यह अत्याधुनिक तकनीक लवण तनाव बोध, आयन संतुलन, परास्माटिक संतुलन तथा एंटीऑक्सीडेंट रक्षा तंत्र से संबंधित जीनों में लक्षित एवं सटीक संशोधन अथवा विनियमन की सुविधा प्रदान करती है। इस विधि में एक अनुक्रम-विशिष्ट सिंगल गाइड आरएनए (एसजीआरएनए) तैयार किया जाता है, जो cas9 न्यूक्लियस को वांछित जीनोमिक स्थान पर पहुंचाता है। यहां Cas9 DNA में डबल-स्ट्रैंडेड ब्रेक (डीएसबी) उत्पन्न करता है। प्राकृतिक मरम्मत की प्रक्रिया के दौरान, डीएनए में सम्मिलन, विलोपन या सटीक संपादन संभव हो जाता है। इससे लक्षित जीन की अभिव्यक्ति अथवा कार्यक्षमता में परिवर्तन किया जा सकता है।

लवणीय भूमि पर बाजरे की फसल

बाजरे में इस तकनीक का उपयोग नकारात्मक नियामकों जैसे एसओएस पाथवे अवरोधकों $Na^+$ ट्रांसपोर्टर सुप्रेसर को निष्क्रिय करने में किया जा सकता है। साथ ही, तनाव प्रतिक्रिया जीन नेटवर्क को नियंत्रित करने वाले ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर तथा $Na^+/K^+$ ट्रांसपोर्ट, वैक्यूलर संधारण, प्रोलिन जैवसंश्लेषण तथा एंटीऑक्सीडेंट प्रणालियों से संबंधित जीनों में संशोधन के लिए भी इस तकनीक का उपयोग किया जा सकता है। यह लक्षित एवं दक्ष तकनीक बाजरे में लवणता सहनशीलता बढ़ाने के लिए जीनोमिक स्तर पर तनाव प्रतिक्रिया मार्गों में प्रत्यक्ष हेरफेर की दृष्टि से अत्यंत संभावनाशील मानी जा रही है। ■

## बायोफर्टिलाइजर एवं नैनो-जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग

फसलों में लवणता सहनशीलता को बढ़ाने में बायोफर्टिलाइजर (जैव उर्वरक) एवं नैनो-जैव प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण भूमिका है। बायोफर्टिलाइजर में पादप वृद्धि प्रवर्धक राइजोबैक्टीरिया, फॉस्फेट घुलनशील तथा नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु सम्मिलित होते हैं, जो लवणता वातावरण में पौधों की वृद्धि में सहायता करते हैं। ये पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाकर, आवश्यक वृद्धि हार्मोन का उत्पादन कर तथा तनाव प्रतिक्रिया तंत्रों को सक्रिय करके कार्य करते हैं। बायोफर्टिलाइजर से समृद्ध मृदा पौधों की जड़ों द्वारा जल अवशोषण क्षमता बढ़ाती है, जिससे जल उपयोग दक्षता में सुधार होता है। रिपोर्ट्स में *(बैलिलस गोर्जेनिया)* तथा *(एस्परगिलस)* जैसे पादप वृद्धि प्रवर्धक राइजोबैक्टीरिया के प्रयोग से क्षारीय मृदा में बाजरे की वृद्धि में उल्लेखनीय सुधार पाया गया है। वहीं, नैनोकण पोषक तत्वों, कीटनाशकों एवं वृद्धि नियामकों को सटीक रूप से पौधों की जड़ों तक पहुंचाने का एक उन्नत एवं प्रभावी माध्यम प्रदान करते हैं। इसके अलावा, नैनो-जैव प्रौद्योगिकी बीज अंकुरण, जड़ विकास तथा पौधों की भौतिक एवं आण्विक प्रतिक्रियाओं को संशोधित कर समग्र तनाव सहनशीलता में वृद्धि करती है।

# स्वस्थ मृदा से समृद्ध भविष्य

**भावना बाबल**[1] और **गजेन्द्र यादव**[2]

"जिस प्रकार मनुष्य का शरीर स्वस्थ रहने पर ही ऊर्जा एवं उत्पादनशीलता बनाए रख सकता है, उसी प्रकार कृषि उत्पादन के लिए भी मृदा का स्वस्थ होना आवश्यक है। मृदा केवल पौधों के खड़े होने का आधार भर नहीं है, बल्कि यह एक जीवित तंत्र है। इसमें असंख्य सूक्ष्मजीव, जैविक पदार्थ एवं पोषक तत्व मौजूद रहते हैं। ये सभी मिलकर फसलों को पोषण प्रदान करते हैं और हमारी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं। आज मृदा स्वास्थ्य केवल वैज्ञानिकों या शोधकर्ताओं का विषय नहीं रहा, बल्कि यह प्रत्येक किसान, नीति, निर्माता एवं समाज का साझा सरोकार बन चुका है। हाल के वर्षों में अधिक उर्वरक उपयोग एवं सिंचाई के बावजूद कई क्षेत्रों में पैदावार में कमी आ रही है। यह संकेत है कि मृदा की उर्वराशक्ति कमजोर हो रही है। इसे वैज्ञानिक भाषा में 'मृदा स्वास्थ्य की कमी' कहा जाता है। अत: इस लेख में चर्चा करेंगे कि मृदा के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए किन वैज्ञानिक नीतियों को अपनाया जाए, जिससे न केवल फसल उत्पादन बढ़े, बल्कि भविष्य भी सुनिश्चित रहे।"

मृदा केवल भूमि का आवरण ही नहीं, बल्कि एक जटिल एवं जीवित तंत्र है। इसकी उर्वराशक्ति पौधों के पोषण, जलधारण क्षमता एवं पारिस्थितिकी संतुलन से जुड़ी है। मृदा स्वास्थ्य के निम्न घटक इसे मजबूत या कमजोर कर सकते हैं

**मृदा स्वास्थ्य के घटक**

मृदा का स्वास्थ्य तीन मुख्य घटकों पर आधारित होता है:

- भौतिक गुण
- रासायनिक गुण
- जैविक या जीवांश गुण

[1]वरिष्ठ अनुसंधान सहायक; [2]प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

इन तीनों का संतुलन ही तय करता है कि मृदा में कितना पोषण है, कितनी नमी को रोककर रख सकती है और उसमें पौधों की जड़ें कितनी गहराई तक फैल सकती हैं।

**भौतिक गुण: मृदा का शरीर**

मृदा का प्रकार-जैसे रेतीली, दोमट या चिकनी-उसके भौतिक गुणों को दर्शाता है।

- *रेतीली मृदा* जल्दी सोखती है, लेकिन इसे रोककर नहीं रख पाती। इससे पोषक तत्व जड़ों तक पहुंचने से पहले ही बह जाते हैं।
- *भारी चिकनी मृदा* जल को रोकती तो है, लेकिन हवा के अभाव में जड़ें घुट सकती हैं।
- *दोमट मृदा* आदर्श मानी जाती है। यह जल और वायु का उचित संतुलन बनाए रखती है।

इसके अलावा, मृदा की कठोरता भी महत्वपूर्ण होती है। कई बार गहराई पर 'हार्ड पैन' बन जाता है, जो जड़ों को नीचे जाने से रोकता है। इससे पौधों की पोषण ग्रहण करने की क्षमता सीमित हो जाती है।

भूमि क्षरण भी भौतिक स्वास्थ्य की कमी का संकेत है। जब ऊपरी उपजाऊ परत बह जाती है, तो मृदा का पोषण चक्र टूट जाता है और उत्पादन क्षमता घट जाती है।

**रासायनिक गुण: मृदा का**

मृदा का पी-एच, मान नमक की

मात्रा और पोषक तत्वों की उपलब्धता उसके रासायनिक स्वास्थ्य का निर्धारण करते हैं।

- एक अच्छी मृदा का पी-एच मान सामान्यत: 6.5 से 7.5 के बीच होना चाहिए।
- अत्यधिक अम्लीय (पी-एच मान <6.5) या क्षारीय (पी-एच मान <7.5) मृदा पोषक तत्वों की उपलब्धता को कम कर देती है।

लवणीय जल से सिंचाई करने पर मृदा में लवणता और क्षारीयता बढ़ जाती है। इससे फसलें प्रभावित होती हैं। इस समस्या का समाधान उचित जल प्रबंधन और जिप्सम जैसे मृदा सुधारक के उपयोग में निहित है।

इसके साथ ही पोषक तत्वों का संतुलन बनाए रखना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। मुख्य पोषक तत्व नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम (एनपीएक) के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे जिंक, आयरन, बोरॉन की उपलब्धता भी उतनी ही जरूरी है। यही कारण है कि नियमित मृदा परीक्षण आवश्यक है ताकि हम यह जान सकें कि मृदा में कौन से पोषक तत्वों की कमी है।

**सूक्ष्मजीव: अदृश्य मगर अमूल्य साथी**

मृदा में असंख्य जीवाणु, कवक, प्रोटोजोआ और आर्किया होते हैं। ये जीवाणु नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हैं, फॉस्फोरस को घुलनशील बनाते हैं और प्रूमस के निर्माण में सहायक होते हैं। अत्यधिक रासायनिक खादों और कीटनाशकों के प्रयोग से इनका संतुलन बिगड़ जाता है।

यह समझने की आवश्यकता है कि ये जीव हमारे बिना वेतन के श्रमिक हैं, जो दिन-रात खेतों में काम करते हैं। इन सूक्ष्म श्रमिकों की सुरक्षा ही मृदा की जीवन रेखा है।

## जैविक गुण: मृदा की आत्मा

मृदा में उपस्थित जैविक कार्बन उसकी आत्मा है। इसे ही हम 'मृदा जीवित है या नहीं' का संकेत मानते हैं। मृदा में जीवांश की उचित मात्रा होने से:

- जलधारण क्षमता बढ़ती है
- सूक्ष्मजीवों का आवास बनता है
- पोषक तत्वों का चक्रण बेहतर होता है

जैसे मानव शरीर में हीमोग्लोबिन की कमी के कारण एनीमिया होता है, वैसे ही जैविक कार्बन की कमी मृदा को रोगग्रस्त बना देती है। इस जैविक भाग को बढ़ाने के लिए खेतों में:

- फसल अवशेषों को जलाने के स्थान पर मृदा में मिलाना चाहिए
- हरी खाद अपनानी चाहिए
- गोबर की खाद, केंचुआ खाद कम्पोस्ट और जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए

मृदा स्वास्थ्य कार्ड

**मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना**

मृदा स्वास्थ्य कार्ड भारत सरकार की एक प्रमुख योजना है, जिसे वर्ष 2015 में शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य किसानों को उनकी खेत की मृदा की पोषण स्थिति की जानकारी देना और उसके अनुसार उर्वरक सिफारिश प्रदान करना है। यह योजना मृदा की उर्वराशक्ति को बनाए रखने, संतुलित उर्वरक प्रयोग को प्रोत्साहित करने और दीर्घकालिक रूप से फसल उत्पादकता को बढ़ाने में मदद करती है।

**योजना की मुख्य विशेषताएं**

- **नमूना विश्लेषण:** मृदा के पी-एच, ईसी जैविक कार्बन, एनपीके और सूक्ष्म पोषक तत्वों (जैसे Zn, Fe, Mn, Cu, B) की जांच की जाती है।
- **सिफारिशें:** विश्लेषण के आधार पर फसलवार उर्वरक प्रयोग की सिफारिशें दी जाती हैं।
- **कार्ड वितरण:** प्रत्येक किसान को उसकी भूमि के लिए एक विशेष मृदा स्वास्थ्य कार्ड दिया जाता है।
- **नि:शुल्क सेवा:** यह सुविधा किसानों के लिए पूर्णत: नि:शुल्क है और इसे नजदीकी सीएनसी, कृषि विज्ञान केंद्र या राज्य कृषि विभाग कार्यालय से प्राप्त किया जा सकता है।

**ऑनलाइन उपलब्धता**

एसएचसी रिपोर्ट को soilhealth.dac.gov.in पोर्टल से डाउनलोड किया जा सकता है। किसान अपना पंजीकरण नंबर दर्ज कर रिपोर्ट देख सकते हैं।

**मृदा परीक्षण हेतु नमूना संकलन एवं प्रसंस्करण प्रक्रिया**

मृदा परीक्षण की सटीकता इस बात पर निर्भर करती है कि मृदा का नमूना कितनी सावधानी और वैज्ञानिक विधि से लिया गया है। यदि नमूना सही नहीं है, तो संपूर्ण परीक्षण निष्कर्ष भी भ्रामक हो सकते हैं।

**मृदा नमूनों का संग्रहण**

नमूना उस खेत का प्रतिनिधि होना चाहिए जिससे उसे लिया जा रहा है। यदि खेत समरूप हो, तो एक ही नमूना पर्याप्त हो सकता है। लेकिन यदि मृदा की बनावट, ढलान, रंग, फसल वृद्धि या प्रबंधन पद्धति में अंतर हो, तो अलग-अलग नमूने लेने चाहिए।

**इन क्षेत्रों से नमूना न लें**

- हाल ही में खाद/उर्वरक डाला गया भाग
- मेड़, नाली, दलदली क्षेत्र
- वृक्षों के नीचे, गोदामों, बोरवेल, खाद के ढेर के पास

**तरीका:** खेत में जिगजैग या यादृच्छिक तरीके से चलकर 5-7 स्थानों से नमूने लें। पंक्तियों में बोई गई फसल के लिए पंक्तियों के बीच से नमूना लें।

**नमूना लेने की गहराई**

फसल की जड़ गहराई और मृदा की प्रकृति के आधार पर गहराई निर्धारित करें:

- **खेत फसलें (धान, गेहूं, सब्जियां):** 0-15 सें.मी.
- **गहरी जड़ वाली फसलें (गन्ना, कपास):** विभिन्न गहराई जैसे 0-15, 15-30, 30-60 सें.मी. तक
- **बागवानी फसलें:** 0-180 सें.मी. तक की गहराई पर (15 सें.मी. की परतों में)
- **लवणीय या क्षारीय मृदा:** सतही लवण परत को अलग से रखें और गहराई दर्ज करें

**मिश्रित नमूना तैयार करने की प्रक्रिया**

सभी नमूनों को स्वच्छ प्लास्टिक शीट या कपड़े पर डालें और हाथ से अच्छी तरह मिलाएं। फिर चतुर्भुजन विधि अपनाएं:

- पूरी मृदा को चार बराबर भागों में बांटें
- दो विपरीत भाग हटा दें
- शेष दो भागों को आपस में मिलाएं
- यह प्रक्रिया दोहराएं, जब तक लगभग 500 ग्राम मृदा शेष रह जाए

**मृदा संग्रहण के उपकरण**

- **ट्यूब औजार:** गहरी परतों से मृदा का नमूना लेने के लिए प्रयोग किया जाता है।
- **स्क्रू औजार:** कठोर या सूखी मृदा से नमूना संग्रहण हेतु उपयुक्त।
- **पोस्ट-होल औजार:** अधिक गीली मृदा जैसे धान खेत से नमूना लेने के लिए प्रयोग किया जाता है।
- **फावड़ा:** सतही मृदा नमूना लेने हेतु सरल विकल्प

**युक्ति:** 'वी'-आकार की खुदाई कर बीच की दीवार से 2 सें.मी. मोटी परत निकालें।

**नमूनों को लेबल करना**

प्रत्येक नमूने के साथ दो लेबल लगाएं। एक बैग के अंदर एवं एक बाहर बांधना चाहिए।

**लेबल पर जानकारी**

- किसान का नाम, खेत संख्या, स्थान
- मृदा की बनावट, सिंचाई, ढलान, पिछली फसल पूर्व में खाद प्रयोग की जानकारी

**मृदा नमूनों का प्रसंस्करण**

मृदा को छाया में कमरे के तापमान पर सुखाएं एवं सीधी धूप से बचाएं। लकड़ी के मूसल से हल्के हाथों से ढेले तोड़ें। ध्यान रखें कि रेत/कंकड़ न टूटें। मृदा को अच्छी तरह मिलाकर प्रयोग करें।

**नमूना संग्रहण के समय सावधानियां**

- उर्वरक या रसायन से दूषित थैले का प्रयोग न करें
- सूक्ष्म पोषक तत्व परीक्षण हेतु स्टील औजार का प्रयोग करें, लोहे के जंग लगे उपकरण नहीं
- पुराने खाद बैग का उपयोग न करें
- नमूना कपड़े या स्वच्छ प्लास्टिक बैग में रखें
- यदि लंबे समय तक संग्रहण करें, तो कांच या प्लास्टिक के जार में रखें

**नमूना जमा करने का स्थान**

नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र, राज्य मृदा परीक्षण प्रयोगशाला एवं मान्यता प्राप्त निजी प्रयोगशालाओं आदि स्थानों पर संकलित मृदा नमूने को जमा किया जा सकता है।

**मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन**

- **मृदा परीक्षण करें:** प्रत्येक 2-3 वर्षों में एक बार परीक्षण जरूर करवाएं। इससे मृदा के पोषण स्तर और पी-एच मान की जानकारी मिलती है।
- **फसल चक्र अपनाएं:** दलहनी फसलों को चक्र में शामिल करें। इससे मृदा की नाइट्रोजन पूर्ति स्वतः होती है।
- **रासायनिक खाद का संतुलन:** केवल रासायनिक खादों पर निर्भर न रहें। जैविक खादों और फसल अवशेषों का भी प्रयोग करें।
- **प्राकृतिक संशोधकों का प्रयोग:** जैसे नीम-कोटेड यूरिया, जैव उर्वरक, ट्राइकोडर्मा, पीएसबी आदि।
- **फसल अवशेष न जलाएं:** जलाने से कार्बन समाप्त होता है और लाभकारी सूक्ष्मजीव नष्ट हो जाते हैं।
- **जल प्रबंधन:** नमी संरक्षण तकनीकों जैसे मल्चिंग, ड्रिप सिंचाई को अपनाएं।

हरी खाद से बढ़ाएं मृदा का स्वास्थ्य

## नैतिक दायित्व

यह स्पष्ट रूप से समझना आवश्यक है कि मृदा कोई नवीकरणीय संसाधन नहीं है। इसके निर्माण में हजारों वर्षों का समय लगता है। वर्तमान में उपलब्ध मृदा पूर्वजों की विरासत न होकर आने वाली पीढ़ियों से ऋणस्वरूप प्राप्त धरोहर है। हमारा नैतिक दायित्व यह है कि इस अमूल्य धरोहर को क्षति, प्रदूषित अथवा अनुपयोगी बनाने के बजाय और अधिक स्वस्थ, उपजाऊ एवं समृद्ध अवस्था में आगामी पीढ़ियों को सौंपा जाए। इसके अलावा मृदा स्वास्थ्य केवल वैज्ञानिकों अथवा किसानों की चिंता तक सीमित नहीं है, अपितु यह प्रत्येक नागरिक का सामूहिक दायित्व है। स्वस्थ मृदा ही एक सशक्त एवं समृद्ध राष्ट्र की आधारशिला है।

# लवणीय जलभराव वाले क्षेत्रों का प्रबंधन

**राकेश बन्याल** और **वरुण सैनी**

"मृदा लवणता और जलभराव भूमि के क्षरण के दो प्रमुख रूप हैं जो विशेष रूप से शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता और पारिस्थितिकीय स्थिरता को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। वैश्विक स्तर पर लगभग 33 प्रतिशत सिंचित भूमि, यानी लगभग 1.0 अरब हैक्टर, इन दोहरी समस्याओं से ग्रसित है। भारत में लगभग 8.5 मिलियन हैक्टर भूमि प्रभावित है। इसमें से 5.5 मिलियन हैक्टर भूमि लवणता और जलभराव की संयुक्त समस्याओं से ग्रसित है। इनमें से लगभग 2.3 मिलियन हैक्टर क्षेत्र नहर कमांड क्षेत्रों के भीतर और बाहर स्थित हैं। इसका एक प्रमुख कारण उचित जल निकासी व्यवस्था के बिना सिंचाई प्रणालियों की स्थापना है। हरियाणा, महाराष्ट्र, गुजरात, ओडिशा, उत्तर प्रदेश, पंजाब, पश्चिम बंगाल, बिहार, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान और केरल जैसे राज्य इस समस्या से विशेष रूप से प्रभावित हैं। जलभराव की गंभीरता को भूजल स्तर के आधार पर (संभावित जलभराव (≤3 मीटर), जलभराव (≤1.5 मीटर) और गंभीर जलभराव (0-30 सें.मी.) वर्गीकृत किया गया है। पारंपरिक जल निकासी विधियां प्रभावी तो हैं, लेकिन ये उच्च लागत वाली हैं और इनके साथ पर्यावरणीय जोखिम भी जुड़े हैं। इसके विपरीत, जैव जल निकासी मॉडल अपेक्षा कम लागत, न्यूनतम निवेश और पर्यावरण-अनुकूल समाधान प्रदान करता है। प्रकृति आधारित जैविक उपचार रणनीतियां, विशेषकर कृषि-वानिकी, लवणीय एवं जलभराव वाले क्षेत्रों के प्रबंधन में कारगर सिद्ध हुई हैं। ये पुनर्भरण के साथ-साथ पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं की एक विस्तृत श्रृंखला भी प्रदान करती हैं। यह लेख ऐसे जैव उपचार मॉडलों और उनके पारिस्थितिक लाभों पर चर्चा करता है, जो सतत भूमि प्रबंधन के लिए उपयोगी हो सकते हैं।"

जैव जल निकासी एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें गहरी जड़ों वाले पौधे अपनी जैव ऊर्जा के माध्यम से अतिरिक्त जल को अवशोषित करते हैं और उसे वाष्पोत्सर्जन के माध्यम से वायुमंडल में उत्सर्जित करते हैं। यह प्रणाली मूल रूप से जल स्तर नियंत्रण के लिए विकसित की गई है। वर्तमान में इसके उपचारात्मक और निवारक दोनों रूपों में उपयोग की संभावनाएं हैं। हालांकि, इसकी आर्थिक व्यवहार्यता और इसमें प्राप्त प्रत्यक्ष लाभों के साथ-साथ पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं के मूल्यांकन की दिशा में अब तक सीमित अध्ययन हुए हैं।

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा-132001

**वृक्ष आधारित जैव-उपचार मॉडल**

सफेदा, कीकर, बबूल और झाऊ जैसे वृक्षों को क्षारीय जलभराव वाले क्षेत्रों में अपनाया गया। इनकी प्रजातिगत उपयुक्तता क्षेत्र की लवणता की तीव्रता के आधार पर अलग-अलग पाई गई। जहां सफेदा कम से मध्यम प्रभावित क्षेत्रों में बेहतर प्रदर्शन करता है, वहीं कीकर, बबूल और झाऊ गंभीर रूप से प्रभावित क्षेत्रों में अधिक उपयुक्त पाए गए।

कम प्रभावित क्षेत्रों में 1.5-2.0 मीटर की दूरी पर सीमांत वृक्षारोपण किया गया। जबकि मध्यम प्रभावित क्षेत्रों में 1.0×3.0 मीटर की दूरी पर ब्लॉक वृक्षारोपण अपनाया गया। गंभीर रूप से प्रभावित क्षेत्रों में पौधरोपण का कोई निश्चित स्वरूप नहीं पाया गया। इन परिस्थितियों में सीमांत और ब्लॉक दोनों प्रकार के मॉडल अपनाए गए। ब्लॉक वृक्षारोपण में 1.5×3.0 मीटर, 1.5×4.0 मीटर या 1.5×6.0 मीटर की दूरी रखी गई। जबकि सीमांत मॉडल में 1.5 मीटर एकल पंक्ति और पट्टी वृक्षारोपण 1.5×2.0 मीटर (समानांतर पंक्तियां) या 1.5×1.5 मीटर में किया गया।

**क्षारीय जलभराव क्षेत्रों में जैव जल निकासी मॉडल से जुड़ी पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं**

पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं का कोई सर्वमान्य वर्गीकरण उपलब्ध नहीं है। सामान्यत: इन्हें मानव द्वारा पारिस्थितिकी तंत्र से प्राप्त लाभों के रूप में समझा जाता है। इन सेवाओं को चार प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है: प्रदाय, विनियमन, समर्थन और सांस्कृतिक। जलभराव से ग्रस्त लवणीय मृदा पर वृक्ष-आधारित जैव उपचार मॉडल आहार, चारा, ईंधन और आय सहित कई लाभ प्रदान करते हैं। पत्तियों और जड़ों के अपघटन के माध्यम से, ये मॉडल मृदा स्वास्थ्य में सुधार कर कार्बन को अवशोषित करते हैं। स्थानीय जलवायु को संतुलित और भूदृश्य सौंदर्य को बढ़ाते हैं। ये वृक्ष-आधारित भूमि उपयोग द्वारा प्रदान की जाने वाली पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं की एक व्यापक श्रेणी का हिस्सा हैं।

वृक्षारोपण मॉडल लाभकारी

जल ठहराव के साथ सीमा पर सफेदा

**प्रदाय सेवाएं**

क्षारीय जलभराव क्षेत्रों में वृक्षारोपण आहार, चारा, ईंधन, रेशा और लकड़ी जैसी सेवाएं प्रदान करते हैं। सफेदा आधारित वृक्षारोपण मॉडल से 28.65 टन/हैक्टर लकड़ी और 1.84

## सांस्कृतिक सेवाएं

सांस्कृतिक पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं, जैसे आध्यात्मिक, संज्ञानात्मक, मनोरंजक और सौंदर्यात्मक अनुभव, व्यापक रूप से स्वीकार की जाती हैं। इनका मात्रात्मक मूल्यांकन करना अक्सर कठिन होता है। हरियाणा के क्षारीय जल-जमाव प्रभावित क्षेत्रों में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि वृक्ष-आधारित भूमि उपयोग प्रणालियों ने सौंदर्य और सामाजिक मनोरंजन जैसी सांस्कृतिक सेवाओं में सर्वाधिक योगदान दिया, जबकि परती भूमि में इन सेवाओं का योगदान न्यूनतम था। इसी प्रकार अल्जीरिया के शहरी क्षेत्रों में जैव जल निकासी वृक्षारोपण से प्राप्त मनोरंजन और विश्राम संबंधी लाभों की पुष्टि की गई। सांस्कृतिक सेवाएं अपेक्षाकृत कम प्रभावित स्थलों पर सफेदा आधारित मॉडल में अधिक पाई गईं, जबकि अत्यधिक प्रभावित स्थलों पर एकल वृक्ष में ये सेवाएं प्रदान कर पाए। इन तथ्यों के बावजूद, सांस्कृतिक सेवाएं अभी भी उपलब्ध साहित्य में सीमित रूप से प्रतिनिधित्व कर पाती हैं। इससे इस क्षेत्र में और अधिक शोध एवं गहन विश्लेषण की आवश्यकता है।

## जैव जल निकासी से बदलता स्वरूप

लवणीय और जलभराव से प्रभावित मृदा, विशेष रूप से अपर्याप्त निकास वाली अंतर्देशीय सिंचित क्षेत्रों में, कृषि की स्थिरता के लिए एक गंभीर चुनौती प्रस्तुत करती है। इस समस्या के समाधान हेतु जैव-निकासी (बायोड्रेनेज) जिसमें गहरी जड़ वाली वृक्ष प्रजातियों का उपयोग वाष्पोत्सर्जन के माध्यम से अतिरिक्त जल को हटाने के लिए किया जाता है, एक किफायती एवं पर्यावरण अनुकूल विकल्प है। वृक्ष-आधारित जैव निकासी मॉडल न केवल भूमि सुधार में सहायक होते हैं, बल्कि ये विविध पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं जैसे कि प्रदाय, विनियमन, समर्थन और सांस्कृतिक सेवाएं भी प्रदान करते हैं। विशेषकर मध्यम रूप से प्रभावित क्षेत्रों में विकसित सफेदा आधारित मॉडल ने उच्च बायोमास उत्पादन और पारिस्थितिक लाभ प्रदर्शित किए हैं। हालांकि, इन प्रणालियों के सांस्कृतिक और सामाजिक पहलुओं पर अनुसंधान अपेक्षाकृत सीमित है। भविष्य में प्रयासों को समग्र पारिस्थितिकी तंत्र मूल्यांकन, समुदाय की भागीदारी और स्थल-विशिष्ट प्रजाति चयन को प्राथमिकता देनी चाहिए। इससे इन मॉडलों की स्थिरता और स्वीकृति में वृद्धि हो सकेगी तथा लवणीय जलभराव भू-दृश्यों के प्रबंधन को प्रभावी बनाया जा सकेगा।

खेत की सीमा पर सफेदा वृक्ष

टन/हैक्टर ईंधन प्राप्त हुआ। कुल बायोमास (जड़ और जमीन के ऊपर) 102-186 टन/हैक्टर पाया गया, जो अन्य प्रजातियों से अधिक था। हरियाणा में मध्यम प्रभावित क्षेत्रों में 30 टन/हैक्टर बायोमास प्राप्त हुआ, जो कम और गंभीर रूप से प्रभावित क्षेत्रों की तुलना में 62.3 प्रतिशत और 84.5 प्रतिशत अधिक था।

**विनियमन सेवाएं**

जैव जल निकासी हेतु रोपे गए वृक्ष जलवायु परिवर्तन के शमन विशेषकर कार्बन स्थिरीकरण और भूजल स्तर के विनियमन के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सफेदा द्वारा 10 वर्षों में प्रति हैक्टर 3.30 से 11.5 टन कार्बन/वर्ष स्थिर किया गया, जबकि सफेदा ने लवणीय जलभराव मृदा पर 5 वर्षों में 15.5 टन कार्बन/हैक्टर एकत्र किया। जलभराव मृदा पर अपनाई कृषि वानिकी प्रणालियों ने 15.82 टन कार्बन/हैक्टर तथा 58.03 टन कार्बन/हैक्टर का स्थिरीकरण हुआ, जबकि बायो-सलाइन प्रणालियों द्वारा 6 टन कार्बन डाइऑक्साइड ($CO_2$) समतुल्य/हैक्टर कार्बन को ग्रहण किया।

वृक्षारोपण के अंतर्गत भूजल स्तर में 15.7 मीटर तक की कमी दर्ज की गई, जबकि ब्लैक वेटल एवं केजुरिना वृक्षारोपण प्रणालियों ने 3.2 मीटर तक जलस्तर को घटाया। इसके अतिरिक्त, वृक्षों की छाया स्थानीय सूक्ष्म जलवायु को नियंत्रित करती है। इससे ग्रीष्म ऋतु में तापमान 2 से 4 डिग्री सेल्सियस तक कम होता है और शीत ऋतु में थोड़ा बढ़ता है।

अनुसंधान से ज्ञात हुआ कि शीशम एवं केजुरिना जैसी वृक्ष प्रजातियां पत्तियों के बेहतर अपघटन के माध्यम से मृदा में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम जैसे पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाती हैं। यह भी बताया गया कि इन क्षेत्रों में विकसित बायो-रीमेडिएशन मॉडल ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने में सहायक होते हैं।

रिपोर्ट के अनुसार, मध्यम रूप से लवणीय जलभराव क्षेत्रों में विकसित यूकेलिप्टस आधारित बायो-रीमेडिएशन मॉडल ने अधिक कार्बन भंडारण, बेहतर कार्बन स्थिरीकरण तथा वायु और मृदा तापमान के नियंत्रण जैसी श्रेष्ठ नियामक सेवाएं प्रदान की। उन्होंने यह भी पाया गया कि वृक्षों की छाया के अंतर्गत ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम हुआ, जिसमें कार्बन डाइऑक्साइड का सबसे न्यूनतम फ्लक्स मध्यम प्रभावित क्षेत्रों में यूकेलिप्टस मॉडल के तहत देखा गया।

नाइट्रस ऑक्साइड का सबसे कम फ्लक्स गंभीर रूप से प्रभावित क्षेत्रों में एकल वृक्ष आधारित मॉडल में तथा मीथेन का सबसे कम फ्लक्स कम प्रभावित क्षेत्रों के यूकेलिप्टस मॉडल में देखा गया।

मृदा के गुणों पर भी इन मॉडलों का सकारात्मक प्रभाव देखा गया। कम प्रभावित क्षेत्रों में मृदा गुण अपेक्षाकृत बेहतर थे, जबकि लवणता और जलभराव बढ़ने के साथ गुणों में कमी देखी गई। ईसीई मान अधिकतर एकल वृक्ष आधारित मॉडल के अंतर्गत शीर्ष मृदा (0-15 सें.मी.) में अधिक पाया गया।

जलभराव वाली लवणीय मृदा में ब्लॉक में सफेदा वृक्ष

मृदा कार्बनिक कार्बन की मात्रा सबसे अधिक यूकेलिप्टस (बाउंड्री) वृक्षारोपण मॉडल के तहत कम प्रभावित क्षेत्रों में (0.33 प्रतिशत) तथा ब्लॉक वृक्षारोपण मॉडल के अंतर्गत मध्यम प्रभावित क्षेत्रों में देखी गई। उपलब्ध नाइट्रोजन और पोटेशियम की मात्रा सामान्यत: कम पाई गई, जबकि फॉस्फोरस मध्यम स्तर पर रहा। मृदा में माइक्रोबियल बायोमास कार्बन की मात्रा मध्यम प्रभावित क्षेत्रों के यूकेलिप्टस आधारित मॉडल में अधिक पाई गई, जबकि कम प्रभावित एवं गंभीर रूप से प्रभावित क्षेत्रों के मॉडल में यह कम रही।

**समर्थनकारी सेवाएं**

लवणीय जलभराव वाले क्षेत्रों में जैव विविधता अध्ययन सीमित हैं। यह सर्वविदित है कि ऐसे क्षेत्रों में वृक्षारोपण प्रमुख पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं का समर्थन करता है। भाकृअनुप-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा किए गए अध्ययन में सफेदा आधारित मॉडल में शैनन-वीनर सूचकांक और सिम्पसन सूचकांक के मान अधिक पाए गए। सफेदा सभी क्षेत्रों में प्रमुख प्रजाति रहा। इससे कुल बेसल क्षेत्र का 93 प्रतिशत, 67 प्रतिशत, और 82 प्रतिशत योगदान था।

परती जलभराव वाला खेत

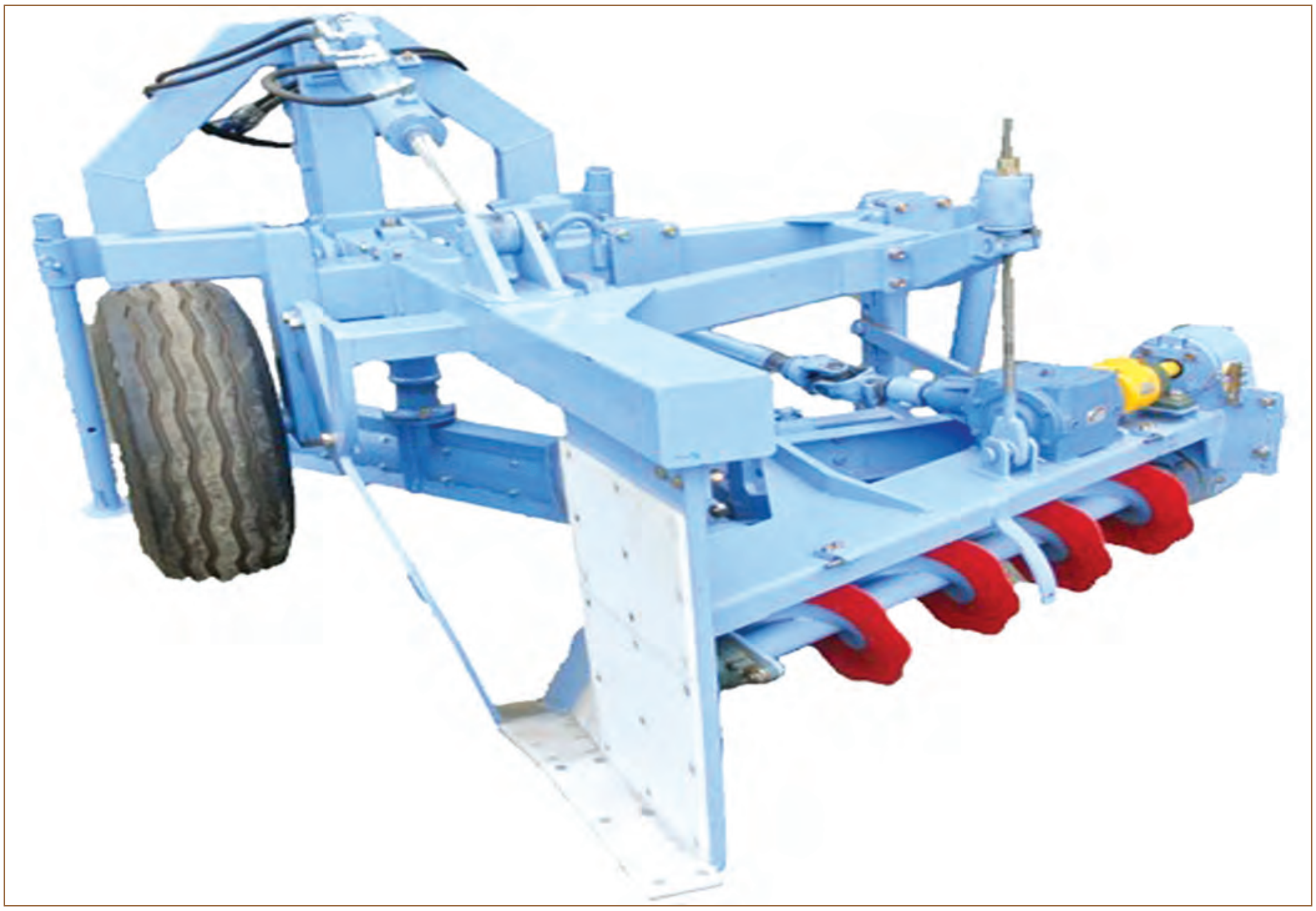

# कट-सॉइलर तकनीक द्वारा सरसों-बाजरा की उपज में वृद्धि

**गजेंद्र यादव[1], नेहा[1,2,3], राजेन्द्र कुमार यादव[1], अरविन्द कुमार राय[1], गोविन्द प्रसाद[1]** और **जून्या ओनिशी[2]**

"लवणता एक वैश्विक समस्या है, जो भूमि की फसल उत्पादन क्षमता के लिए बड़ी चुनौती बनती जा रही है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2050 तक कृषि योग्य भूमि का लगभग 50 प्रतिशत भाग लवणता से प्रभावित हो सकता है। लवणता प्रभावित मृदा शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में एक गंभीर पारिस्थितिक समस्या है। भारत में लवण प्रभावित भूमि का क्षेत्र लगभग 6.7 मिलियन हैक्टर तथा 32-84 प्रतिशत भूमिगत जल संसाधन निम्न गुणवत्ता के पाए जाते हैं। लवणता प्रभावित मृदा के कारण भारत को प्रतिवर्ष 1.68 करोड़ टन कृषि उत्पादन का नुकसान होता है, जिसका मूल्य 230.2 अरब रुपये है। विशेष रूप से शुष्क क्षेत्रों में लवणता प्रबंधन के लिए, एक खेत के स्तर पर प्रयुक्त होने वाली तकनीक की आवश्यकता है, जिसे विशिष्ट खेत/किसान स्तर पर अपनाया जा सके। भाकृअनुप-जिरकास-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, संयुक्त अनुसंधान परियोजना के तहत शुष्क क्षेत्रों में कम लागत पर मृदा लवणता सुधार के लिए जापान से कट-सॉइलर मशीन भारत में उपयोग के लिए लायी गई है। यह तकनीक भारत में लवण प्रभावित मृदा एवं जल भराव प्रबंधन में एक कारगर तकनीक साबित हो सकती है। कट-सॉइलर मशीन एक ऐसी मशीन है, जो 'वी'-आकार में मृदा की सतह को काटकर ऊपर उठाती है। इसके बाद यह कट किए हुए चैनल को मृदा के साथ सतह पर बिखरे भूसे और फसल अवशेषों द्वारा खुली हुई उप-सतह (40-60 सें.मी.) को भर देती है। कट-सॉइलर द्वारा बनाई गयी पंक्तियां जल प्रवाह के लिए जल निकासी चैनलों के रूप में काम करती हैं। इस प्रकार सतही जलभराव कम होता है और मृदा लवणता के प्रभावी प्रबंधन में सहायता मिलती है।"

[1]भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल; [2]जापान अंतर्राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान केन्द्र, जापान; [3]चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

कट-सॉइलर मशीन खेतों में चलते समय बिखरे हुए भूसे, अवशेषों या बचे हुए तनों जैसी सामग्रियों का प्रभावी उपयोग और प्रबंधन करती है। कट-सॉइलर 'वी'-आकार में मृदा को काटती है और एक ही समय में इसे ऊपर उठाती है तथा सतह की सामग्रियों को एकत्रित कर लगभग 60 सें.मी. गहराई पर निर्मित कट-सॉइलर पंक्ति में भर देती है।

जापान इंटरनेशनल रिसर्च सेंटर फॉर एग्रीकल्चरल साइंसेज (एचआरसीएएस) भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान (भाकृअनुप-सीएसएसआरआई) संयुक्त अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत लवणीय मृदा एवं सिंचाई जल के प्रबंधन में कट-सॉइलर की उपयोगिता और इसके फसल उत्पादन पर प्रभाव का मूल्यांकन किया जा रहा है। इस प्रयोग में दो प्रकार की लवणीय एवं सामान्य (भारी बनावट) मृदा में तीन गुणवत्ता के लवणीय सिंचाई जल (4 डेसी. /मी. ए 8 डेसी./मी.ए 12 डेसी./मी.) के उपयोग का आंकलन सरसों-बाजरा फसलचक्र के उत्पादन तथा लवणता एवं जल प्रबंधन में किया जा रहा है।

अध्ययन में एक वर्ष में कट-सॉइलर द्वारा निर्मित उप-सतही जल निकास चैनलों द्वारा जल एवं लवण निकास से मृदा लवणता (ईसी) में 19 प्रतिशत तक की कमी दर्ज की गयी। लवणीय मृदा एवं सामान्य मृदा लवणता (ईसी) में यह कमी क्रमशः (5.07 डेसी./मी.) तथा (1.39 डेसी./मी.) थी। विभिन्न प्रकार के लवणीय सिंचाई जल (12 डेसी./मी.ए 8 डेसी./मी.ए 4 डेसी./मी.) उपयोग से मृदा लवणता क्रमशः (3.6, 2.96 एवं 2.74 डेसी./मी.) पाई गई। इस लवणता में कमी के कारण पहले वर्ष में सरसों की उपज में मामूली वृद्धि हुई और बाजरा के उत्पादन में 18.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

अतः निम्न गुणवत्ता प्रभावित क्षेत्रों में स्थायी फसल उत्पादन के लिए लवणीय मृदा एवं सिंचाई जल के उपयोग से होने वाले लवण संचय को रोकने के लिए कट-सॉइलर आधारित उप-सतह जल निकासी तकनीक प्रभावी समाधान हो सकता है। इस परियोजना

प्रयोग से उत्पादित बाजरा

## प्रयोग तकनीक

वर्तमान में यह अध्ययन केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा के अनुसंधान प्रक्षेत्र (29°42' उत्तर और 76°57' पूर्व) में अर्द्ध नियंत्रित लाइसीमीटर सुविधा में किया जा रहा है। इसमें कट-सॉइलर आधारित ('वी') आकार जल निकासी की तरह अनुकरण के लिए 24 लाइसीमीटर में से कट-सॉइलर को 12 लाइसीमीटर (2×2 वर्गमीटर) में प्रयुक्त किया गया। इसके साथ-साथ अन्य 12 लाइसीमीटर में नियंत्रण (बिना कट-सॉइलर के) के रूप में प्रयुक्त किया गया। कट-सॉइलर और नियंत्रण दोनों उपचार में दो प्रकार की मृदा (प्रत्येक 6 लाइसीमीटर) यानी रेतीली दोमट लवणीय और भारी बनावट वाली सामान्य मृदा ली गयी। इन प्रत्येक 6 लाइसीमीटर में तीन लवणीय जल के सिंचाई उपचार 4, 8 और 12 डेसी./मी. लागू किए गए। वर्ष 2018-2019 के दौरान सरसों (वीएआर 58) और बाजरा (वीएआर 197) फसलों की वृद्धि और पैदावार प्रतिक्रिया के लिए परीक्षण किया गया।

कट-सॉइलर क्रियान्वन की विधि

स्वस्थ उत्पादन

फसल में लाइसीमीटर का उपयोग

के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

- लवणीय मृदा एवं सिंचाई जल के प्रबंधन में कट–सॉइलर की उपयोगिता का मूल्यांकन करना।
- कट–सॉइलर द्वारा लवणीय मृदा एवं सिंचाई जल के प्रबंधन का सरसों-बाजरा फसल उत्पादन पर प्रभाव

**परिणाम**

एक वर्ष के बाद कट–सॉइलर द्वारा निर्मित उप-सतही जल निकास चैनलों द्वारा जल एवं लवण निकास से मृदा लवणता (ईसी) में 19 प्रतिशत तक की कमी दर्ज की गयी। लवणीय मृदा एवं सामान्य मृदा की लवणता (ईसी) में यह कमी क्रमशः 5.07 डेसी./मी. तथा 1.39 डेसी./मी. आंकी गयी। विभिन्न प्रकार के लवणीय सिंचाई जल (12 डेसी./मी., 8 डेसी./मी., 4 डेसी./मी.) प्रयोग से मृदा लवणता क्रमशः 3.6, 2.96 एवं 2.74 डेसी./मी. पाई गयी।

सरसों की उपज कट–सॉइलर उपचार में (3.13 टन/हैक्टर प्राप्त हुई) जो नियंत्रण (बिना कट–सॉइलर के 3.02 टन/हैक्टर) की तुलना में 3.51 प्रतिशत अधिक पाई गयी। बाजरा की उपज कट–सॉइलर उपचार में (3.76 टन/हैक्टर) बिना कट–सॉइलर उपचार (3.06 टन/हैक्टर) की तुलना में अधिक (18.61 प्रतिशत पी=0.048) दर्ज की गयी। इससे पहले मृदा की लवणता में कमी और मृदा की जल निकासी में सुधार करके कपास की उपज में सुधार का प्रयोग किया जा चुका है।

सरसों की उपज लवणीय मृदा उपचार (2.75 टन/हैक्टर) की तुलना में बिना लवणीय भारी बनावट वाली मृदा (3.4 टन/हैक्टर) में अधिक थी। पहले वर्ष में सरसों की उपज में मामूली वृद्धि हुई और बाजरा के उत्पादन में 18.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई। बाजरा उपज में विभिन्न प्रकार के लवणीय सिंचाई जल की मात्रा क्रमशः 4, 8 और 12 डेसी./मी. में 3.87 से घटकर 3.41 टन/हैक्टर और 2.96 टन/हैक्टर प्राप्त की गई।

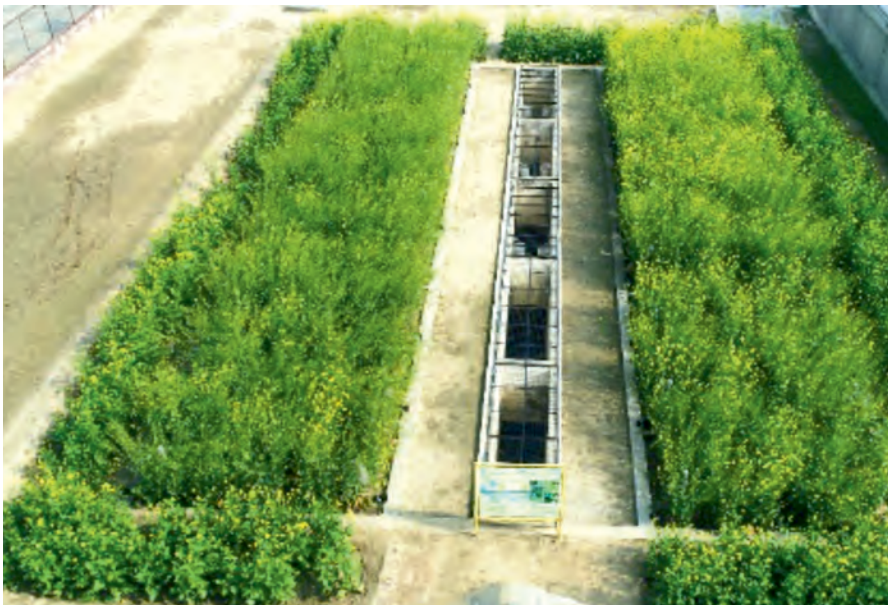

सरसों की स्वस्थ फसल

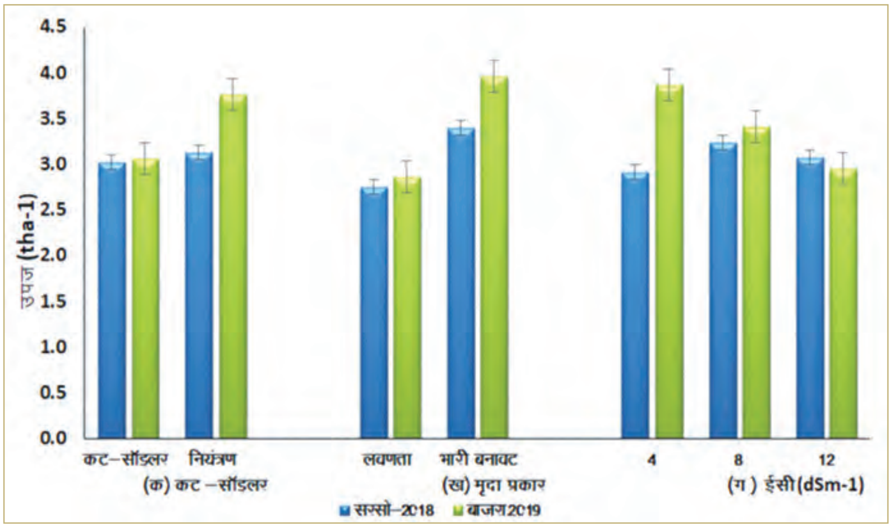


विभिन्न उपचारों (क) कट–सॉइलर (ख) मृदा प्रकार (ग) लवणीय सिंचाई जल ईसी (डेसी./मी)में सरसों (2018–19) एवं बाजरा (2019) की उपज (टन/हैक्टर)

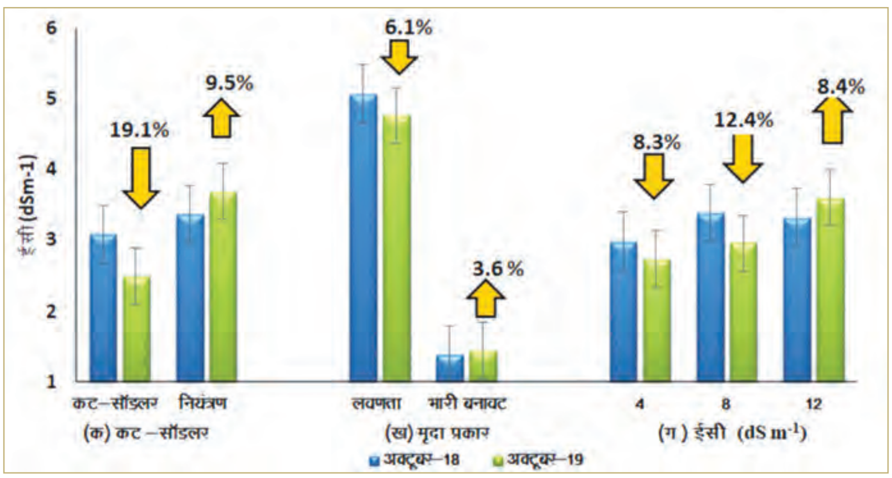


मृदा लवणता में परिवर्तन ईसी (डेसी./मी.) (क) कट–सॉइलर (ख) मृदाप्रकार (ग) लवणीय सिंचाई जल ईसी (डेसी./मी.) अक्टूबर-2018 से अक्टूबर-2019

फसल अवशेष से भरी कट–सॉइलर निर्मित उप-सतही जल निकासी के परिणामस्वरूप सतही मृदा में लगभग 19 प्रतिशत लवणता कम मापी गयी। कम लवणता के कारण सरसों (3.5 प्रतिशत) और बाजरे (18.6 प्रतिशत) की पैदावार में वृद्धि हुई। यह दर्शाता है कि लवण संचय को रोकने के लिए कट–सॉइलर आधारित उप सतही जल निकासी एक संभावित एवं प्रभावी समाधान हो सकता है। इस तकनीक को एक ही ऑपरेशन में व्यक्तिगत खेत स्तर पर भी अपनाया जा सकता है। निम्न गुणवत्ता वाले भूजल से प्रभावित शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में स्थायी फसल उत्पादन सुनिश्चित करने के लिए, लवणीय मृदा एवं सिंचाई जल से होने वाले लवण संचय को रोकने के लिए कट–सॉइलर आधारित उप-सतही जल निकासी तकनीक प्रभावी समाधान हो सकता है।

# जलवायु स्मार्ट पोषक फसल किनोवा

**कैलाश प्रजापत, सतीश कुमार सनवाल, राम किशोर फगोड़िया, सुरेश कुमार** और **अनिल कुमार**

"किनोवा *(चिनोपोडियम किनोवा)* एक ऐसी फसल है, जो तनावग्रस्त वातावरण जैसे सूखा, लवणता, क्षारीयता पाला पड़नो जैसी प्रतिकूलताओं से सहिष्णु है। यह अमारैन्थेसी कुल के चिनोपोडियसी उपकुल की फसल है। इस कुल की सब्जियां जैसे-बथुआ एवं चौलाई भारत में लोकप्रिय हरी सब्जियां हैं। किनोवा दक्षिणी अमेरिका के बोलिविया, पेरू एवं इक्वाडोर जैसे देशों की मुख्य खाद्य फसल है। इसे समुद्र तल से लेकर 2000-4000 मीटर की ऊंचाई तक उगाया जा सकता है। अपनी अनेक विशेषताओं के बावजूद किनोवा को भारत में अभी तक एक कम उपयोगी फसल माना जाता है। किनोवा के लिए उपयुक्त जलवायु के अनुसार इसे भारत में सर्द ऋतु (अक्टूबर से मार्च) में उगाया जा सकता है। वर्तमान में आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र एवं राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में किसान इसका उत्पादन कर रहे हैं। भारत का किनोवा बाजार वर्ष 2023 में लगभग 77,580 टन तक आंका गया। भविष्य में उम्मीद है कि यह बाजार वर्ष 2032 तक यह बढ़कर 469,322 टन तक पहुंच जाएगा, जो वर्ष 2024-2032 के दौरान 21.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर को दर्शाता है।"

देश में 6.73 मिलियन हैक्टर कुल लवण प्रभावित क्षेत्र में से 2.96 मिलियन हैक्टर अत्यधिक लवणता से ग्रसित है जहां पैदावार बहुत कम से लेकर लगभग शून्य होती है। इसके साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में 32-84 प्रतिशत भूजल भी निम्न गुणवत्ता का है।

कुल लवणता ग्रस्त क्षेत्र का लगभग 60 प्रतिशत क्षेत्र वर्षा आधारित एवं शुष्क खेती के अन्तर्गत आता है। बदलते हुए जलवायु परिवेश में इन क्षेत्रों में फसल उत्पादन और अधिक चुनौतीपूर्ण हो रहा है। आंशिक एवं मध्यम लवणीय मृदा में फसल उपज में काफी हानि होती है, जबकि अत्यधिक लवणीय मृदा में जहां सिचाई जल भी अधिक लवणीय होता है, प्राय: खेती संभव नहीं हो पाती और उन्हें बंजर छोड़ दिया जाता है।

लवणता ग्रस्त मृदा के उचित सुधार

किनोवा के दाने

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001 (हरियाणा)

एवं कुशल प्रबंधन को अपनाकर इस नुकसान को कम किया जा सकता है। इसके साथ ही इन क्षेत्रों के किसानों की आजीविका एवं जीवन स्तर में भी सुधार किया जा सकता है। संसाधन की कमी वाली सीमांत भूमि में एक और चिंता का विषय इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में छिपी हुई भूख (सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी और प्रोटीन कुपोषण) है। भारत में 46.6 मिलियन अविकसित बच्चे हैं, जो वैश्विक पोषण रिपोर्ट वर्ष 2018 के अनुसार दुनिया के कुल बच्चों का एक तिहाई हैं।

भारत में 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्यु का लगभग आधा हिस्सा कुपोषण के कारण है। बढ़ती हुई जनसंख्या का भरण-पोषण करने और कुपोषण से निपटने के लिए इन निम्नीकृत भूमि को ऐसी फसलों के माध्यम से खेती के उपयोग में लाया जाना चाहिए जो ऐसी भूमि पर उग सकें और पोषक तत्वों से भरपूर हों।

किनोवा इसी प्रकार की एक खाद्य वार्षिक बीज फसल है, जो अपनी प्रोटीन सामग्री और उच्च लवणता सहनशीलता के लिए प्रसिद्ध है। इसे क्विनोआ, किनुआ आदि नामों से भी जाना जाता है।

**पोषण से भरपूर**

किनोवा मुख्य रूप से इसके दानों के लिए उगाई जाती है। किनोवा के दाने अन्य फसलों की तुलना में अत्यधिक पौष्टिक होते हैं। इसके बीज को अनाज के रूप में उपयोग किया जा सकता है। यह प्रोटीन, आहार रेशा, पॉली-असंतृप्त वसा और खनिजों का एक समृद्ध स्त्रोत है। किनोवा की विविध

वानस्पतिक अवस्था में किनोवा

विशेषताओं के कारण खाद्य एवं कृषि संगठन ने वर्ष 2013 को 'अन्तर्राष्ट्रीय किनोवा वर्ष' के रूप में घोषित किया था।

किनोवा की प्रोटीन सामग्री विविधता, जलवायु और खेती के तरीकों के आधार पर 12-17 प्रतिशत तक पाई जाती है। यह धान (6-7 प्रतिशत), गेहूं (10-14 प्रतिशत) और जौ (8-14 प्रतिशत) की तुलना में कहीं अधिक है। धान और गेहूं जैसे अनाजों के प्रोटीन में अमीनो अम्ल लाइसिन की कमी होती है, जबकि दाल में मेथियोनीन प्रोटीन की कमी होती है। किनोवा प्रोटीन में लाइसिन और मेथियोनीन दोनों होते हैं और इसलिए इसे अक्सर पूर्ण प्रोटीन कहा जाता है।

इसके अतिरिक्त किनोवा में ग्लूटेन मुक्त प्रोटीन, कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स और 80 प्रतिशत तक की उच्च पाचन क्षमता होती है। इस प्रकार यह मधुमेह के रोगियों के लिए एक बहुत ही सुरक्षित आहार विकल्प बन जाता है।

किनोवा में तेल सामग्री 1.8 से 9.5 प्रतिशत और आवश्यक वसीय अम्ल में समृद्ध है। इसमें अल्फा टेकोकेरॉल (5.3 मि.ग्रा./100 ग्राम बीज), बीज टेकोकेरॉल (2.6 मि.ग्रा./100 ग्राम बीज), पॉलीफेनॉल्स और फाइटोएस्ट्रोजन जैसे प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट भी होते हैं, जो हृदय रोगों, ऑस्टियोपोरोसिस और स्तन कैंसर जैसे रोगों की रोकथाम में सहायक माने जाते हैं। अपनी उपरोक्त विशेषताओं के कारण किनोवा को सर्वाधिक स्वास्थ्यवर्धक एवं पौष्टिक खाद्य उत्पादों में सम्मिलित किया गया है।

इसके दानों को धान की तरह पकाकर खाया जा सकता है। इसमें ग्लूटेन की मात्रा नहीं होती, अत: यह ग्लूटेन से एलर्जी वाले लोगों के लिये अच्छा आहार है। इसके दानों का आटा बनाकर भी कई तरह के खाद्य उत्पाद जैसे-ब्रेड, पास्ता, केक, पेस्ट्री आदि बनाए जा सकते हैं। इन सब विशेषताओं के साथ किनोवा के दानों में अवांछित तत्व सेपोनीन भी पाया जाता है। यह दाने के बाहरी आवरण में होता है। मिलिंग द्वारा बाहरी आवरण को हटाया जाता है, जिससे सेपोनीन भी दानों से हट जाता है। इसके अलावा दानों को ठण्डे जल के साथ रगड़कर भी ऊपरी आवरण को हटाया जा सकता है।

किनोवा की पत्तियां पोषण से भरपूर

सारणी: किनोवा और प्रमुख अनाज फसलों के पोषक मूल्य का तुलनात्मक विश्लेषण

| पोषक तत्व | किनोवा | धान | गेहूं | मक्का |
|---|---|---|---|---|
| ऊर्जा (किलो कैलोरी/100 ग्राम) | 399 | 372 | 392 | 408 |
| कुल कार्बोहाइड्रेट (ग्राम/100 ग्राम) | 69 | 80.4 | 78.4 | 81.1 |
| प्रोटीन (ग्राम/100 ग्राम) | 16.5 | 7.6 | 14.3 | 10.2 |
| वसा (ग्राम/100 ग्राम) | 6.3 | 2.2 | 2.3 | 4.7 |
| **विटामिन (मि.ग्रा./100 ग्राम)** | | | | |
| थाइमीन | 0.2.0.4 | 0.06 | 0.45.0.49 | 0.42 |
| राइबोफ्लेविन | 0.2.0.3 | 0.06 | 0.17 | 0.1 |
| फोलिक अम्ल | 0.0781 | 0.02 | 0.078 | 0.026 |
| **खनिज पदार्थ (मि.ग्रा./100 ग्राम सूखा वजन)** | | | | |
| कैल्शियम | 148.7 | 6.9 | 50.3 | 17.1 |
| आयरन | 13.2 | 0.7 | 3.8 | 2.1 |
| **अमीनो अम्ल (ग्राम/100 ग्राम प्रोटीन)** | | | | |
| लाइसीन | 6.0 | 3.8 | 2.6 | 2.9 |
| मिथियोनीन | 5.3 | 3.3 | 3.7 | 4.0 |

होती हैं और पारंपरिक आहार में एक उत्तम सब्जी के रूप में उपयोग की जा सकती हैं। इनमें उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसमें लाइसिन और मेथियोनीन जैसे सभी आवश्यक अमीनो अम्ल मौजूद होते हैं, जो अन्य पत्तेदार सब्जियों में अक्सर कम मात्रा में पाए जाते हैं।

किनोवा की पत्तियां विटामिन का भी अच्छा स्रोत हैं, विशेष रूप से विटामिन 'सी' जो प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत करता है। इसमें फोलेट और राइबोफ्लेविन जैसे बी-कॉम्प्लेक्स विटामिन भी होते हैं। ये चयापचय और रक्त कोशिकाओं के निर्माण में सहायक होते हैं। खनिज तत्वों की दृष्टि से भी किनोवा की पत्तियां काफी पौष्टिक होती हैं। इनमें आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम और पोटेशियम जैसे तत्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं, जो रक्त निर्माण, हड्डियों की मजबूती और शरीर में जल संतुलन बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। इसके अतिरिक्त, इनमें आहार फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट्स भी होते हैं, जो पाचन स्वास्थ्य सुधारने के साथ-साथ सूजनरोधी और रोग प्रतिरोधक गुण प्रदान करते हैं।

परिपक्व अवस्था में किनोवा

**मुख्य कृषि क्रियाएं**

किनोवा के लिए अच्छी जल निकासी वाली, हल्की दोमट या रेतीली दोमट मृदा सबसे उपयुक्त है। किनोवा की खेती 15-20 डेसी साइमन/मी. लवणीय सिंचाई जल के साथ की जा सकती है।

उत्तर भारत की परिस्थितियों में 15-30 अक्तूबर के दौरान बुआई का उपयुक्त समय है। बीज की दर बुआई की परिस्थिति अनुसार बदलती है, जो 6 से 10 कि.ग्रा./हैक्टर तक होती है। इष्टतम पौध संख्या सुनिश्चित करने के लिए 8-10 कि.ग्रा./हैक्टर की बीज दर के साथ 30×10 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे की दूरी लवणीय परिस्थितियों के लिए उपयुक्त है।

बीज को 1-2 सें.मी. गहराई से अधिक नहीं बोना चाहिए अन्यथा अंकुरण कम हो जाता है। बीज को बुआई से पहले 6-8 घंटे के लिए जल में भिगोने के बाद छाया में सुखाने और नम मृदा में उथली गहराई में बुआई से उचित अंकुरण होता है।

नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश उर्वरकों की सिफारिश क्रमश: 80-120:40:40 कि.ग्रा./हैक्टर है। फॉस्फोरस और पोटेशियम की पूरी मात्रा बुआई के समय दी जाती है। नाइट्रोजन को तीन विभाजित खुराकों में बुआई के समय, बुआई के 30-35 दिनों बाद और बुआई के 60-70 दिनों बाद प्रयोग करना चाहिए।

फसल में बुआई के बाद 2-3 सिंचाई की आवश्यकता होती है। अंकुरण के समय मृदा में उचित नमी का स्तर होना आवश्यक है। सिंचाई बुआई के 30-35 दिनों बाद (पर्ण वृद्धि के समय), 60-70 दिनों बाद (फूल आने और प्रारंभिक बीज निर्माण के समय) और 100-120 दिनों बाद (बीज बनना और परिपक्वता चरण) पर की जानी चाहिए। यदि सिंचाई के लिए जल की कमी हो, तो सिंचाई बुआई के 30-35 दिनों बाद (पर्ण वृद्धि चरण) और बुआई के 70-80 दिनों बाद (प्रारंभिक बीज बनाना चरण) की जा सकती है।

किनोवा में कोई विशेष रोग एवं कीट नहीं लगते हैं। फरवरी में एफिड का प्रकोप होने पर सिफारिश अनुसार जैविक अथवा रासायनिक कीटनाशक का उपयोग कर सकते हैं।

## लाभ

- किनोवा में सभी नौ प्रकार के आवश्यक अमीनो अम्ल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होतें हैं। इन गुणवत्तायुक्त संपूर्ण प्रोटीन का शाकाहारी लोगों के लिए आहार में विशेष महत्व है।
- किनोवा में रेशे प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। रेशे रक्त में शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने, कोलेस्ट्रॉल को कम करने एवं शरीर का वजन नियंत्रित करने में सहायक होते हैं।
- किनोवा प्राकतिक रूप से ग्लूटेन रहित होता है। यह ग्लूटेन के प्रति एलर्जी वाले लोगों के लिए पूरी तरह सुरक्षित है।
- किनोवा के दानों में बेहद कम मात्रा में 'ग्लाइसेमिक इंडेक्स' (लगभग 53) होता है। अत: मधुमेह, हृदय रोग एवं मोटापे से बचाता है। कार्बोहाइड्रेट की अधिकता उन लोगों के लिए इतनी उपयोगी नहीं होती है, जिन्हें कम कार्बोहाइड्रेट वाला आहार लेना होता है।
- किनोवा कैल्शियम, पोटेशियम, आयरन, जिंक, फॉस्फोरस, मैंग्नीज, मैग्नीशियम एवं कॉपर का उत्तम स्रोत है। इसके दानों में विटामिन 'बी' एवं 'ई' भी पर्याप्त मात्रा में मौजूद होते हैं। कुछ मात्रा में ओमेगा 3 फैटी एसिड भी पाया जाता है।
- इसमें 'क्वेसेटिन' एवं 'केम्फेरॉल' नामक फ्लेवोनॉइड्स भी प्रचुर मात्रा में होते हैं। ये एंटी-बैक्टीरियल, एंटीऑक्सीडेंट, एंटी-वायरल एवं एंटी-कैंसर के रूप में बेहद लाभदायक हैं।

# लवणीय मृदा में चंदन की खेती

**राज कुमार, कमलेश वर्मा, अश्वनी कुमार, मनीष कुमार, राकेश बन्याल, अवनी, अवतार सिंह, राम किशोर फागोड़िया** और **अजय भारद्वाज**

"चंदन की सुगंधित अंत: काष्ठ (हर्टवुड) और तेल की निरंतर बढ़ती अंतर्राष्ट्रीय मांग इसे किसानों की आय बढ़ाने एवं लवणीय मृदा के पुन:उत्पादन का एक संभावनाशील विकल्प बनाती है। चंदन एक अर्द्ध परजीवी पौधा है। इसके कारण इसकी खेती लवणीय और क्षरणग्रस्त मृदा में विशिष्ट चुनौतियां प्रस्तुत करती है। ऐसी परिस्थितियों में चंदन आवश्यक पोषक तत्वों और जल की आपूर्ति के लिए मेजबान पौधों पर निर्भर रहता है। अत: चंदन रोपण की सफलता के लिए उपयुक्त मेजबान प्रजातियों का चयन अत्यंत आवश्यक है। चंदन की खेती की व्यापक स्वीकृति और उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए, इसकी खेती और प्रबंधन पद्धतियों का मानकीकरण अत्यंत आवश्यक है। यह लेख चंदन की खेती में रुचि रखने वाले कृषकों एवं अन्य हितधारकों को लवणीय मृदा में इसकी व्यावहारिक संभावनाओं, तकनीकी उपायों और क्षेत्र आधारित रणनीतियों की समग्र जानकारी प्रदान करता है। इसमें उपयुक्त मेजबान पौधों का चयन, रोपण प्रबंधन, मृदा संशोधन, सिंचाई तकनीक और आर्थिक लाभप्रदता जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं की विस्तार से जानकारी दी गई है।"

वर्तमान में कृषि क्षेत्र भूमि क्षरण, घटती मृदा उर्वरता, जलवायु परिवर्तन, बाजार में अनिश्चितता और वित्तीय एवं नीतिगत समर्थन की कमी जैसी गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है। इन कठिनाइयों को लवणता और सूखे जैसी अजैविक विपत्तियां और भी अधिक बढ़ा देती हैं। इससे कृषि उत्पादकता और आय दोनों पर गंभीर प्रभाव पड़ता है।

कृषि वानिकी प्रणाली आधारित भूमि उपयोग प्रणालियां वर्तमान में इन समस्याओं के समाधान के रूप में उभर रही हैं। यह मृदा स्वास्थ्य सुधारने, जलवायु अनुकूलता बढ़ाने और किसानों के लिए आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001

## दीर्घकालिक लाभ

लवणता प्रभावित मृदा में चंदन की खेती न केवल संभव है, बल्कि उचित प्रबंधन विधियों के सहयोग से आर्थिक रूप से भी लाभकारी सिद्ध होती है। यदि किसान उपयुक्त पोषक पौधों का चयन करें, मृदा सुधार तकनीकों को अपनाएं, तथा प्रभावी सिंचाई एवं पोषण प्रबंधन रणनीतियां लागू करें, तो वे लवणीय भूमि में भी सफलतापूर्वक चंदन के बागान स्थापित कर सकते हैं। चंदन का कृषि वानिकी प्रणालियों में समावेश सतत कृषि को बढ़ावा देता है, क्योंकि इससे मृदा की गुणवत्ता में सुधार होता है। अंतरवर्ती फसलों से अतिरिक्त आय प्राप्त होती है और दीर्घकालिक आर्थिक लाभ सुनिश्चित होते हैं। वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित कृषि वानिकी मॉडल तथा श्रेष्ठ प्रबंधन प्रथाओं को अपनाकर किसान लवणीय मृदा को पुनर्स्थापित कर सकते हैं और एक लाभकारी एवं सतत वानिकी-आधारित अर्थव्यवस्था में योगदान दे सकते हैं।

चंदन सह नीम पौधरोपण

करने में मददगार सिद्ध हो रही हैं। चंदन (सैंटलम एलबम) एक बहुमूल्य वृक्ष प्रजाति है, जो कृषकों को दीर्घकालिक आर्थिक लाभ प्रदान करने में सक्षम है।

वर्ष 1960-70 के दशक में भारत विश्व स्तर पर चंदन की मांग पूरी करने वाला प्रमुख उत्पादक देश था। किंतु प्राकृतिक वनों से अवैध कटाई और तस्करी के कारण भारत सरकार ने चंदन कटाई पर प्रतिबंध लगा दिया। इससे मांग और आपूर्ति के बीच भारी अंतर आ गया। परिणामस्वरूप, भारत जो कभी चंदन तेल का निर्यातक था, अब आयातक बन गया है और ऑस्ट्रेलिया ने वैश्विक व्यापार में भारत को पीछे छोड़ दिया है।

## हरियाणा में चंदन की सफल खेती

हरियाणा में चंदन की खेती एक अत्यधिक लाभकारी कृषि पद्धति के रूप में तेजी से उभर रही है, जहां किसान अपनी आय के स्रोतों में विविधता लाने और उन्हें बढ़ाने की दिशा में गंभीर रूप से प्रयासरत हैं। चंदन की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए, भाकृअनुप-सीएसएसआरआई ने किसानों की भागीदारी के साथ चंदन-आधारित कृषि वानिकी मॉडल विकसित करने और प्रचारित करने की पहल की है। चंदन की खेती में रुचि रखने वाले किसान संस्थान से तकनीकी मार्गदर्शन प्राप्त कर रहे हैं और संस्थान द्वारा व्यक्तिगत प्राथमिकताओं एवं स्थल की विशेषताओं के अनुसार उपयुक्त चंदन आधारित कृषि वानिकी मॉडल की अनुशंसा कर किसानों के खेतों पर उनका क्रियान्वयन किया जा रहा है। संस्थान के मार्गदर्शन में अब तक 30 किसानों द्वारा चंदन आधारित कृषि वानिकी प्रणालियां अपनाई जा चुकी हैं। इसके अतिरिक्त, इन रोपणों की सफल स्थापना,वृद्धि तथा दीर्घकालिक स्थायित्व सुनिश्चित करने हेतु सतत तकनीकी सहायता प्रदान की जा रही है।

क्यारियों में चंदन वृक्षारोपण

### लवणीय भूमि में चंदन उत्पादन

चंदन में लगभग 9 डेसी सीमेंस प्रति मीटर तक की लवणता और 9.0 पी-एच मान तक की क्षारीयता को सहन करने की क्षमता पाई गई है। लवणता प्रभावित क्षेत्रों में चंदन की स्थापना और प्रारंभिक वृद्धि काफी हद तक इस पर निर्भर करती है कि उसके साथ लगाए गए मेजबान पौधे पोषक तत्वों की आपूर्ति में कितने सक्षम और अनुकूल हैं।

चंदन एक अर्द्ध-परजीवी वृक्ष है, जो विशेष जड़ संरचनाओं (हॉस्टोरिया) के माध्यम से अपने मेजबान पौधों से जल और पोषक तत्व प्राप्त करता है। अनुसंधानों से पता चला है कि शीशम, मालाबार नीम, कैसुरिना और नीम जैसे वृक्ष लवणीय मृदा में चंदन के लिए प्रभावी मेजबान के रूप में कार्य करते हैं। इसके साथ ही, प्रारंभिक अवस्था में सेस्बानिया ग्रांडिफ्लोरा जैसे नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले पौधों को शामिल करने से चंदन के पौधे के विकास में सुधार होता है।

उपयुक्त मेजबान प्रजातियों को मृदा और जल प्रबंधन विधियों के साथ

एकीकृत कर चंदन की खेती को लवणीय मृदा में लाभकारी एवं टिकाऊ बनाया जा सकता है।

**लवण प्रभावित मृदा उपयुक्त मेजबान प्रजातियां**

लवणीय मृदा में चंदन के पौधों के सफल विकास हेतु उपयुक्त मेजबान प्रजातियों का चयन अत्यंत आवश्यक है। चयनित पौधे न केवल लवणता सहन करने में सक्षम हों, बल्कि चंदन की जल एवं पोषक तत्वों की आवश्यकताओं की पूर्ति हॉस्टोरियल कनेक्शन के माध्यम से प्रभावी रूप से कर सकें।

नर्सरी स्थितियों में अल्टरनेथेरा, छुईमुई या अरहर जैसी अल्पकालिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाली वृक्ष प्रजातियां चंदन के प्रारंभिक विकास हेतु उपयुक्त मेजबान के रूप में कार्य करती हैं। विभिन्न क्षेत्रीय परिस्थितियों में कैसुरीना, नीम, मालाबार नीम तथा शीशम जैसी प्रजातियां चंदन के लिए उपयुक्त दीर्घकालिक मेजबान मानी जाती हैं।

चंदन सह कैसुरीना पौधरोपण

सारणी 1. चंदन आधारित कृषि वानिकी मॉडल

| मॉडल | घटक संयोजन |
|---|---|
| चंदन+पोषक वृक्ष कृषि वानिकी | चंदन+अल्पकालिक मेजबान (अरहर, अगस्ति, टेपफ्रोसिया); दीर्घकालिक मेजबान (कैसुरीना, नीम, मालाबार नीम और शीशम) |
| चंदन+बागवानी वृक्ष | चंदन+फल वृक्ष (आम, अमरूद, आंवला, अनार, कटहल); रोपण फसलें (सुपारी, कोको) |
| चंदन+औषधीय एवं सुगंधित पौधे | चंदन+एलोवेरा, अश्वगंधा, तुलसी, शतावरी, खस, लेमनग्रास, सिट्रोनेला |
| चंदन+इमारती वृक्ष | चंदन+इमारती वृक्ष (सागवान, महोगनी, गेमलिना, सिल्वर ओक) |
| चंदन+खाद्य फसलें (कृषि-वानिकी) | चंदन+दलहन (मूंग, उड़द, चना), अनाज (मक्का, बाजरा), तिलहन (मूंगफली, सरसों, सूरजमुखी) |
| चंदन+सब्जी फसलें | चंदन+सब्जियां (टमाटर, मिर्च, भिंडी) |
| चंदन+चारा फसलें (सिल्वोपास्टोरल) | चंदन+चारा घासें (नेपियर, बरसीम, लूर्सन) |

चंदन रोपण में पौधों के बीच की दूरी

इन प्रजातियों में विशेषकर शीशम, कैसुरीना और मालाबार नीम लवणीय मृदा में चंदन की वृद्धि एवं जीवित के लिए अत्यधिक अनुकूल सिद्ध हुई हैं।

कैसुरीना, एक नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाली वृक्ष प्रजाति है, जो मृदा संरचना को भी सुधारती है। चंदन की खेती में नीम और अनार जैसे मेजबान वृक्षों का उपयोग उनकी सूखा सहनशीलता और उच्च जैवभार उत्पादन क्षमताओं के कारण लाभकारी होता है। चंदन की लवण सहनशीलता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में मेजबान की लवण सहनशीलता, मेजबान के साथ अनुकूलता, चंदन की प्रजातियां (जीनोटाइप) और कृषि प्रबंधन प्रथाएं शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, मृदा एवं पत्तियों पर पोषक तत्वों का संतुलित छिड़काव चंदन वृक्षों की वृद्धि को प्रोत्साहित करता है और लवणीय तनाव को सहन करने की क्षमता में वृद्धि करता है।

**रोपण तकनीक और प्रबंधन**

**चंदन रोपण की विधियां**

रोपण से पूर्व भूमि की उचित तैयारी अत्यंत आवश्यक होती है। प्रारंभ में, स्थल से खरपतवार एवं अवशेष को पूरी तरह साफ किया जाना चाहिए। इसके बाद गहरी जुताई और फिर हैरोइंग (कल्टीवेशन) करने से मृदा के वायुसंचार एवं जल अवशोषण

में सुधार होता है। लवणीय क्षेत्रों में समुचित जल निकासी के लिए ऊंची क्यारियां तैयार करनी चाहिए।

चंदन एवं मेजबान पौधों के बीच उचित दूरी कई कारकों पर निर्भर करती है, जैसे मृदा की स्थिति, जलवायु एवं मेजबान प्रजातियों का प्रकार आदि। सामान्यत: चंदन की जड़ें 1.5 से 3.0 मीटर तक फैल सकती हैं, ताकि वह समीपवर्ती मेजबान पौधों से संबंध स्थापित कर सकें। न्यूनतम दूरी 15 फीट (पंक्ति से पंक्ति)×12 फीट (पौधे से पौधे) रखनी चाहिए, जबकि आदर्श दूरी 15×15 फीट होती है। यह पर्याप्त स्थान प्रदान करता है। इससे पौधे पोषक तत्वों एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा किए बिना अच्छी तरह विकसित हो सकते हैं।

मेजबान पौधे, जो चंदन को आवश्यक पोषण प्रदान करते हैं, उन्हें दो चंदन पौधों के बीच समान दूरी पर लगाना चाहिए, ताकि उनकी जड़ों के बीच संपर्क स्थापित हो सके और चंदन का अर्द्ध-परजीवी स्वभाव सक्रिय हो सके।

लवणता की स्थिति मेंलीचिंग सबसे प्रभावी विधि मानी जाती है। इसमें नियंत्रित सिंचाई के माध्यम से मृदा से अतिरिक्त लवणों को जड़ क्षेत्र से बाहर निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त आर्बस्कुलर माइकोराइजल कवक और नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणुओं जैसे माइक्रोबियल इनोकुलेंट्स का उपयोग मृदा की उर्वराशक्ति को बढ़ाता है। लवण तनाव के प्रति पौधों की सहनशीलता में सुधार करता है।

चंदन रोपण से पहले, मृदा की गहराई तक जुताई करके कठोर परतों को तोड़ना आवश्यक होता है। इसके बाद हैरो द्वारा मृदा को समतल और सूक्ष्म बनाना चाहिए। अच्छे जल निकास के लिए ऊंची क्यारियां या मेड़ों की व्यवस्था करनी चाहिए। भूमि की तैयारी के समय जैविक पदार्थ और आवश्यक संशोधक मिलाए जाते हैं। इससे चंदन की खेती के लिए उपजाऊ और अनुकूल वातावरण बनता है।

चंदन सह अमरूद पौधरोपण

चंदन एक अर्द्ध-परजीवी प्रजाति है। इसकी जीवित रहने की क्षमता एवं उत्पादकता मेजबान पौधों से हॉस्टोरियल संबंध स्थापित करने पर निर्भर करती है। इन संबंधों को अधिकतम करने के लिए मेजबान पौधों को चंदन के दोनों ओर लगाना चाहिए। यह व्यवस्था चंदन की जड़ों को मेजबान पौधों से प्रभावी ढंग से जुड़ने में सहायक बनाती है, जिससे उन्हें लवणीय एवं क्षरणग्रस्त मृदा में आवश्यक पोषक तत्व एवं जल प्राप्त हो सकें।

मेजबान प्रजातियों का चयन ध्यानपूर्वक करना चाहिए। प्रारंभिक अवस्थाओं में अल्टरनेथेरा अथवा अरहर जैसी अल्पकालिक नाइट्रोजन स्थिरक प्रजातियों का उपयोग करना चाहिए, जबकि दीर्घकालिक समर्थन के लिए कैसुरीना, नीम, मालाबार नीम और शीशम जैसी प्रजातियां उपयुक्त होती हैं। चंदन पौधों के बीच की दूरी के आधार पर, एक एकड़ भूमि में लगभग 200 से 230 पौधे लगाए जाते हैं।

सारणी 2. चंदन रोपण की निवेश एवं लागत विश्लेषण (प्रति एकड़)

| खर्च विवरण | अनुमानित लागत (रुपये प्रति एकड़) |
|---|---|
| भूमि की तैयारी एवं रोपण | 50,000–80,000 |
| 220 चंदन पौधों की खरीद | 25,000–30,000 |
| 220 मेजबान पौधों की व्यवस्था (सहायक पौधे) | 15,000–25,000 |
| सिंचाई एवं उर्वरक (12–15 वर्षों के लिए) | 80,000–1,20,000 |
| रखरखाव (निराई, छंटाई, सुरक्षा) | 2,00,000–3,00,000 |
| विविध एवं आकस्मिक व्यय | 50,000 |
| कुल अनुमानित लागत (12–15 वर्ष) | 4,20,000–6,05,000 |

### चंदन आधारित कृषि वानिकी मॉडल

चंदन को कृषि वानिकी प्रणालियों में एकीकृत करना विशेष रूप से लवण प्रभावित मृदा में एक सतत खेती का तरीका प्रदान करता है।

### चंदन खेती की लागत-लाभ समीक्षा (220 पौधे प्रति एकड़ के आधार पर)

चंदन की खेती किसानों के लिए अत्यंत लाभकारी अवसर प्रदान करती है। इसकी वैश्विक मांग लगातार बढ़ रही है और बाजार मूल्य बहुत अधिक है। चंदन खेती का लागत-लाभ विश्लेषण दर्शाता है कि यह एक दीर्घकालिक निवेश होते हुए भी परिपक्वता के समय अत्यधिक मुनाफा प्रदान करता है। अन्त: काष्ठ (हर्टवुड) का निर्माण 10-12 वर्षों की आयु के बाद आरंभ होता है। इसलिए इसकी खेती धैर्य एवं प्रबंधन की मांग करती है। कृषि वानिकी मॉडल, अंतरवर्ती फसलों तथा प्रभावी सिल्वीकल्चरल प्रथाओं को अपनाकर किसान अंतिम कटाई से पहले भी अंतरिम आय अर्जित कर सकते हैं, जिससे कुल आर्थिक प्रतिफल में वृद्धि होती है।

### उपज एवं आय का अनुमान

- 15 वर्षीय वृक्ष से प्रति वृक्ष 10-15 कि.ग्रा. अन्त:काष्ठ (हर्टवुड) प्राप्त हो सकता है।
- 20 वर्षीय वृक्ष से 15-25 कि.ग्रा. अन्त:काष्ठ (हर्टवुड) प्राप्त होने की संभावना होती है।
- बाजार में चंदन की कीमत गुणवत्ता एवं तेल की मात्रा के अनुसार 6,000-15,000 रुपये प्रति कि.ग्रा. होती है। ■

# लवणीय जल से पॉलीहाउस में सब्जी उत्पादन

**रामेश्वर लाल मीणा, बाबू लाल मीणा** और **प्रियंका चन्द्रा**

“संरक्षित खेती एक ऐसी कृषि प्रणाली है जिसमें पौधों के चारों ओर सूक्ष्म स्तर पर अनुकूल वातावरण बनाया जाता है, जो पूर्ण या आंशिक रूप से सब्जी के प्रकार एवं आवश्यकतानुसार नियंत्रित होता है। जिस संरचना में वातावरण पूर्ण रूप से नियंत्रित होता है उसे पूर्ण संरक्षित खेती कहा जाता है। जिस संरचना में आंशिक नियंत्रण होता है उसे प्राकृतिक हवादार पॉलीहाउस कहा जाता है। इस प्रकार के छोटे आकार के पॉलीहाउस में छत पूरी तरह से पॉलीथीन से बनी होती है और बड़े आकार के पॉलीहाउस में ऊपर की ओर हवा के निकास के लिए जाली लगाई जाती है और चारों ओर एक निश्चित ऊंचाई तक कीटरोधी जाली का उपयोग किया जाता है। इसमें दोनों या चारों तरफ, पाइप के साथ पॉलीथीन शीट लगाई जाती है, जिसे तापमान के कम या ज्यादा होने पर (सर्दी या गर्मी) मौसम अनुसार खोला या बंद किया जा सकता है। इस प्रकार की संरचना में टमाटर, हरी मिर्च, शिमला मिर्च, खीरा, आदि सब्जियों को प्रमुखता से उगाया जाता है। लेख में लवणीय जल उपयोग द्वारा पॉलीहाउस में सब्जी उत्पादन की तकनीक का विवरण दिया गया है। इस प्रयोग के लिए 30×10 मीटर का पॉलीहाउस तैयार किया गया, जो ऊपर से पूरी तरह ढका हुआ है।”

भारत एक कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता है। यहां के शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों के किसानों की आजीविका कृषि पर अत्यधिक निर्भर है, हालांकि यहां फसलों का उत्पादन प्राकृतिक संसाधनों जैसे कि मृदा एवं जल की गुणवत्ता पर निर्भर करता है, जिसके कारण यहां पैदावार बिल्कुल न के बराबर होती है। इस गंभीर समस्या से निजात पाने के लिए वर्तमान में किसान पॉलीहाउस के माध्यम से तकनीकी

भाकृअनुप-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001 (हरियाणा)

रूप से कृषि करने लगे हैं, जिसे संरक्षित खेती कहते हैं।

पॉलीहाउस में अच्छी गुणवत्ता के जल द्वारा सिंचाई करना उपयुक्त रहता है। यदि किसी क्षेत्र में लवणीय जल एवं भूमि लवणता से ग्रस्त हो, तो ऐसी परिस्थितियों में सफल फसल उत्पादन लेना कठिन हो जाता है। लवण से ग्रस्त भूमि एवं निम्न गुणवत्ता जल वाले क्षेत्रों एवं शुष्क क्षेत्रों में सफल सब्जी उत्पादन प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक रूप से हवादार पॉलीहाउस का उपयोग सफल पाया गया है।

इसमें भूमि की लवणता को नियंत्रित रखने के लिए लवणों के निष्कासन की समुचित तकनीक अपनाकर सतत सब्जी उत्पादन की तकनीक विकसित करने का प्रयास किया गया है।

**पॉलीहाउस संरचना एवं तकनीक**

लवणता प्रभावित भूमि एवं निम्न गुणवत्ता जल वाले क्षेत्रों में कम लागत के छोटे या मध्यम आकार के पॉलीहाउस बनाकर हरी मिर्च, शिमला मिर्च, टमाटर जैसी सब्जियों का उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इस दिशा में केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा किये गये प्रयोग से आशान्वित परिणाम प्राप्त हुए हैं। इससे निम्न गुणवत्ता वाले जल द्वारा पॉलीहाउस संरचना में हरी मिर्च, शिमला मिर्च, टमाटर जैसी सब्जियों, विशेषकर टमाटर के उत्पादन के लिए प्रयोग किया गया जिससे बेहतर परिणाम देखने को मिले हैं।

इस प्रयोग में 30 मीटर लम्बाई एवं 10

पॉलीहाउस के अंदर लवणीय पानी की सिंचाई से शिमला मिर्च उत्पादन

मीटर चौड़ाई का प्राकृतिक रूप से हवादार पॉलीहाउस बनाया गया है। इसमें सबसे पहले भूमि की पॉवर टिलर से अच्छी प्रकार जुताई की गई तथा एक समान दूरी पर 6 क्यारी बनाई गई। प्रत्येक क्यारी की सिंचाई के लिए 6 टंकी रखने के लिए लोहे की एंगल का 1 मीटर ऊंचा ढांचा तैयार किया गया। हालांकि ईंट या लकड़ी का ढांचा भी बनाया जा सकता है।

इस तरह की संरचना में सब्जी की पौध लगाने से पहले 15 सें.मी. उठी हुई एवं 75 सें.मी. चौड़ी क्यारी बनाई जाती है। दो क्यारी के बीच की दूरी 70-100 सें.मी. रखी जाती है। क्यारी बनाते समय इसमें केंचुआ खाद 4 कि.ग्रा. प्रति वर्गमीटर की दर से मिला दी जाती है। जैविक खाद का उपयोग लवणों के विपरीत प्रभाव को कम करने में महत्वपूर्ण पाया गया है। यदि भूमि में दीमक की समस्या हो, तो क्यारी पर डरमिट दवा (2-3 मि.ली./लीटर पानी) का छिड़काव किया जा सकता है।

पॉलीथीन में जिस सब्जी की पौध लगानी है उसकी पौध किसी नर्सरी केन्द्र में पहले तैयार करवा ली जाती है और 40 से 45 दिनों की होने पर क्यारी में 45×30 सें.मी. की दूरी पर रोपित कर दिया जाता है। यदि उपलब्ध ड्रिप पंक्ति में छिद्र 45 सें.मी. की दूरी पर हैं, तो पौधे से पौधे की दूरी 45 सें.मी. भी की जा सकती है। इस लेख में टमाटर, हरी मिर्च एवं शिमला मिर्च को 45×30 सें.मी. पंक्ति एवं पौधे की दूरी पर सितम्बर के प्रथम पखवाड़े में रोपित किया गया। प्रत्येक क्यारी पर दो पंक्ति में पौध लगाई गई एवं दो ड्रिप पंक्ति से सिंचाई की गई।

सिंचाई के लिए एक मीटर की ऊंचाई पर 300 लीटर की टंकी एक लोहे की एंगल का प्लेटफार्म बनाकर स्थापित की गई। प्रत्येक टंकी से दो ड्रिप पंक्ति पूरी

## उर्वरकों का उपयोग

जल में घुलनशील उर्वरकों (एनपीके 19:19:19 एवं 0:0:50) तथा कैल्शियम नाइट्रेट एवं मैग्नीशियम सल्फेट की अनुशंसित मात्रा को सीधे टंकी में घोलकर सिंचाई के साथ सब्जियों में दिया गया। सूक्ष्म पोषक तत्वों के मिश्रण का 15 दिनों के अंतराल पर 3 ग्राम/लीटर जल में घोलकर महीने में दो बार छिड़काव पूरे फसल वृद्धि के दौरान किया गया। सब्जियों के पौधे जैसे-जैसे वृद्धि करते हैं, इन्हें प्लास्टिक धागे या सुतली से सहारा दिया जाता है। टमाटर की बढ़वार अधिक होने के कारण पौधों को धागे के सहारे के साथ क्यारी पर समानान्तर फैला दिया जाता है तथा टमाटर के फलों को पकने पर तोड़ते रहना पड़ता है, जिससे फलों को प्रभावित होने से बचाया जा सके। वैसे तो पॉलीहाउस में कीटों और रोगों से बचाव के कारण फलों पर कोई प्रभाव नहीं आता, लेकिन ज्यादा समय तक मृदा के संपर्क में रहने एवं पर्याप्त वायु का संचार नहीं हो, तो प्रभावित होने की आशंका अधिक रहती है। हरी मिर्च एवं शिमला मिर्च में एक से दो शाखाएं एवं दो से चार शाखाएं बन जाती हैं। इनके अलावा अन्य शाखाओं को काट देते हैं। इससे फलों की वृद्धि ठीक तरह से होती है। टमाटर में पौधों को धागे से सहारा देने के साथ मुख्य तने के अतिरिक्त आने वाली अन्य शाखाओं को कैंची से काटते रहते हैं। इससे अच्छे फलन एवं वृद्धि के साथ पौधों का प्रबंधन सुचारु होता है।

30 मीटर की क्यारी पर डाली गई। प्रयोग में सिंचाई के लिए उपलब्ध अच्छे जल में मिलाने के लिए प्राकृतिक लवणीय जल टैंकर द्वारा मंगवाया गया। प्रत्येक सिंचाई के लिए अच्छे जल के अलावा 5 लवणता स्तर (2, 4, 6, 8, 10 ईसी) का जल तैयार किया गया।

पौध रोपित करने के 15 से 20 दिनों (पौध की आवश्यकतानुसार) तक उपलब्ध अच्छे जल से सिंचाई करके पौधों को स्थापित करने के बाद सभी सिंचाई विभिन्न लवणता स्तर के जल द्वारा की गई। जब तक तापमान अधिक रहता है, तब 4 से 5 दिनों के अंतराल पर एवं सर्दियों के दौरान 7 से 8 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की गई।

**शिमला मिर्च**

पॉलीहाउस में प्रथम वर्ष के दौरान पौध वृद्धि एवं उपज पर लवणीय जल सिंचाई का ज्यादा विपरीत प्रभाव नहीं रहा। शिमला मिर्च में प्रथम वर्ष में पौधों की ऊंचाई 112 सें.मी. एवं फल की उपज 63 क्विंटल/हैक्टर अच्छे जल तथा 121 सें.मी. एवं उपज 62 टन/हैक्टर 6 ईसी के लवणीय जल की सिंचाई में प्राप्त किया गया। दूसरे वर्ष में फल उपज घटकर अच्छे जल में 50 टन एवं लवणीय जल 6 एवं 10 ईसी में 45 टन प्राप्त की गई जबकि पौधों की ऊंचाई 165 सें.मी. एवं 121 सें.मी. दर्ज की गई।

पॉलीहाउस के अंदर लवणीय पानी की सिंचाई से टमाटर का सफल उत्पादन

तीसरे वर्ष के दौरान लवणीय जल के कारण उपज पर प्रभाव पड़ने लगा और उपज घटकर 37 टन अच्छे जल एवं 26 टन लवणीय जल 6 ईसी पर प्राप्त हुई। इससे यह स्पष्ट है कि यदि पॉलीहाउस में लवणीय जल का उपयोग शिमला मिर्च में किया जाता है, तो दो वर्षों के बाद उपज कम होने लगती है। इसका मुख्य कारण लगातार दो वर्षों तक लवणीय जल का उपयोग करने से भूमि भी लवणग्रस्त हो जाती है। इससे यह ज्ञात होता है कि यदि भूमि सामान्य है और जल निम्न गुणवत्ता का है, तो प्रथम दो वर्षों तक शिमला मिर्च का उत्पादन लवणीय जल 6 ईसी तक लिया जा सकता है।

**टमाटर**

टमाटर में प्रथम वर्ष में अच्छे जल से पौधों की ऊंचाई 472 सें.मी. एवं उपज 62.5 टन/हैक्टर रही जबकि लवणीय जल 6 एवं 10 ईसी में पौधों की ऊंचाई क्रमशः 464 एवं 509 सें.मी. तथा उपज 116 एवं 111 टन/हैक्टर प्राप्त की गई। दूसरे वर्ष के दौरान अच्छे जल से पौधों की ऊंचाई 638 सें.मी. एवं उपज 67 टन/हैक्टर, जबकि लवणीय जल 6 एवं 10 ईसी में पौधों की ऊंचाई क्रमशः 674 एवं 631 सें.मी. एवं उपज 95.5 एवं 114 टन/हैक्टर प्राप्त हुई, जो तीसरे वर्ष में बढ़कर अच्छे जल से 104 टन/हैक्टर जबकि लवणीय जल 6 एवं 10 ईसी में 142 एवं 138 टन/हैक्टर प्राप्त हुई। इन परिणामों से यह ज्ञात होता है कि टमाटर की फसल अन्य दो सब्जी फसलों की तुलना में लवणों के प्रति अधिक सहनशील है और लवणीय जल सिंचाई का उपज पर विपरीत प्रभाव नहीं दिखाई दिया।

**मृदा का उपचार**

पॉलीहाउस में सफलतापूर्वक सब्जी उत्पादन के लिये मृदा का अच्छी तरह उपचार करना आवश्यक होता है। अक्सर खरपतवार के बीज नेमेटोड, विभिन्न प्रकार के कवक एवं जीवाणु मृदा में मौजूद होते हैं। गर्मी

## पॉलीहाउस में सब्जी उत्पादन के लाभ

- सब्जियों का उत्पादन वर्षभर लिया जा सकता है।
- सब्जी उत्पादन के लिए प्रतिकूल जलवायु मौसम में भी विभिन्न संरक्षित उत्पादन तकनीक के इस्तेमाल से उत्पादन लिया जा सकता है।
- इसमें प्रति इकाई भूमि, पानी, ऊर्जा एवं श्रम में उत्पादन कई गुणा बढ़ाया जा सकता है।
- उच्च गुणवत्ता एवं स्वस्थ पौध द्वारा रोगरहित, स्वस्थ एवं गुणवत्तायुक्त सब्जी उत्पादित की जाती है।
- इससे ऐसे क्षेत्रों में भी सब्जी उत्पादन संभव है, जहां खुले वातावरण में उत्पादन नहीं हो पाता है।
- इनमें महंगी सब्जियों का रोगरहित बीज उत्पादन भी किया जा सकता है।
- इन संरक्षित पॉलीहाउस में कीटों, रोगों एवं खरपतवारों का भी नियंत्रण एवं प्रबंधन सुगमता से कर सकते हैं।
- समस्याग्रस्त भूमि तथा लवणीय जल क्षेत्रों में सब्जी उत्पादन द्वारा आजीविका कमाने की सबसे बेहतर तकनीक है। इसमें ग्रामीण युवाओं के लिए रोजगार के असीम अवसर हैं।

के मौसम में मृदा को प्लास्टिक से ढककर मृदा सौरीकरण (सोयल सोलेराइजेसन) द्वारा प्राकृतिक विधि से उपचार करके मृदा को खरपतवार एवं रोगरहित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त 1) ऊष्मा उपचार, 2) क्लोरोपिक्रीन मिथाइल ब्रोमाइड आदि रसायनों द्वारा धुंआ करना (फ्यूमिगेशन), 3) कैप्टॉन आदि कवकनाशकों का प्रयोग इत्यादि लाभकारी है।

**भूमि से लवणों के निकास का उपाय**

लवणीय जल का कृषि में उपयोग करने पर भूमि भी धीरे-धीरे लवणग्रस्त होने लगती है। परिणामस्वरूप उपज में दो वर्षों के बाद कमी आने लगती है। इस समस्या के समाधान के लिए भी भूमि से लवणों के निक्षालन की तकनीक का विकास किया गया। इस तकनीक में पॉलीहाउस में प्रत्येक क्यारी के 60 से 70 सें.मी. नीचे छिद्रयुक्त (ऊपरी आधे भाग में) 90 मि.मी. व्यास के पीवीसी पाइप को एक छन्नक कपड़े को चारों ओर लपेटकर, नाली में दबाया गया (यह कार्य पॉलीहाउस बनवाने के दौरान शुरुआत में ही किया जा सकता है)। प्रत्येक पाइप को पॉलीहाउस के बाहर एक भूमिगत टैंक (2×2 मीटर एवं 3 मीटर गहरा) से जोड़ दिया गया, जिससे लवणीय जल को क्यारी से निष्कासित किया जा सके।

इस टैंक का इस्तेमाल पॉलीहाउस की छत से वर्षा के जल को एकत्रित करने में भी किया जाता है। पाइप को दबाने के बाद उपलब्ध अच्छे जल को सभी क्यारियों के बीच एवं ऊपर तक भर दिया जाता है। इससे लवण जल में घुलकर छिद्रयुक्त पाइपों के जरिये बाहर भूमिगत टैंक में निष्कासित हो

मिर्च का सफल उत्पादन

जाता है। क्यारी से लवणों का निष्कासन होने से आगामी वर्षों में सब्जी उत्पादन में कमी नहीं आती और इस प्रकार भूमि की गुणवत्ता बनी रहने से सतत सब्जी उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

**रोगों एवं कीटों का प्रबंधन**

शिमला मिर्च फसल में शुरुआत में मकड़ी का प्रकोप होने पर ओबेरॉन दवा का 2 मि.ली./लीटर का छिड़काव कारगर सिद्ध होता है। प्रकोप ज्यादा होने पर एक सप्ताह के अंतराल पर दूसरा छिड़काव किया जा सकता है। मकड़ी आने वाले फूलों को चूस लेती है, जिससे नये फूल एवं पौध वृद्धि रुक जाती है। प्रकोप के शुरू में ही 2 छिड़काव करने पर मकड़ी का नियंत्रण किया जा सकता है। प्रथम वर्ष के बाद मकड़ी का प्रकोप कम पाया गया।

कवक के बचाव के लिए रिडोमिल गोल्ड दवा का 2 ग्राम/लीटर का (टमाटर में एमीस्टार दवा का 2 ग्राम/लीटर) छिड़काव काफी असरदार होता है। इसका दूसरा छिड़काव 15 दिनों बाद किया जाता है। सफेद मक्खी का प्रकोप दिखाई देने पर इमिडाक्लोप्रिड दवा का 1 मि.ली./लीटर का छिड़काव किया गया। सफेद मक्खी का प्रकोप होने पर पत्तियां मुड़ जाती हैं और मुरझा जाती हैं।

प्राप्त प्रायोगिक परिणामों के आधार पर कह सकते हैं कि इन उच्च मूल्यों वाली व्यावसायिक सब्जी फसलों, विशेषकर टमाटर की फसल को कम लागत के प्राकृतिक हवादार पॉलीहाउस में लवणग्रस्त क्षेत्रों में लगाकर लवणीय जल सिंचाई द्वारा भी सफलतापूर्वक अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। जहां अन्य फसल लेना कठिन होता है या लाभदायक नहीं होता है, वहां इस प्रकार के छोटे एवं मध्यम आकार के कम लागत के पॉलीहाउस से एक छोटे परिवार के लिए पर्याप्त आमदनी का अच्छा साधन बनाया जा सकता है। ■

## हरी मिर्च का उत्पादन

हरी मिर्च में पाया गया कि प्रथम वर्ष में लवणता स्तर 6 ईसी में पौधों की ऊंचाई 121 सें.मी. एवं उपज 48 टन एवं 10 ईसी में पौधों की ऊंचाई 112 सें.मी. एवं 45 टन/हैक्टर उपज प्राप्त की गई। जबकि दूसरे वर्ष के दौरान लवणता स्तर 6 ईसी में पौधों की ऊंचाई 179 सें.मी. एवं उपज 47 टन एवं 10 ईसी में पौधों की ऊंचाई 151 सें.मी. एवं उपज 27.5 टन प्राप्त हुई जो घटकर तीसरे वर्ष में लवणीय जल 6 ईसी में 26 टन एवं लवणीय जल 10 ईसी में 15.5 टन रह गई। पौधों की बढवार पर ज्यादा असर नहीं देखा गया। हरी मिर्च की उपज अच्छे जल में 36, 30 एवं 39 टन/हैक्टर रही। इन परिणामों से यह ज्ञात होता है कि हरी मिर्च तुलनात्मक रूप से लवणों के प्रति शिमला मिर्च से अधिक सहनशील है और हरी मिर्च को भी पॉलीहाउस में सामान्य भूमि में लवणीय जल 6 ईसी द्वारा उगाया जा सकता है। दो वर्षों के बाद भूमि की लवणता बढ़ने पर उपज में ज्यादा कमी आती है।

# खाद्य उत्पादन वृद्धि में मृदा सुधार विकल्पों की भूमिका

**पारुल सुन्धा, निर्मलेंदु बसाक, अरविंद कुमार रॉय, प्रियंका चंद्रा, अमन कुमार, अमरेश चौधरी** और **राजेंद्र कुमार यादव**

"मृदा की क्षारीयता शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों तथा सिंचित कृषि क्षेत्रों में फसलों की वृद्धि और उत्पादकता को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। इस प्रकार की क्षारीय मृदा के सुधार के लिए विशेष तकनीकी उपायों की आवश्यकता होती है, ताकि इनमें सफलतापूर्वक फसलों का उत्पादन किया जा सके। जिप्सम का प्रयोग सबसे अधिक प्रचलित संशोधन विधि है। अन्य क्षेत्रों में इसके उपयोग से कृषि-ग्रेड जिप्सम की गुणवत्ता एवं उपलब्धता एक चुनौती बन गई है। उपलब्ध अन्य विकल्पों जैसे कि एलिमेंटल सल्फर, प्रेसमड, फ्लू गैस डीसल्फराइजेशन जिप्सम, बायोगैस स्लरी और नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद को क्षारीय मृदा सुधार के लिए आशाजनक विकल्प के रूप में देखा जा रहा है। क्षारीय मृदा के सुधार के लिए बड़े पैमाने पर पायलट परियोजनाएं संचालित करने की आवश्यकता है, जिससे नवप्रवर्तित संसाधनों की प्रभावशीलता और उत्पादकता में उनके योगदान को प्रमाणित किया जा सके। भारत में 3.77 मिलियन हैक्टर क्षेत्र क्षारीय मृदा से प्रभावित है, जो मृदा ह्रास, फसल उत्पादन में कमी और किसानों की आजीविका को प्रभावित करता है। अतः इस चुनौती से निपटने के लिए बहुस्तरीय, दीर्घकालिक और सतत प्रयास आवश्यक हैं।"

लवणता एवं क्षारीयता खाद्य फसलों की बढ़ती मांग को सीमित करने वाले प्रमुख कारक हैं। विश्व में 800 मिलियन हैक्टर से अधिक मृदा लवणता से प्रभावित है। इसका फसलों की उत्पादकता पर गंभीर प्रभाव पड़ता है।

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001

वैश्विक स्तर पर खेती योग्य 20 प्रतिशत से अधिक भूमि (लगभग 45 मिलियन हैक्टर) लवणता तनाव से प्रभावित है। देश में क्षारीय मृदा लगभग 3.77 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में फैली हुई हैं। देश में लवणग्रस्त क्षेत्र उच्च एसएआर (सोडियम अधिशोषण अनुपात) तथा आरएससी (अपशिष्ट सोडियम कार्बोनेट) युक्त जल के उपयोग से और बढ़ने की आशंका है। मृदा के आदान-प्रदान और घोल के चरणों में क्षारीयता और विशिष्ट आयन विषाक्तता (अतिरिक्त सोडियम और कार्बोनेट और बाइकार्बोनेट की उपस्थिति) कृषि उत्पादन को सीमित करती है। ये मृदा की संरचना और पोषक तत्वों की गतिशीलता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती हैं। इसलिए, मृदा में मौजूद घुलनशील और विनिमय योग्य

सोडियम की मात्रा मृदा में सोडियम से प्रेरित क्षति को बढ़ा देती है।

क्षारीय मृदा की विनिमयशील सोडियम प्रतिशत (ईएसपी) 15 प्रतिशत से अधिक, पीएच स्तर 8.2 से अधिक तथा विद्युत चालकता अस्थिर होती है। इन मृदा में निम्न भौतिक अवस्था, चिकनी मृदा का अधिक फैलाव, कम छिद्रता, जल एवं वायु का सीमित प्रवेश, बाधित जलीय चालकता तथा भंडारण क्षमता पाई जाती है। सोडियम आयन की अधिकता तथा कैल्शियम का कैल्शियम कार्बोनेट के रूप में अवशोषण सोडियम जनित विषाक्तता तथा फसलों में पोषण संबंधी कमियों को और गंभीर बना देता है।

मृदा में लवण की बढ़ी हुई सांद्रता पौधों की जल सोखने की क्षमता को कम कर देती है। इससे जल की कमी हो जाती है या अंकुरों में लवण का जमाव हो सकता है। यह चयापचय प्रक्रियाओं को बाधित करता है। परिणामस्वरूप, आंशिक रूप से रंध्र बंद होने के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्षमता कम हो जाती है और पौधों की वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

लवणता पौधों के विकास के लगभग सभी पहलुओं को प्रभावित करती है। इसमें अंकुरण, वनस्पति विकास, प्रजनन विकास तथा जल और पोषक तत्वों के अवशोषण में कमी शामिल है।

**जिप्सम द्वारा क्षारीय मृदा सुधार**

यह क्षारीय मृदा सुधार की एक बहुत प्रभावी एवं व्यापक रूप से अपनाई जाने वाली तकनीक है। इसकी आवश्यकता मृदा में उपस्थित लवणों की मात्रा एवं मृदा की संरचना, सिंचाई के लिए जल की गुणवत्ता और फसल की किस्म के चयन के आधार पर की जाती है।

वर्ष 2022 में लगभग 4.3 मिलियन मिट्रिक टन जिप्सम का खनन किया गया। भारत की इस क्षेत्र में सफलता इस बात से ज्ञात होती है कि अब तक 2.10 मिलियन हैक्टर क्षारीय भूमि का सुधार किया गया है। इसमें सबसे अधिक क्षेत्र पंजाब (0.79 मिलियन हैक्टर) में, फिर उत्तर प्रदेश (0.73 मिलियन हैक्टर), हरियाणा (0.35 मिलियन हैक्टर) और अन्य राज्यों में कुल मिलाकर 0.70 मिलियन हैक्टर भूमि शामिल है।

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान द्वारा लगातार इन राज्यों में मृदा की गुणवत्ता और आजीविका स्तर में सुधार हेतु प्रति वर्ष अतिरिक्त खाद्यान्न उत्पादन के माध्यम से योगदान दिया जा रहा है। अब तक उत्तर प्रदेश में सुधारी गई क्षारीय मृदा से प्रति वर्ष लगभग 4.30 मिलियन टन अतिरिक्त खाद्यान्न उत्पादित हो रहा है, जो कुल खाद्यान्न उत्पादन का लगभग 2 प्रतिशत है।

देश में गुणवत्तायुक्त जिप्सम के घटते स्रोत तथा अन्य क्षेत्रों में खनिज जिप्सम की बढ़ती मांग के कारण क्षारीयता के सुधार के लिए नये वैकल्पिक सुधारकों एवं तकनीकों की खोज आवश्यक हो गयी है। देश में मृदा स्तर के ऊपरी 15 सें.मी. के सुधार के लिए सामान्य अनुशंसा 12-15 टन प्रति हैक्टर का 50 प्रतिशत लेते हुए कुल आपूर्ति 32-45

## फ्लू गैस डिसल्फराइजेशन जिप्सम

फ्लू गैस डिसल्फराइजेशन जिप्सम (कैल्शियम सल्फेट डाइहाइड्रेट ($CaSO_4 2H_2O$) कोयले से चलने वाले विद्युत उत्पादन संयंत्रों में दहन गैसों (सल्फर डाइऑक्साइड) पर चूने के घोल करने से उपोत्पाद के रूप में संश्लेषित जिप्सम उत्पन्न होता है। इस प्रक्रिया से उत्पन्न जिप्सम को एफजीडी जिप्सम कहा जाता है। एफजीडी जिप्सम का व्यापक रूप से निर्माण सामग्री (जैसे कि दीवार, प्लास्टर कोटिंग्स और कंक्रीट) में उपयोग किया जाता है। यह खनन जिप्सम है, इसके साथ ही इसमें क्षारीय भूमि सुधार करने की क्षमता भी है। एफजीडी जिप्सम के अनुप्रयोग से मृदा में भौतिक और रासायनिक गुणों में सुधार होता है, सोडियम के हानिकारक प्रभाव कम होते हैं। मृदा में आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है और फसल की उपज में एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है। वर्ष 2021-2023 के दौरान मृदा सुधार का अध्ययन तीन राज्यों, हरियाणा (सीतामई और पुंड्रक, करनाल), उत्तर प्रदेश (चिरकिहिट, आजमगढ़ और मार्शनगर, उन्नाव) और पंजाब (पाट्टी झुंगियान, पटियाला) में किसानों के खेतों पर 50 प्रतिशत जीआर के समतुल्य आधार पर एफजीडी जिप्सम का उपयोग करके नियंत्रण की तुलना में धान, गेहूं और बरसीम की उपज में क्रमशः 2.9, 2.0 और 2.7 गुणा वृद्धि देखी गई।

फ्लू गैस डिसल्फराइजेशन जिप्सम से क्षारीय मृदा सुधार एवं फसल उत्पादकता में वृद्धि

## क्षारीय मृदा की पहचान

- क्षारीय मृदा सामान्यतः चिकनी बनावट वाली होती है। यह गीली होने पर चिपचिपी और गांठदार हो जाती है।
- सतह पर मृदा के कणों के फैलाव से पपड़ी का निर्माण हो सकता है, जिससे जल रिसाव और अंकुरण में बाधा उत्पन्न हो सकती है।
- क्षारीय मृदा में पौधों की वृद्धि अकसर धीमी होती है, पत्तियों के पीली होने की आशंका रहती है और जड़ों में सड़न की समस्या हो सकती है।
- फैलाव और क्रस्टिंग, मृदा के माध्यम से जल की गति को कम करते हैं। इससे जलभराव और वायु संचार बाधित होता है।
- सूखी अवस्था में सोडियम युक्त मृदा कठोर हो जाती है। इससे जुताई करना कठिन हो जाता है, जबकि गीली होने पर वह फिसलन भरी तथा नरम हो जाती है।
- सोडियम युक्त मृदा अक्सर वर्षा या सिंचाई के बाद मृदा के कणों के फूलने और बिखरने के कारण इसकी सतह उठी हुई दिखाई देती है।
- क्षारीय मृदा का उच्च पीएच और अन्य कारकों के कारण पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की अनुपलब्धता हो सकती है।

मिलियन टन 70 प्रतिशत शुद्धता के जिप्सम की आवश्यकता है। यह आवश्यकता क्षारीय (आरएससी) जल सिंचाई के परिणामस्वरूप बढ़ रहे क्षारीयता के नये क्षेत्रों के कारण और बढ़ने की संभावना है।

**जिप्सम प्रौद्योगिकी का विवरण**

क्षारीय मृदा के सुधार में कैल्शियम द्वारा विनिमय क्षेत्र से सोडियम को प्रतिस्थापित किया जाता है। इससे मृदा की क्षारीयता ($Na_2CO3$/ $NaHCO_3$) में सुधार होता है।

जिप्सम का उपयोग करके क्षारीय मृदा को पुन: सुधारने के लिए निम्न कार्यप्रणाली का पालन करें:

- लवण प्रभावित क्षेत्रों से 0-15 सें.मी. गहराई से मृदा का नमूना लेकर पी-एच मान और जिप्सम की आवश्यकता का परीक्षण प्रयोगशाला से करवाएं और खेत के चारों ओर मजबूत मेड़ बनाते हुए भूखंड को उचित रूप से समतल करें।
- कुल जिप्सम आवश्यकता का 50 प्रतिशत प्रयोग किया जाता है। इसकी वास्तविक मात्रा का आकलन परीक्षण प्रयोगशाला द्वारा सुझाई गई शुद्धता कारक (लगभग 0.90-0.95) के अनुसार किया जाता है।
- जिप्सम को 7 सें.मी. ऊपरी मृदा की परत के भीतर अच्छी तरह मिश्रित करके समान रूप से खेत में फैलाया जाता है। इसके बाद 15-20 दिनों के लिए खेत की सिंचाई की जाती है। इससे सोडियम के निक्षालन से मृदा के पी-एच मान में कमी आती है और मृदा के भौतिक-रासायनिक गुणों में सुधार होता है।
- इसके बाद खेत में धान की लवण सहनशील प्रजाति (सीएसआर-36 या सीएसआर-56) का रोपण किया जाता है।
- सुधार प्रक्रिया के दौरान बेहतर उपज के लिए रबी के मौसम में गेहूं या बरसीम की अनुशंसित किस्मों को उगाना चाहिए। 3-4 वर्षों के बाद सामान्य फसल ली जा सकती है।
- पोषक तत्वों की कमी के कारण होने वाले तनाव से बचने के लिए उचित पोषक तत्व प्रबंधन कार्यक्रम का पालन किया जाना चाहिए। कार्बनिक पदार्थ और नाइट्रोजन की आपूर्ति के लिए

क्षारीय मृदा

## नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद

पर्यावरणीय अपशिष्ट प्रबंधन का आधार अपशिष्ट के जैविक स्रोतों का पुनर्चक्रण, पुन: उपयोग और कम्पोस्टिंग है। नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद का उपयोग क्षरणग्रस्त मृदा की पुनर्भरण और सुधार में किया जा सकता है। यह फसलों की नाइट्रोजन आवश्यकता और अन्य आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति में सहायक होता है। शहरी अपशिष्ट जैसे कि वाहितमल अवयव और नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद को जिप्सम के साथ मिलाकर प्रयोग करने से मृदा की क्षारीयता कम होती है। इसके अतिरिक्त, ये कार्बनिक संशोधन आवश्यक पोषक तत्व नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश और अन्य माध्यमिक और सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करते हैं। इससे मृदा के भौतिक और रासायनिक गुणों में सुधार और सूक्ष्मजीवों की आबादी और गतिविधियां बढ़ती हैं। साथ ही पौधों के रोगजनकों की संख्या कम होती है। उच्च एसएआर वाले जल के साथ, क्षारीय-लवणीय मृदा में जिप्सम और ठोस अपशिष्ट खाद के प्रयोग से बेहतर पुनर्भरण क्षमता और सोडियम का अधिक निक्षालन देखा गया। क्षारीय मृदा में जिप्सम का प्रयोग नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की उपलब्धता को कम करता है, परंतु जिप्सम के साथ नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद का प्रयोग नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की कमी की पूर्ति करता है और जिप्सम की आवश्यकता को भी कम करता है। जैविक कम्पोस्ट और अकार्बनिक संशोधनों का पारस्परिक प्रभाव तथा सिंचाई जल की गुणवत्ता, क्षारीय मृदा पुनर्भरण के दौरान फॉस्फोरस की गतिशीलता और निक्षालन हानि को प्रभावित करते हैं। कम्पोस्ट का तात्कालिक अम्लीकरण (तात्विक सल्फर और सल्फर-ऑक्सीडाइजर से) पीएच को घटाता है और विभिन्न अपशिष्टों में 28 दिनों के इनक्यूबेशन अवधि में पर्याप्त मात्रा में समतुल्य क्षारीय उदासीकरण क्षमता दर्शाता है।

नगरीय ठोस अपशिष्ट खाद द्वारा आवश्यक पोषक तत्व पूर्ति और फसल की अधिक उपज

गर्मियों के दौरान लवण-सहिष्णु ढैंचा (हरी खाद) उगाना लाभकारी है।

**जिप्सम के अतिरिक्त अकार्बनिक सुधारक**

**एलिमेंटल सल्फर**

एलिमेंटल सल्फर का प्रयोग कैल्शियम युक्त क्षारीय मृदा के संशोधन में किया जाता है। यह एलिमेंटल सल्फर सूक्ष्मजीवों की क्रिया द्वारा सल्फ्यूरिक अम्ल में ऑक्सीकरण होकर सोडियम कार्बोनेट तथा सोडियम बाइकार्बोनेट को सोडियम सल्फेट में परिवर्तित करता है।

एलिमेंटल सल्फर जल में अघुलनशील होता है, इसलिए यह केवल नम परिस्थितियों में ऑक्सीकरण क्रिया के माध्यम से प्रभावी होता है। पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान में 83 स्थानों पर मूल सल्फर आधारित फॉर्मूलेशन (आरएफएस) का मूल्यांकन किया गया, जिसमें गेहूं, धान, कपास और बरसीम की उपज में 8 प्रतिशत (बहुत कम क्षारीयता)-225 प्रतिशत (उच्च क्षारीयता) की वृद्धि देखी गई। आरएफएस के एक फसलचक्र के प्रयोग के बाद मृदा पीएच में 0.6-1.5 इकाई की कमी पाई गई।

देश में पेट्रोलियम उद्योगों के विस्तार के कारण अब एलिमेंटल सल्फर एक उपलब्ध उपोत्पाद के रूप में प्राप्त हो रहा है। इसे क्षारीय मृदा सुधार में एक उपयोगी विकल्प के रूप में अपनाया जा सकता है।

**समुद्री जिप्सम**

सामान्य नमक के उत्पादन के दौरान जब समुद्र जल को सौरी वाष्पीकरण द्वारा सुखाया जाता है, तब समुद्री जिप्सम एक उपोत्पाद के रूप में प्राप्त होता है। यह प्रक्रिया मुख्यत: गुजरात एवं तमिलनाडु के तटीय क्षेत्रों में होती है। इस समुद्री जिप्सम में 89.7-92.6 प्रतिशत कैल्शियम सल्फेट होता है। इसके अतिरिक्त इसमें अन्य अघुलनशील तत्व भी उपस्थित रहते हैं। प्रत्येक 1 टन नमक के उत्पादन पर लगभग 30-50 कि.ग्रा. समुद्री जिप्सम प्राप्त होता है।

भारत में बढ़ते हुए सौरी नमक उत्पादन के चलते, यह समुद्री जिप्सम क्षारीय मृदा के सुधार का एक उभरता स्रोत है। इसमें उपस्थित सोडियम क्लोराइड, मैग्नीशियम क्लोराइड और मैग्नीशियम सल्फेट जैसे अपद्रव्य, घोल की आयनिक शक्ति को बढ़ाकर उसकी गतिशीलता गुणांक को घटाते हैं, जिससे मृदा सुधार में वृद्धि होती है।

**अम्ल तथा अम्ल-उत्पादक पदार्थ**

सल्फ्यूरिक अम्ल जब मृदा में उपस्थित कैल्शियम कार्बोनेट से अभिक्रिया करता है, तो वह कैल्शियम सल्फेट का निर्माण करता है। यह प्रक्रिया मृदा में उपस्थित मुक्त सोडियम कार्बोनेट को निष्क्रिय कर देती है। इसके साथ ही यह अवशोषित सोडियम को प्रतिस्थापित करता है।

क्षारीयता प्रभावित मृदा में पौधों की वृद्धि

सल्फ्यूरिक अम्ल का उपयोग विश्व के अनेक भागों में कैल्केरियस क्षारीय मृदा के सुधार तथा सिंचाई जल की क्षारीयता कम करने के लिए किया जा रहा है। हालांकि क्षारीय मृदा के सुधार में सल्फ्यूरिक अम्ल के बड़े पैमाने पर उपयोग में प्रमुख बाधा इसका सुरक्षित उपयोग एवं परिवहन है।

**कार्बनिक सुधारक**

गोबर की खाद, प्रेसमड, सीवेज स्लज, फसल अवशेष और नगर अपशिष्ट कम्पोस्ट जैसे जैविक संशोधकों के संयोजित उपयोग से क्षतिग्रस्त/सीमांत मृदा में सुधार हुआ है।

**गोबर की खाद**

कृषि भूमि में गोबर खाद का प्रयोग जल में घुलनशील लवणों की सांद्रता बढ़ाने, मृदा के पोषक तत्वों की गुणवत्ता सुधारने और फसल उत्पादन बढ़ाने का एक किफायती एवं पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ उपाय है। यह धनायन विनिमय क्षमता तथा घुलनशील पोटेशियम को बढ़ाता है, जिससे कि एक्सचेंज कॉम्प्लेक्स में प्रवेश को सीमित कर लवणीय परिस्थितियों में फसल वृद्धि को बढ़ावा देता है।

**बायोगैस स्लरी**

बायोगैस स्लरी बायोगैस संयंत्रों से प्राप्त एक उप-उत्पाद है। इसका उपयोग पोषक तत्वों की कमी वाली क्षारीय मृदा के लिए एक जैविक सुधारक के रूप में किया जा सकता है। एक घन मीटर बायोगैस स्लरी में लगभग 0.16-1.05 कि.ग्रा. नाइट्रोजन होता है। यह मात्रा किण्वन प्रक्रिया में प्रयुक्त फीडस्टॉक के प्रकार पर निर्भर करती है।

बायोगैस स्लरी के प्रयोग से मृदा के कार्बन भंडार और नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश की मात्रा में क्रमश: लगभग 8.78 प्रतिशत, 11.01 प्रतिशत और 14.33 प्रतिशत की वृद्धि होती है और साथ ही नाइट्रस ऑक्साइड गैस के उत्सर्जन में भी कमी आती है। स्लरी में मौजूद सूक्ष्मजीव समुदाय नाइट्रोजन निक्षालन से होने वाली हानि को कम करते हैं, जो मृदा सूक्ष्मजीवों द्वारा नाइट्रेट के रूपांतरण के माध्यम से होता है। यह मृदा कार्बनिक कार्बन चक्रण में बैक्टीरिया और फफूंद समुदायों को भी सक्रिय करता है। बायोगैस स्लरी के उपयोग से रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता में लगभग 20 प्रतिशत तक की कमी लाई जा सकती है।

**स्पेंट वॉश एवं प्रेसमड**

कच्चे स्पेंट वॉश की बायोमीथेनेशन की प्रक्रिया द्वारा मीथेन गैस प्राप्त करने पर बायोमीथेनेटेड स्पेंट वॉश नामक उपोत्पाद बनता है। यह जैविक उपोत्पाद जैविक कार्बन, कैल्शियम और पोटेशियम से भरपूर होता है, जो पोषक तत्वों की आपूर्ति हेतु मृदा के लिए लाभकारी होता है। प्रेसमड चीनी मिलों का एक औद्योगिक अपशिष्ट उपोत्पाद है। अनुमान है कि प्रत्येक 100 टन गन्ना पेराई पर लगभग 3 टन प्रेसमड खोई प्राप्त होती है, जो जैविक स्रोतों से भरपूर होती है। प्रेसमड के कृषि उपयोग से जैविक तत्वों की मात्रा, संरचना, जल अंत:स्रवण में सुधार एवं पीएच में कमी के लिए सकारात्मक रिपोर्टें उपलब्ध हैं।

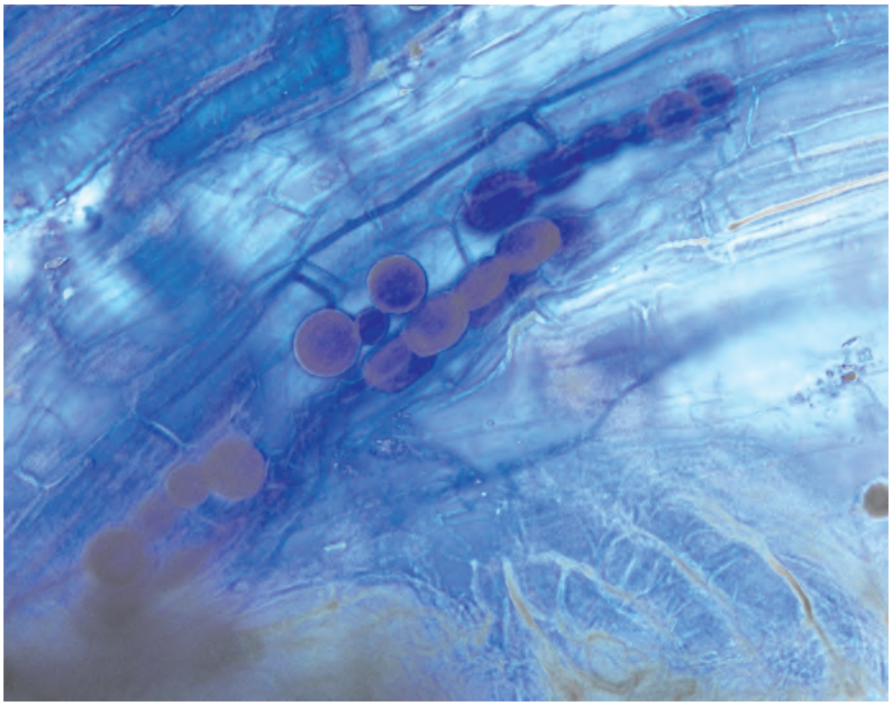

# आर्बस्कुलर माइकोराइजा आधारित जैव पादप वृद्धि वर्धक

**प्रियंका चंद्रा, अरविन्द कुमार राय, पारुल सुन्धा, निर्मलेंदु बसाक** और **राजेंदर कुमार यादव**

“कृषि भूमि का लगभग 1125 मिलियन हैक्टर क्षेत्र लवणता से प्रभावित है। इसमें से भारत सहित उत्तर और मध्य एशिया में प्रभावित क्षेत्र का हिस्सा लगभग 20 प्रतिशत है। भारत में, लगभग 6.74 मिलियन हैक्टर (कुल कृषि योग्य भूमि का 4.2 प्रतिशत) क्षेत्र लवणता, क्षारीयता या दोनों के संयोजन से प्रभावित है। अतः यह अनुमान लगाया जा रहा है कि वर्ष 2050 तक लवणता प्रभावित भूमि का विस्तार 16.2 मिलियन हैक्टर तक हो जाएगा। मृदा में अतिरिक्त लवणों (घुलनशील या विनिमय योग्य सोडियम) की अत्यधिक मात्रा फसल की वृद्धि और विकास को प्रभावित करती है, जिसमें अंकुरण, वानस्पतिक वृद्धि और प्रजनन शामिल हैं। माइकोराइजा एक सहजीवी संबंध है, जो कवक और जिम्नोस्पर्म द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। माइकोराइजा कवक, जिम्नोस्पर्म एवं एंजियोस्पर्म जैसे उच्च पौधों की जड़ों के बीच पारस्परिक रूप से लाभकारी संबंध दिखाता है। माइकोरिजल कवक पौधों की जड़ कॉर्टिकल कोशिकाओं से पोषण प्राप्त करते हैं और बदले में, ये माइकोरिजल कवक पौधे के लिए सतह क्षेत्र प्रदान करते हैं, ताकि इसकी अवशोषण क्षमता बढ़ जाए। माइकोरिजल सहजीवी संबंध पाइनस और आर्किड पौधों की जड़ों में भी देखा जाता है। लगभग 95 प्रतिशत पौधों की प्रजातियों में यह संबंध पाया जाता है। माइकोराइजा मृदा जैविकी और मृदा रसायन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माइकोराइजा पौधों के लिए मृदा से विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व जैसे-फॉस्फोरस, नाइट्रोजन और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों को अवशोषित करने में मदद करते हैं। अतः ये फसलों की पैदावार को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माइकोराइजा पौधों द्वारा जल के अंतर्ग्रहण की क्रिया दर को बढ़ाते हुए उन्हें सूखे की परिस्थिति में प्रतिरोधी बनाते हैं। इस कारण इन्हें प्राकृतिक जैव उर्वरक के नाम से भी जाना जाता है। ये रोग उत्पन्न करने वाले सूक्ष्म जीवों से पौधे को सुरक्षा प्रदान करते हैं।”

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001 (हरियाणा)

माइकोराइजा एक सूक्ष्मदर्शी जीव है और ये दो प्रकार के होते हैं, एंडो और एक्टो माइकोराइजा। एंडो माइकोराइजा में कवक जड़ के कोर्टीकल कोशिका तक प्रवेश कर जाता है, जबकि एक्टो माइकोराइजा में कवक जड़ के मूल और कोर्टीकल कोशिका के ऊपर एक प्रकार का आवरण बना लेता है। कभी-कभी यह कवक जड़ की कोर्टीकल कोशिका के अंदर प्रवेश कर जाता है, तब इन्हें एक्ट-एंडो माइकोराइजा कहते हैं।

इनका संगठन किसी विशेष पौधे तक सीमित नहीं होता है। ये किसी भी पौधे के साथ सहजीविता स्थापित कर सकते हैं। इसके अलावा एंडो माइकोराइजा सामान्यतः ऑर्किड्स, कोनिफंस पौधें में पाए जाते हैं। ये प्रायः कवक के बेसीडीओमायसीटीस नामक वर्ग से संबंधित है।

एंडो माइकोराइजा में आर्बस्कल्स और वेसीकल्स नामक संरचनाएं पाई जाती हैं। अतः इन्हें वेसिकुलर-आर्बस्कुलर माइकोराइजा कहा जाता है। ये उच्च पौधों की जड़ों और कवक के मध्य सहजीवी संबंध के रूप में रहते हैं। इस प्रकार का संबंध लगभग 95 प्रतिशत पौधों में पाया जाता है। यह सूक्ष्मजीव मृदा में मौजूद पोषक तत्वों जैसे-फॉस्फोरस, नाइट्रोजन और लघु पोषक तत्व को पौधे के लिए उपलब्ध अवस्था में बदलता है, ताकि पौधे की जड़ों को पोषक तत्व मिल सकें।

माइकोराइजा फॉस्फोरस के अवशोषण में मुख्य भूमिका निभाता है। यह मृदा की उर्वराशक्ति में सुधार कर पौधों की जड़ों को विकसित भी करता है। इसे जैव उर्वरक के रूप में फसलों में प्रयोग किया जाता है।

## लवणता तनाव में माइकोराइजा की भूमिका

आर्बस्कुलर माइकोराइजल कवक द्वारा जड़ उपनिवेशण से मेजबान पौधे में खनिज पोषक तत्वों, मुख्य रूप से फॉस्फोरस और नाइट्रोजन का अवशोषण बेहतर होता है। इसके बढ़ने से पौधे प्रकाश संश्लेषण द्वारा निर्मित कार्बन यौगिक, कवक को प्रदान करते हैं। यह पारस्परिक संबंध अंततः पौधों की वृद्धि एवं विकास में सहायक होता है।

माइकोराइजा सहजीवन, पौधों के अजैविक और जैविक तनावों से निपटने के लिए महत्वपूर्ण रणनीतियों में से एक है। माइकोराइजा पौधों में लवणीय तनाव के हानिकारक प्रभावों को कम करने में भी सक्षम है। लवणता की स्थिति जिसमे मृदा की भौतिक संरचना प्रभावित हो जाती है तथा पोषक

तत्वों का अवशोषण जटिल हो जाता है ऐसे में माइकोराइजा मृदा से नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटेशियम आदि का अवशोषण कर पौधों को पोषण प्रदान करते हैं।

**लवणीय तनाव के हानिकारक प्रभावों को कम करने में माइकोराइजा की भूमिका:**

- माइकोराइजा आवश्यक पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाता है।
- माइकोराइजा जड़ों में आर्बस्क्यूल्स निर्माण करता है, जो पौधों से कार्बन प्राप्त कर खनिजों और फॉस्फोरस के आदान-प्रदान में सहायता करता है। इससे अंततः फसल के विकास एवं उपज में सुधार होता है।
- माइकोराइजा पौधों में ऑक्सीकरण रोधीरक्षा तंत्र को मजबूत बनाकर लवणीय तनाव के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने में मदद करता है।
- माइकोराइजा पौधों में सोडियम/पोटेशियम अनुपात को नियमित करके परासरणी संतुलन बनाए रखकर लवणीय तनाव के हानिकारक प्रभावों को कम करता है। माइकोराइजा पौधों के साथ सहजीव संबंध बनाकर सोडियम के अवशोषण और स्थानांतरण को कम करता है जबकि पोटेशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम जैसे आवश्यक आयनों के अवशोषण को बढ़ावा देता है।

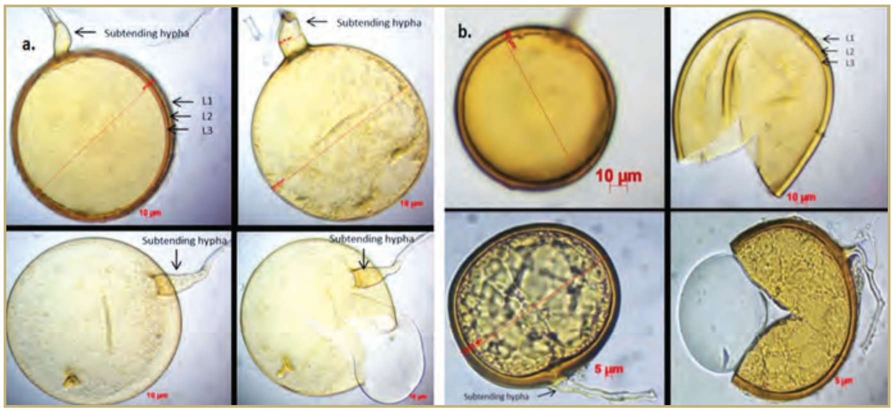


माइकोराइजा संवर्धन प्लेट

**लवणता प्रभावित मृदा में माइकोराइजा का फसल विकास पर प्रभाव**

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल में लवणता प्रभावित भूमि में ज्वार एवं गेहूं पर माइकोराइजा के प्रभाव का मूल्यांकन करने के अनुसंधान किए जा रहे हैं:

- धान-गेहूं फसलचक्र के अन्तर्गत क्षारीय भूमि से दो रूपात्मक माइकोराइजा समूह (क) टाइप 1 एएमएफ बीजाणु और (ख) टाइप 2 एएमएफ बीजाणु को पृथक किया गया। प्रवर्धित डीएनए के अनुक्रम के अन्वेषण करने के बाद यह पाया गया की ये दोनों रूपात्मक माइकोराइजा समूह ग्लोमेरोमाइकोटा से संबंधित है एवं टाइप *क* और टाइप *ख* ने क्रमशः *फनेलिफॉर्मिस मोसेई* और *फनेलिफॉर्मिस जियोस्पोरम* से सहरूपता दर्शायी।
- *फनेलिफॉर्मिस मोसेई* और *फनेलिफॉर्मिस जियोस्पोरम* का एनसीबीआई जीनबैंक का एक्सेशन नंबर क्रमशः ओएम 510280 और ओएम 510281 हैं। *फनेलिफॉर्मिस मोसेई* के बीजाणु पीले-भूरे रंग के और गोलाकार से लेकर उपगोलाकार आकार के हैं। बीजाणु का आकार 150-210 माइक्रोमीटर है। बीजाणुओं से जुड़े उप-हाइफा का आकार घुमावदार है। *फनेलिफॉर्मिस जियोस्पोरम* के बीजाणु पीले-भूरे रंग के हैं और उनका आकार गोलाकार से लेकर उप-गोलाकार का है। बीजाणु का आकार 80-170 माइक्रोमीटर है। दोनों रूपात्मक माइकोराइजा समूह के बीजाणु बाहरी परत में तीन परतें (एल1, एल2 और एल3) होती हैं। इसी तरह, *फनेलिफॉर्मिस जियोस्पोरम* के उप-हाइफा का आकार भी कुछ हद तक घुमावदार है।
- लवणता प्रभावित मृदा में माइकोराइजा के उपचार के बाद नियंत्रण की तुलना में फसल विकास एवं वृद्धि में उल्लेखनीय सुधार हुआ।
- लवण प्रभावित मृदा में माइकोराइजा के उपचार के बाद फसलों के विकास

## माइकोराइजा के लाभ

- इसके प्रयोग से जड़ों में विकास होता है तथा जड़ें अधिक पोषक तत्व लेने में सक्षम हो जाती हैं, अतः फसलों की उपज में वृद्धि होती है।
- रासायनिक उर्वरक की बचत के साथ मृदा में लाभकारी जीवों की वृद्धि होती है।
- माइकोराइजा मृदा से फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाता है। भूमि की भौतिक एवं रासायनिक दशा में सुधार होता है।
- इन्हें आसानी से गुणन किया जा सकता है। इस प्रकार इसे एक बार ही खरीदने की आवश्यकता पड़ती है।
- माइकोराइजा के उपयोग से जड़ों का बेहतर विकास होता है।
- माइकोराइजा पौधों द्वारा जल के अवशोषण की क्रिया दर को बढ़ाकर पौधों की सूखे के प्रति सहनशीलता बढ़ाता है। इससे पौधों को हरा-भरा रखने में मदद मिलती है।
- फसलों को मृदा से उत्पन्न कई हानिकारक रोगजनकों से सुरक्षा प्रदान करता है।
- पौधों की चयापचय क्रियाओं को सक्रिय कर प्रत्यारोपण के बाद मुरझाने एवं मृत्यु दर को कम करता है।
- इसके प्रयोग से उर्वरक और कीटनाशक पर निर्भरता कम हो जाती है और प्रतिकूल मृदा परिस्थितियों को सुधारता है।
- सूखे और लवणता से पौधे के प्रतिरोध को बढ़ाता है।
- विशेष रूप से मिर्च, बैंगन, गोभी, भिण्डी, टमाटर, आलू, प्याज, मूंगफली, तरबूज, लहसुन, अजवाइन और अन्य सब्जी वर्गीय फसलों में जिनकी नर्सरी तैयार की जाती है, उन सभी फसलों में इसका उपयोग किया जा सकता है।
- पोषक तत्वों और जल का अवशोषण बढ़ाता है।

## सिफारिशें

- भंडारण हमेशा ठंडी और सूखी जगह पर करें एवं सीधे धूप से दूर रखें।
- उत्पाद के इस्तेमाल के 15 दिनों पहले और 15 दिनों बाद रासायनिक कवकनाशी और खरपतवारनाशी का उपयोग न करें।
- माइकोराइजा का उपयोग 2 वर्षों के भीतर कर लें या समय पर गुणन कर लेना चाहिए, ताकि सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता बनी रहे।

में सकारात्मक प्रभाव पाया गया है। माइकोराइजा के उपचार के बाद फसलों में फॉस्फोरस की मात्रा और अवशोषण भी बेहतर पाया गया। क्षारीय मृदा और लवणीय मृदा में माइकोराइजा ने उपचार के बाद फसलों में सोडियम/पोटेशियम अनुपात को भी प्रभावित किया और इसमें कमी देखी गयी।

- लवण प्रभावित मृदा में माइकोराइजा के उपचार के बाद मृदा में उपलब्ध फॉस्फोरस की मात्रा में बिना उपचार की मृदा की तुलना में वृद्धि पाई गयी।
- लवण प्रभावित मृदा में माइकोराइजा के उपचार के बाद उपचारित मृदा में बैक्टीरिया, एक्टिनोमाइसेट्स और कवक की संख्या में बढ़ोतरी पाई गयी। इसके साथ ही लवण प्रभावित मृदा में माइकोराइजा के उपचार के बाद उपचारित मृदा में माइक्रोबियल एंजाइमों जैसे डीहाइड्रोजनेज और फॉस्फटेज की गतिविधियों में भी वृद्धि पाई गयी।

### खेत स्तर पर माइकोराइजा जैव उर्वरक का उत्पादन

खेत पर या किसान अपने स्तर पर भी निम्न विधि से माइकोराइजा जैव उर्वरक का उत्पादन कर इस्तेमाल कर सकते हैं:

- सबसे पहले जिस मृदा का उपयोग करें, उसमें मौजूद रोगाणुओं को नष्ट करने के लिये फर्श या प्लास्टिक चादर के ऊपर मृदा को फैलाकर 3 से 4 दिनों तक कड़ी धूप में सुखाएं।
- मृदा से रोगाणुओं को नष्ट करने के बाद इसे गमलों/ट्रे/पॉलीथीन बैग में भर लेते हैं। इसके बाद मृदा में प्रारंभिक माइकोराइजा कल्चर डालकर अच्छी तरह से मिला लेते हैं। प्रारंभिक माइकोराइजा किसी भी कृषि प्रयोगशाला से प्राप्त किया जा सकता है।
- इसके बाद प्रत्येक गमले में ज्वार या मक्का की फसल के 5-7 बीजों को उचित गहराई पर मृदा में बो दें, ताकि अंकुरित जड़ें मृदा में मिलाए गए प्रारंभिक माइकोराइजा कल्चर के संपर्क में आ सकें। नमी बनाये रखने के लिये गमलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- इस प्रकार पौधों को लगभग 2.5-3 महीनों तक सामान्य रूप से बढ़ने दें। इसके बाद गमले से धीरे-धीरे जड़ों को निकाल लें। ये जड़ें माइकोराइजा युक्त होती हैं। माइकोराइजा के तंतु एवं बीजाणु जड़ उत्तकों के भीतर एवं जड़ों की ऊपरी सतह पर तथा मृदा में विकसित होते हैं। जड़ों को जल में न धोयें तथा सामान्य तापमान पर छाया में सुखायें।
- सूखी हुई जड़ों को 1 सें.मी. आकार के छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें एवं इसे वर्मीकम्पोस्ट या गमले की मृदा के साथ मिला लें।
- इस प्रकार माइकोराइजा युक्त कल्चर प्रयोग के लिये तैयार हो जाता है। माइकोराइजा युक्त मिश्रण को तुरंत उपयोग कर सकते हैं या साफ प्लास्टिक थैली में भरकर सामान्य तापमान पर 6 महीने तक संरक्षित रख सकते हैं।

खेत स्तर पर माइकोराइजा जैव उर्वरक का उत्पादन

### माइकोराइजा की उपयोग विधि

- फसलों की रोपाई से पहले जड़ों को माइकोराइजा 5 मि.ली. प्रति लीटर जल के घोल में मिलायें, ताकि जड़ अच्छी तरह बढ़वार कर सके।
- पाउडर रूप में उपलब्ध उत्पाद की 250 ग्राम मात्रा को 100 से 200 लीटर जल में घोलकर पौध को खेत में लगाने से पहले 2 से 3 घंटे तक डुबोकर रखें।
- इसका 250 ग्राम मात्रा को 1 से 2 एकड़ खेत में ड्रिप आने की ड्रेंचिंग या सामान्य सिंचाई के माध्यम से भी दिया जा सकता है।
- एक फसलचक्र में हमेशा दो बार बुआई के समय और फूल अवस्था में करें।

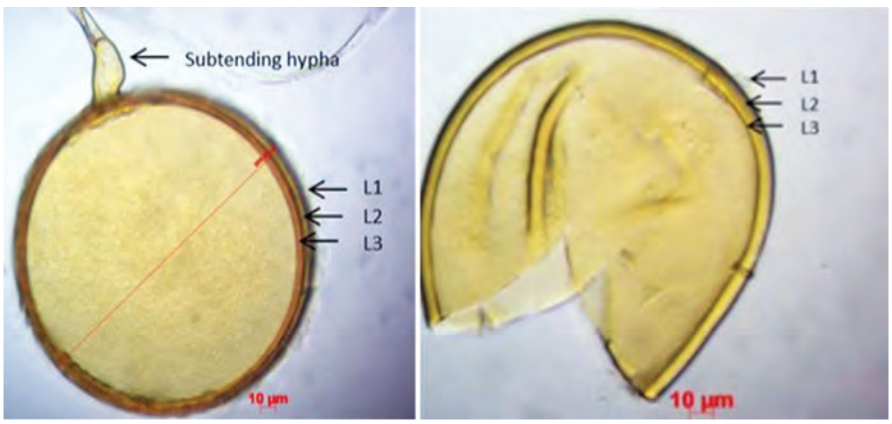


धान-गेहूं फसलचक्र में क्षारीय भूमि से दो रूपात्मक माइकोराइजा समूह
(क) फनेलिफॉर्मिस मोसेई के बीजाणु, और (ख) फनेलिफॉर्मिस जियोस्पोरम के बीजाणु की संरचना

# सुधरी क्षारीय मृदा हेतु समेकित कृषि प्रणाली मॉडल

**राज कुमार, निर्मल सिंह, सुरेश कुमार, राम किशोर फगोड़िया** और **अश्वनी कुमार**

" भारत में लघु और सीमांत किसान आर्थिक और सामाजिक रूप से कृषि व्यवस्था की रीढ़ माने जाते हैं। हालांकि, इन किसानों को भूमि, संसाधन और पूंजी की कमी के कारण अक्सर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में, समेकित कृषि प्रणाली एक महत्वपूर्ण और लाभकारी समाधान के रूप में उभर रही है। यह प्रणाली किसानों को विभिन्न कृषि गतिविधियों को आपस में जोड़कर उनकी आय बढ़ाने और आजीविका सुरक्षित करने में मदद करती है। भारत में कृषि की स्थिति में एक महत्वपूर्ण बदलाव की आवश्यकता है, खासकर उन क्षेत्रों में जहां दशकों से मृदा उपेक्षित और प्रभावित हो चुकी हैं। सोडिक मृदा जिसमें सोडियम आयनों की अधिकता होती है। इससे मृदा की संरचना प्रभावित और उपजाऊ क्षमता कम हो जाती है। सोडिक मृदा में एक्सचेंजबल सोडियम प्रतिशत आमतौर पर 15 से अधिक होता है। इसका पी-एच मान सामान्यतः 8.5 से ऊपर होता है, जो क्षारीयता को दर्शाता है। ऐसी मृदा को सुधारने के लिए जिप्सम (कैल्शियम सल्फेट) और बेहतर जल निकासी का उपयोग करके सोडियम को कैल्शियम से प्रतिस्थापित किया जाता है। सुधरी क्षारीय मृदा उस मृदा को कहते हैं, जो पहले क्षारीय मृदा थी, लेकिन उसका उपचार करके उसके भौतिक और रासायनिक गुणों को बेहतर बनाया गया है। सुधरी क्षारीय मृदा पर कृषि के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल को अपनाना एक बहुपक्षीय दृष्टिकोण है। यह मॉडल मृदा की उत्पादकता को बढ़ाने के साथ-साथ पर्यावरणीय स्थिरता को भी सुनिश्चित करता है। "

समेकित कृषि प्रणाली में कृषि, पशुपालन, मछलीपालन, मुर्गी पालन, बागवानी और अन्य कृषि आधारित गतिविधियों को एक साथ अपनाया जाता है। इससे मृदा की उत्पादकता में वृद्धि होती है और संसाधनों का कुशल उपयोग होता है।

भाकृअनुप-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल-132001 (हरियाणा)

**समेकित कृषि प्रणाली का उद्देश्य**

- भूमि की उत्पादकता में वृद्धि
- संसाधनों का कुशल उपयोग
- आर्थिक लाभ में वृद्धि
- पर्यावरणीय स्थिरता

## सामाजिक-आर्थिक बाधाएं

**समस्या:** लघु किसानों के पास एकीकृत कृषि तकनीकों को प्रभावी ढंग से अपनाने के लिए संसाधनों, ज्ञान या प्रौद्योगिकी की कमी हो सकती है। इसके अतिरिक्त वत्तीय सहायता, परामर्श सेवाओं और बाजार तक सीमित पहुंच भी अपनाने में बाधा बनती है।

**समाधान**

- प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण कार्यक्रम प्रदान करना।
- जिप्सम, बीज और उपकरण खरीदने के लिए ऋण और सब्सिडी की सुविधा प्रदान करना।
- फसलों, पशुधन उत्पादों और मछलीपालन के लिए स्थानीय मूल्यश्रृंखला विकसित करना।
- प्रसंस्करण इकाइयों जैसे डेरी उत्पादों या जैव ऊर्जा उत्पादन की स्थापना।
- किसानों की बाजार तक पहुंच बढ़ाने के लिए किसान उत्पादक संगठनों का गठन।

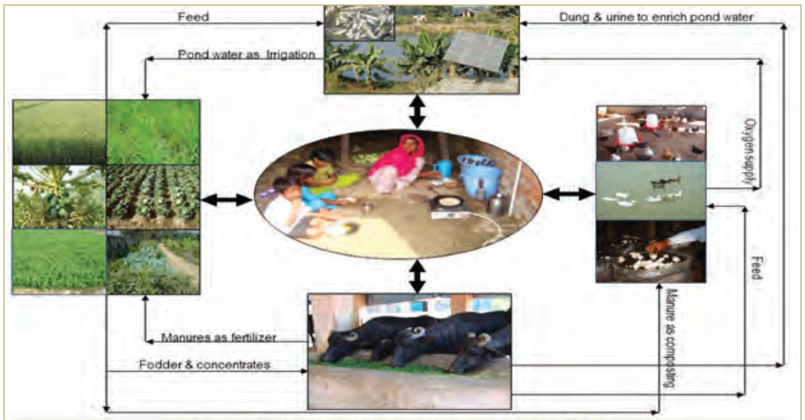


बहु–उद्यम कृषि मॉडल में संसाधनों के पुनर्चक्रण का चित्रण

बहु-उद्यम कृषि प्रणाली से संसाधनों का पुनर्चक्रण

सारणी 1. सभी फार्म आकारों में मौजूदा फसल स्वरूप से अनुमानित शुद्ध लाभ

| फसलें | औसत शुद्ध रिटर्न (रु./है.) | सीमांत (0.49) | लघु (1.46) | अर्द्धमध्यम (2.89) | मध्यम (6.07) | बड़ा (19.04) | सभी (2.22) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| चारा | 15029 | 589 | 1754 | 3472 | 7293 | 22878 | 2667 |
| कपास | 36326 | 1571 | 4681 | 9266 | 19461 | 61044 | 7117 |
| रेपसीड और सरसों | 56137 | 2215 | 6601 | 13065 | 27442 | 86079 | 10036 |
| गन्ना | 218756 | 1585 | 4723 | 9348 | 19634 | 61588 | 7181 |
| दलहन | 57722 | 466 | 1387 | 2746 | 5769 | 18094 | 2110 |
| गेहूं | 71751 | 13647 | 40662 | 80488 | 169052 | 530273 | 61828 |
| धान | 80317 | 7766 | 23138 | 45801 | 96199 | 301751 | 35183 |
| बाजरा | 37718 | 1402 | 4178 | 8271 | 17372 | 54492 | 6354 |
| अन्य | 25000 | 719 | 2141 | 4238 | 8901 | 27919 | 3255 |
| सभी फसलें | | 29959 | 89265 | 176696 | 371123 | 1164117 | 135732 |

नोट: कोष्ठकों में दिए गए आंकड़े औसत खेत का आकार (हैक्टर) हैं

**समेकित कृषि प्रणाली के लाभ**

- जैविक और पर्यावरणीय स्थिरता
- आर्थिक वृद्धि
- संवेदनशील क्षेत्रों में सशक्तिकरण
- क्षारीय मृदा की उर्वराशक्ति में सुधार

**समेकित कृषि प्रणाली मॉडल से शुद्ध लाभ**

समेकित कृषि प्रणाली मॉडल में संसाधन बाधाओं के अधीन, शुद्ध लाभ का आकलन रैखिक प्रोग्रामिंग मॉडल (एलपीएम) को नियोजित करके किया गया।

समेकित कृषि प्रणाली मॉडल में लिए गए मौजूदा उद्यम के आधार पर, धान-गेहूं, धान-गेहूं-मूंग, मक्का-गेहूं-मूंग, बागवानी, सब्जियां, चारा, डेरी, मत्स्य पालन और अन्य गतिविधियों को शामिल किया। उत्पादन प्रणाली भूमि, पूंजी, प्रत्येक उद्यम के तहत न्यूनतम/अधिकतम क्षेत्र जैसी बाधाओं में प्रभावित थी। इनमें हालांकि, यह माना गया कि जल की उपलब्धता कोई बाधा नहीं थी और आवश्यकता पड़ने पर श्रमिक भी उपलब्ध थे।

विश्लेषण से पता चला कि संसाधनों के पुनः आंवटन से शुद्ध आय 2.22 हैक्टर भूमि से 457809 रुपये तक बढ़ सकती है, जबकि हरियाणा की औसत परिचालन जोत पर यह आय 4,33,768 (2.0 हैक्टर) थी। इससे संकेत मिलता है कि मौजूदा संसाधन आंवटन की लाभप्रदता समेकित कृषि प्रणाली मॉडल के लगभग बराबर थी। अतः एकीकृत कृषि प्रणाली मॉडल पारंपरिक धान-गेहूं प्रणाली के अतिरिक्त एक लाभदायक वैकल्पिक विविध

## सुधरी क्षारीय मृदा में समेकित कृषि प्रणाली का महत्व

- **पशुपालन और कृषि संयोजन:** इस मॉडल में पशुपालन और कृषि को एक साथ मिलाया जाता है। पशुपालन से मिलने वाले गोबर और अन्य जैविक अपशिष्ट भूमि की उर्वरा क्षमता को बढ़ाते हैं। इस प्रकार, पशुपालन से प्राप्त सामग्री का उपयोग भूमि की गुणवत्ता सुधारने के लिए किया जा सकता है।
- **जल प्रबंधन:** इस मॉडल में जल संग्रहण की विभिन्न तकनीकों जैसे वर्षा जल संचयन, नहरों का जल सही तरीके से उपयोग करना और जलस्तर को बनाए रखने के उपाय को अपनाया जाता है।
- **मछलीपालन:** मछलीपालन से होने वाली आय किसानों को अन्य कृषि गतिविधियों के साथ एक स्थिर आय स्रोत प्रदान करती है। तालाबों का निर्माण करके मछलीपालन से जल निकासी और जल प्रबंधन में मदद मिलती है।
- **विविधता का लाभ:** सुधरी क्षारीय मृदा पर विभिन्न प्रकार की फसलें जैसे दलहन, तिलहन, फल और सब्जियां उगाई जा सकती हैं। इससे कृषि की विविधता बनी रहती है और भूमि की क्षारीयता पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

## पशुधन का एकीकरण

**समस्या**

क्षारीय मृदा में चारे और चरागाह की गुणवत्ता सीमित होती है। मृदा और जल में उच्च सोडियम सामग्री पशुधन के स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकती है और उनकी उत्पादकता को कम कर सकती है।

**समाधान**

- बरसीम, लूसर्न और जई जैसी लवणता सहनशील चारा फसलों की खेती करनी चाहिए।
- लीकेना और प्रोसोपिस जैसे वृक्षों के साथ सिल्वीपास्टोरल प्रणाली स्थापित करनी चाहिए।

सारणी 2. भाकृअनुप-सीएसएसआरआई, करनाल में बहु-उद्यम समेकित कृषि प्रणाली मॉडल की लाभप्रदता (वर्ष 2020-21)

| घटक | प्रणाली | क्षेत्र (हैक्टर) | सकल आय (रुपये) | व्यय (रुपये) | लाभ/हानि (रुपये) |
|---|---|---|---|---|---|
| अनाज फसलें | धान-गेहूं | 0.40 | 89570 | 26860 | 62710 |
| | धान-गेहूं-मूंग | 0.20 | 47182 | 15015 | 32167 |
| | मक्का-गेहूं-मूंग | 0.40 | 75622 | 30185 | 45437 |
| | उप-योग | 1.0 | 212374 | 72060 | 140314 |
| बागवानी/सब्जी/चारा फसलें | बागवानी | 0.40 | 42050 | 8000 | 34050 |
| | सब्जियां | 0.20 | 40300 | 19583 | 20717 |
| | चारा | 0.40 | | | |
| | उपयोग | 1.00 | 82350 | 27583 | 54767 |
| सहायक उद्यम | डेरी | 0.20 | 788902 | 620860 | 168042 |
| | मत्स्य पालन | | 176630 | 136700 | 39930 |
| | पोल्ट्री | | 26880 | 9475 | 17405 |
| | मशरूम | | 8740 | 3550 | 5190 |
| | फल/सब्जी डाइक पर | | 9700 | 1580 | 8120 |
| | उप-योग | 0.20 | 1010852 | 772165 | 238687 |
| सभी | पारंपरिक आरडब्ल्यूएस | 2.00 | 447850 | 134300 | 313550 |
| | विविधीकृत कृषि | 2.20 | 1305576 | 871808 | 433768 |

प्रणाली हो सकती है। समेकित कृषि प्रणाली मॉडल पूंजी और श्रम प्रधान है। मौजूदा धान-गेहूं फसल प्रणाली को मशीनीकरण के संदर्भ में प्रबंधित करना आसान है।

निवेश विश्लेषण से संकेत मिलता है कि समेकित कृषि प्रणाली मॉडल में अधिकतम आय (77 प्रतिशत) पशुधन और मत्स्य पालन घटकों से आती है। यह अक्सर बड़ी संख्या में उद्यमों को बनाए रखने के बजाय कुछ घटकों में व्यापार-बंद और विशेषज्ञता की ओर ले जाती है। किसानों द्वारा क्षारीय (प्रभावित गुणवत्ता वाले) जल वाले मछलीपालन को प्राथमिकता दी जाती है, लेकिन यह कृषि के लिए उपयुक्त नहीं है। इसलिए, ऐसे उच्च आदान गहन (उर्वरक, श्रम और पूंजी) समेकित कृषि प्रणाली मॉडल को स्वायत्त रूप से अपनाना चुनौतीपूर्ण है। निजी निवेश को आकर्षित करके और कृषि की बहुक्रियाशीलता (कृषि से परे प्रणाली का मूल्य प्राप्त करना) को एक अवसर के रूप में देखकर इसे बढ़ावा दिया जा सकता है।

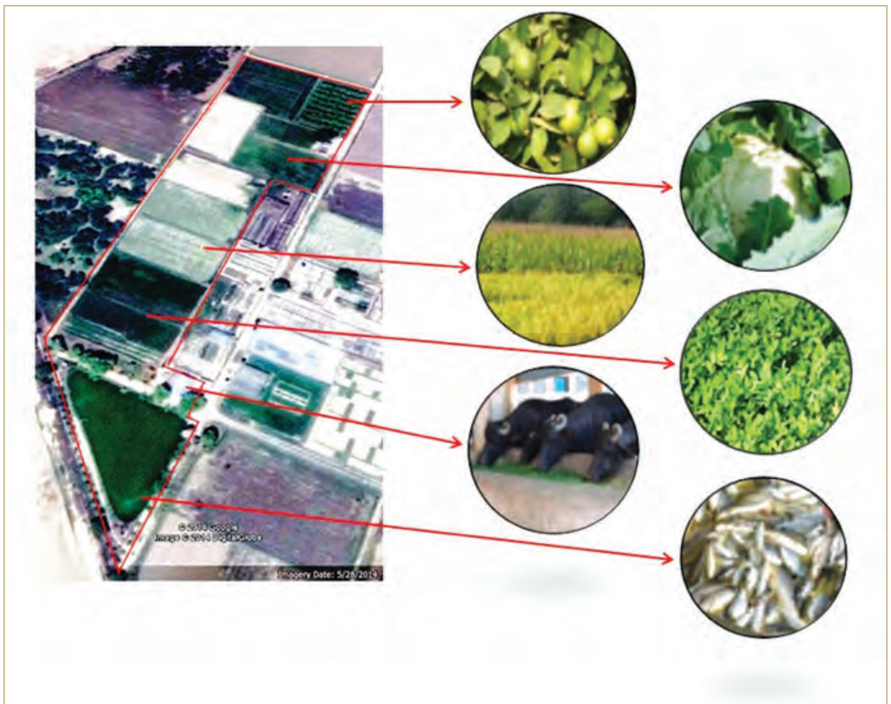

एकीकृत कृषि प्रणाली के विभिन्न घटकों को आवंटित क्षेत्र

## सुधरी क्षारीय मृदा में समेकित कृषि प्रणाली के लिए चुनौतियों का समाधान

### मृदा की गुणवत्ता और उर्वरता

**समस्याः** सुधरी क्षारीय मृदा में सोडियम की अवशेष मात्रा मृदा की संरचना, जल निकासी और जड़ों के विकास को प्रभावित करती है। उच्च सोडियम प्रतिशत (ईएसपी) और प्रभावित जल निकासी के कारण सतह पर परत बन जाती है। इससे पौधों की वृद्धि और जल रिसाव में बाधा आती है। क्षारीय मृदा में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और सूक्ष्म पोषक तत्व (जैसे-आयरन, जिंक और मैंग्नीज) की कमी होती है और सोडियम एवं बाइकार्बोनेट की विषाक्तता अधिक होती है।

**समाधान**

- मृदा की संरचना में सुधार और सोडियम आयनों को विस्थापित करने के लिए जिप्सम या अन्य कैल्शियम-आधारित संशोधनों का उपयोग करना चाहिए।
- कम्पोस्ट या गोबर की खाद जैसे जैविक पदार्थों का उपयोग करके मृदा की उर्वराशक्ति और सूक्ष्मजीव गतिविधि को बढ़ाना चाहिए।

### जल प्रबंधन

**समस्याः** क्षारीय मृदा में जलधारण और

निकासी की क्षमता कमजोर होती है। इससे जलभराव या सूखा जैसी समस्याएं हो सकती हैं। अधिक सिंचाई से जलभराव हो सकता है, जबकि कम सिंचाई से मृदा फिर से खारी हो सकती है।

**समाधान**

- ड्रिप या स्प्रिंकलर सिंचाई जैसी कुशल सिंचाई प्रणालियों का उपयोग करना चाहिए।
- जलभराव से बचने के लिए फील्ड ड्रेनेज सिस्टम बनाना चाहिए।

**फसलों का चयन**

**समस्या:** कई पारंपरिक फसलें सोडिसिटी के प्रति संवेदनशील होती हैं। इससे उपज कम हो सकती है। इसके अलावा, मृदा सुधार और आर्थिक लाभ सुनिश्चित करने के लिए फसलचक्र और अंतर-फसल प्रणाली का सही डिजाइन करना भी चुनौतीपूर्ण है।

**समाधान**

- जौ, गेहूं, सरसों और नेपियर घास जैसी क्षारीय मृदा से सहनशीलता रखने वाली फसलों का चयन करना चाहिए।
- मृदा की संरचना और उर्वराशक्ति को सुधारने के लिए दलहनी और गहरी जड़ वाली फसलों को अपनाना चाहिए।
- उपयुक्त फसलचक्र अपनाने से मृदा की गुणवत्ता और उत्पादकता में वृद्धि होती है।

समेकित कृषि प्रणाली के विभिन्न घटक

सारणी 3. भाकृअनुप-सीएसएसआरआई, करनाल में एकीकृत कृषि प्रणाली मॉडल से शुद्ध लाभ

| उद्यम | क्षेत्र (हैक्टर) | प्रतिशत आंवटन | शुद्ध रिटर्न (अनुकूलित) | औसत शुद्ध रिटर्न (रुपये/हैक्टर) |
|---|---|---|---|---|
| धान-गेहूं | 0.40 | 18 | 62710 | 156775 |
| धान-गेहूं-मूंग | 0.20 | 9 | 32167 | 160835 |
| मक्का-गेहूं-मूंग | 0.40 | 18 | 45416 | 113539 |
| बागवानी | 0.40 | 18 | 71505 | 170250 |
| सब्जियां | 0.20 | 9 | 20717 | 103585 |
| चारा | 0.20 | 9 | 11514 | 57570 |
| डेरी | 0.20 | 9 | 168042 | 840210 |
| मछली उत्पादन | 0.10 | 4.5 | 25000 | 250000 |
| अन्य/डाइक | 0.10 | 4.5 | 20378 | 207380 |
| कुल | 2.22 | 100 | 457809 | – |

**पर्यावरणीय स्थिरता**

**समस्या:** सुधरी क्षारीय मृदा में गहन खेती से माध्यमिक लवणता और पर्यावरणीय क्षरण हो सकता है। ये स्थितियां मृदा की क्षारीयता को बढ़ा सकती हैं और कृषि प्रणाली की स्थिरता को प्रभावित कर सकती हैं।

**समाधान**

- शून्य जुताई और आवरण फसल जैसी संरक्षण कृषि तकनीकों को अपनाना चाहिए।
- मृदा के कटाव को कम करने और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने के लिए कृषि वानिकी प्रणालियों का उपयोग करना चाहिए।

समेकित कृषि प्रणाली मॉडल सुधरी क्षारीय मृदा पर कृषि की स्थिरता, उत्पादकता और पर्यावरणीय संतुलन के लिए एक उपयुक्त समाधान प्रदान करता है। यह प्रणाली मृदा की गुणवत्ता को सुधारने के साथ-साथ किसानों की आय बढ़ाने और उनके जीवन स्तर को सुधारने में मदद करती है। हालांकि इस प्रणाली के सफल कार्यान्वयन के लिए प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता और उपयुक्त नीतियों की आवश्यकता है।

यह मॉडल कृषि विकास के एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में उभर सकता है। भारत में विशेष रूप से सुधरी क्षारीय मृदा में कृषि की स्थिरता और उत्पादकता को बढ़ाने के लिए समेकित कृषि प्रणाली मॉडल एक प्रभावी और दीर्घकालिक समाधान हो सकता है।

## सफल प्रयोग

**भाकृअनुप-सीएसएसआरआई के अंतर्गत सुधरी क्षारीय मृदा में किसान सहभागी समेकित कृषि प्रणाली मॉडल:** मौजूदा फसल प्रणालियों को ध्यान में रखते हुए, बहु-उद्यम समेकित कृषि प्रणाली मॉडल का मूल्यांकन हरियाणा में किसानों के खेतों में लागू की जाने वाली संभावित वैकल्पिक फसल प्रणाली के रूप में किया गया था। सीमांत किसानों का औसत परिचालन क्षेत्र 0.49 हैक्टर, लघु किसानों के लिए 1.46 हैक्टर, अर्द्ध मध्यम किसानों के लिए 2.89 हैक्टर, मध्यम किसानों के लिए 6.07 हैक्टर और बड़ी श्रेणी के किसानों के लिए 19.04 हैक्टर था। औसत खेत का आकार 2.22 हैक्टर था और इस औसत क्षेत्र को लक्षित करते हुए समेकित कृषि प्रणाली की लाभप्रदता विश्लेषण में संभावित बदलाव का आकलन किया गया। राज्य के औसत परिचालन क्षेत्र (2.22 हैक्टर) से एक बेहतर शुद्ध रिटर्न रुपये होने का अनुमान लगाया गया था जो एक वर्ष (2017-18) में 135732 रुपये था। भाकृअनुप-सीएसएसआरआई द्वारा विकसित इस मॉडल में फसल-मछली-पशुधन-सहायक घटक शामिल थे और समान क्षेत्र से 433768 रुपये का शुद्ध रिटर्न उत्पन्न हुआ (सारणी-2), जो राज्य में धान-गेहूं फसल प्रणाली (313550 रुपये) या प्रचलित फसल प्रणाली (135732 रुपये) की तुलना में बहुत अधिक थी।

# सरसों की खली के फायदे

**जीतेन्द्र सिंह, विजयता सिंह, जोगेन्द्र सिंह, धीरज कुमार, गुरुदीन, अनुज चौधरी** और **गोविंद**

“सरसों के बीज से तेल निकालने के बाद बचा हुआ ठोस अवशेष सरसों की खली कहलाता है। सरसों की खली या पाउडर एनपीके (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम) का एक प्राकृतिक स्रोत है, जिसका विशिष्ट अनुपात 4:1:1 होता है। इसका उपयोग जैविक खाद के रूप में किया जाता है। इसमें पोटेशियम, नाइट्रोजन, प्रोटीन, मैग्नीशियम, सल्फर और फॉस्फोरस इत्यादि पोषक तत्वों की भरपूर मात्रा पाई जाती है। आमतौर पर सरसों की खली का उपयोग टैरेस उद्यान, बालकनी उद्यान, कंटेनर उद्यान में लगे पौधों को खाद देने के लिए किया जाता है। सरसों खली की तीखी गंध होती है, जिसके कारण इसका उपयोग प्राकृतिक कीट विकर्षक के रूप में भी किया जाता है। यह पर्यावरण के अनुकूल है और इसका पौधों पर कोई भी हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है। इसके अलावा सरसों की खली का उपयोग चारे का स्वाद बढ़ाने, चारे के पोषक तत्वों में वृद्धि करने और डेरी पशुओं में दूध उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए अक्सर प्रोटीन पूरक के रूप में किया जाता है।”

सरसों की खली एक जैविक उर्वरक एवं पशु-आहार का उत्कृष्ट स्रोत है। इसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम तथा सूक्ष्म पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। ये फसलों की वृद्धि एवं उपज बढ़ाने में सहायक होते हैं। इसके प्रयोग से मृदा की संरचना एवं उर्वराशक्ति में सुधार होता है। इसका प्रयोग प्राकृतिक कीटनाशक के रूप में भी किया जाता है, जिससे विभिन्न मृदाजनित रोग एवं कीट नियंत्रित होते हैं। इससे रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों पर निर्भरता घटती है और फसल गुणवत्ता में सुधार होता है।

भाकृअनुप-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

**सरसों की खली का उपयोग खाद और ठोस रूप में**

**गमले का मिश्रण तैयार करने के लिए:** बीज या पौध लगाने से पहले मृदा में सरसों की खली मिलाकर गमले का एक उत्तम मिश्रण तैयार किया जा सकता है। मिश्रण तैयार करते समय यह सुनिश्चित करें कि खली मृदा के साथ अच्छी तरह मिश्रित हो जाए।

उद्यान के पौधों के लिए सरसों खली की मात्रा पौधे के प्रकार और मृदा की स्थिति पर निर्भर करती है। सामान्यत: सरसों खली को 1:10 के अनुपात में मृदा के साथ मिला सकते हैं। इसका मतलब है कि 10 भाग मृदा

## प्राटीन से भरपूर

सरसों की खली प्रोटीन का एक अच्छा स्रोत है, जिसमें सामान्य प्रोटीन सामग्री लगभग 40 प्रतिशत होती है। इसमें कई अन्य पोषक तत्व भी शामिल हैं:

- **वसा:** सरसों की खली में उच्च मात्रा में वसा होती है, सामान्य वसा की मात्रा लगभग 7 प्रतिशत होती है। यह वसा मुख्य रूप से असंतृप्त वसा अम्लों से बनी होता है, जिन्हें संतृप्त वसा की तुलना में अधिक स्वास्थ्यवर्धक माना जाता है।
- **फाइबर:** सरसों की खली फाइबर का एक अच्छा स्रोत है, जिसमें सामान्य फाइबर सामग्री लगभग 10 प्रतिशत होती है।
- **खनिज:** सरसों की खली में कैल्शियम, फॉस्फोरस और मैग्नीशियम सहित कई प्रकार के खनिज होते हैं, जो पशुधन की वृद्धि और विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं।
- **विटामिन:** सरसों की खली में कई प्रकार के विटामिन भी होते हैं, जिनमें विटामिन 'ई' भी शामिल है, जो एक महत्वपूर्ण एंटीऑक्सीडेंट है।

गुणों से भरपूर सरसों

के साथ 1 भाग सरसों की खली को मिलाना चाहिए। उचित मात्रा में सरसों की खली का उपयोग करने से सब्जी और फूलों की पैदावार में बढ़ोतरी होती है। मृदा तैयार करने के तुरंत बाद पौधा रोपण न करें। इसके लिए लगभग 1 सप्ताह का समय दें।

**पौधे लगे गमले की मृदा में मिलाकर**

यदि पहले से ही उद्यान या गमले में पौधे लगे हैं, तो उन पौधों पर आप सरसों की खली का सीधे इस्तेमाल कर सकते हैं। पौधे लगे गमले की मृदा की निराई-गुड़ाई करें, फिर सरसों खली को पौधे के चारों ओर मृदा पर छिड़ककर समान रूप से फैलाएं।

**तरल रूप में**

तरल रूप में सरसों की खली का उपयोग पत्तियों पर स्प्रे के रूप में और मृदा में जल देते समय किया जा सकता है। इससे पोषक तत्व सीधे पत्तियों द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं। लेकिन ध्यान रहे इसका उपयोग सही मात्रा में करें, अधिक मात्रा में प्रयोग से पौधे की पत्तियां मुरझा सकती हैं।

**सरसों की खली से तरल खाद बनाने की विधि**

- सबसे पहले 250 ग्राम सरसों की खली को 5 लीटर जल में भिगो दें। अगर सरसों की खली भिगोने के लिए कोई मटका या मिट्टी का बर्तन मिल जाए, तो बहुत अच्छा रहेगा, नहीं तो प्लास्टिक की बाल्टी में अच्छी तरह घोल लें।
- अब इसे ढक दें। अगर गर्मी का मौसम हो, तो 3-4 दिनों के लिए छोड़ दें और अगर सर्दी हो, तो 7-8 दिनों के लिए ऐसे ही छोड़ दें, ताकि ये अच्छी तरह से पक जाए। अगर 1-2 दिन ज्यादा हो जाए, तो कोई दिक्कत नहीं है। सरसों की खली के मिश्रण को रोज सुबह एक लकड़ी की छड़ी से हिलायें।
- उपरोक्त विधि के 4-5 दिनों के बाद एक गाढ़ा घोल तैयार हो जाएगा, जिसमें

## गुणकारी सरसों की खली

मृदा में सरसों की खली के प्रयोग से कई लाभ मिलते हैं। यह पौधों को कीटों से सुरक्षा प्रदान करती है। इसके साथ ही यह नेमाटोड और एफिड्स जैसे हानिकारक कीटों को भी नियंत्रित करती है। अत: सरसों की खली को एक प्राकृतिक एवं प्रभावी कीटनाशक माना जाता है।

**लाभ**

- मृदा में सरसों की खली का पाउडर मिलाने से पौधों की जड़ों से संबंधित रोगों के होने की आशंका बहुत कम हो जाती है।
- जिन पौधों में फूल और फल नहीं आ रहे हैं या बहुत कम आ रहे हैं, वहां सरसों की खली का उपयोग करना लाभकारी है। यह पौधों की उपज बढ़ाने में बहुत उपयोगी होती है। इसे खाद के रूप में मृदा में डाला जाता है। फूलों वाले पौधों में प्रत्येक 15 से 20 दिनों पर उपयोग में लाते है। फलों वाले पौधों में इसके प्रयोग से फल ज्यादा और जल्दी लगते हैं और इनकी गुणवत्ता भी अच्छी होती है।
- रासायनिक उर्वरक के स्थान पर सरसों की खली का प्रयोग बेहद फायदेमंद है। इसका पौधों और मृदा की उर्वराशक्ति पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है। इसका मुख्य उपयोग मृदा की उर्वराशक्ति को बढ़ाने के लिए किया जाता है।
- सरसों की खली मृदा में पाए जाने वाले केंचुओं के लिए एक पौष्टिक आहार का कार्य करती है।
- सरसों की खली में नाइट्रोजन 2 प्रतिशत, पोटाश 1.2 प्रतिशत तथा फॉस्फोरस 1.8 प्रतिशत पाया जाता है। इस प्रकार सरसों की खली जैविक खाद के रूप में तथा पशु पोषक तत्वों दोनों तरह से उपयोगी है।

सारणी 1. सरसों की खली में उपस्थित पोषक तत्व

| क्र.सं. | पोषक तत्व | प्रतिशत |
|---|---|---|
| 1 | शुष्क पदार्थ | 90.00 |
| 2 | कच्चा प्रोटीन | 32.50 |
| 3 | अपरिष्कृत वसा | 8.50 |
| 4 | कच्चा फाइबर | 11.50 |
| 5 | कैल्शियम | 0.71 |
| 6 | फॉस्फोरस | 1.00 |
| 7 | मेथियोनीन | 0.63 |
| 8 | लाइसिन | 1.73 |
| 9 | कोलीन | 6700 मि.ग्रा./कि.ग्रा. |
| 10 | लिनोलिक एसिड | 0.10 |
| 11 | मेटाबोलिक ऊर्जा | 2130 किलो कैलोरी/ कि.ग्रा. |

पशु आहार में लाभकारी सरसों की खली

एक तेज गंध भी आ रही होगी, जो सल्फर आदि के किण्वन के कारण आती है। इनडोर पौधों (घरों के भीतर लगाए जाने वाले पौधे) में अगर इसका प्रयोग कर रहे हैं, तो इसमें से गंध आएगी। इसे इस्तेमाल करने से पहले इसे कम से कम दो लेयर कॉटन कपड़े से छान लें। ऐसा इसलिए क्योंकि इसमें डिकम्पोज हुई सरसों खली भी मिली होती है।

- छानने के बाद यह मिश्रण काफी अच्छा हो जाता है और इसे पौधों में डाल सकते हैं। छानने के बाद इसमें से लगभग 100 मि.ली. में 1 लीटर यानी घोल के 10 गुना जल मिलाएं और पौधों की मृदा में डालें।
- हमेशा ध्यान दें कि सरसों खली की खाद जल से पतला किए बिना पौधों पर इस्तेमाल करने से पौधों को नुकसान हो सकता है। सरसों खली की खाद के पतले घोल के 100 मि.ली. का उपयोग उद्यान के प्रत्येक पौधे में 15-18 दिनों में एक बार किया जा सकता है।
- बिना छाने हुए घोल को केवल बड़े पौधों में ही डालें। गुलाब अन्य फूलदार पौधों, सेक्यूलेट्स आदि में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसे कम से कम 15 दिनों के अंतर से ही डालें और अगर बारिश या नम मौसम है, तो 25-30 दिनों के अंतर से इस्तेमाल करें। कैक्टस, अडेनियम और इनडोर पौधों (घरेलू पौधे) पर सरसों खली को खाद के रूप में कभी उपयोग न करें।

**बगीचे में सरसों खली के उपयोग करने में सावधानियां**

सरसों की खली के पाउडर एक उत्कृष्ट जैविक खाद है, जो पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है। इसका उपयोग करते समय निम्न सावधानियां बरतना महत्वपूर्ण है:

- सरसों की खली के पाउडर में तेज गंध होती है, इसलिए इसका उपयोग करते समय मास्क और दस्ताने अवश्य पहनें एवं आंखों को छूने से बचें। इससे आंखों में जलन हो सकती है।
- यह एक प्रभावी उर्वरक है, अतः इसका अधिक प्रयोग न करें। इससे पौधों की जड़ें मुरझा सकती हैं।
- सरसों की खली को बच्चों और पालतू पशुओं से दूर रखें। इसका सेवन हानिकारक हो सकता है।
- बगीचे में सरसों खली का इस्तेमाल सुबह या शाम के समय करें, तेज धूप में स्प्रे करने से पौधों की पत्तियां मुरझा सकती हैं।

कुल मिलाकर, सरसों की खली एक पोषण से भरपूर उर्वरक एवं चारा है। इसका उपयोग अक्सर पशुओं के आहार को पूरक करने के लिए किया जाता है, ताकि उन्हें दूध या मांस के विकास और उत्पादन के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान किए जा सकें। ■

## पशु आहार में उपयोगी

पशुओं के चारे में सरसों की खली का उपयोग बहुत लोकप्रिय है। गाय, भैंस, बकरी, भेड़, ऊंट आदि पशुओं की वृद्धि एवं विकास में यह सहायक है। डेरी पशुओं में दूध उत्पादन को बढ़ाने के लिए इसे अक्सर प्रोटीन पूरक के रूप में उपयोग किया जाता है। सरसों की खली कीमत के मामले में भी सबसे किफायती विकल्प है। प्रोटीन की वृद्धि से यह तिल या सोयाबीन की खली के लगभग समान है, लेकिन इसकी कीमत अपेक्षाकृत कम होती है।

जलवायु परिवर्तन के कारण देश में पशुओं के हरे चारे की कमी हो जाती है। ऐसे में पशुओं को सिर्फ सूखा चारा खिला कर काम चलाना पड़ता है। इससे पशुओं का पेट तो भर जाता है, लेकिन सूखा चारा दूध उत्पादन को काफी हद तक कम कर देता है। यही कारण है कि सूखे चारे के साथ पशुओं को सरसों की खली खिलाने की सलाह दी जाती है। दुधारू पशुओं के लिए सूखे चारे में सरसों की खली की सानी की जाती है, जिससे पशु आसानी से सूखा चारा खा लेता है। खली की सानी से चारे का स्वाद बढ़ जाता है और इसके पोषक तत्वों में भी वृद्धि हो जाती है। इसके कारण दुधारू पशुओं दूध की क्षमता बढ़ जाती है।

# बदलती जलवायु एवं अजैविक तनावों के अनुकूल खेती

**अनुज कुमार, मंगल सिंह, मामृथा एच.एम., रिंकी, वनिता पाण्डेय, अश्वनी कुमार आर्य, हर्ष देव चौधरी** और **अरुण शर्मा**

" हाल के वर्षों में जलवायु परिवर्तन, अजैविक तनावों (जैसे-सूखा, बाढ़, लवणता) और भूमि का क्षरण जैसी चुनौतियों ने कृषि क्षेत्र की स्थिरता और उत्पादकता को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। जलवायु परिवर्तन का आशय पृथ्वी के जलवायु तंत्र में होने वाले दीर्घकालिक परिवर्तनों से है, जो विशेष रूप से तापमान, वर्षा, आर्द्रता और मौसमी चक्रों की असामान्यता के रूप में परिलक्षित होते हैं। उदाहरणस्वरूप, वैश्विक औसत तापमान में अब तक 1.1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो चुकी है। ऐसा अनुमान है कि वर्ष 2050 तक यह तापमान 2.0-2.5 डिग्री सेल्सियस वृद्धि तक पहुंच सकता है। गत एक सदी के दौरान, वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों (विशेषकर सीओ$_2$, सीएच$_4$ और एन$_2$ओ) की मात्रा में 50 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि देखी गई है। वर्तमान में वायुमंडलीय सीओ$_2$ की सांद्रता 420 पीपीएम तक पहुंच चुकी है, जो पूर्व-औद्योगिक स्तर (280 पीपीएम) की तुलना में अत्यधिक है। "

अजैविक तनाव ऐसे गैर-जीवित पर्यावरणीय कारकों को संदर्भित करता है, जो पौधों की सामान्य जैविक क्रियाओं जैसे अंकुरण, वृद्धि, प्रकाश संश्लेषण, पुष्पण और फलन को बाधित करते हैं। तापीय तनाव, जल संकट या सूखा, लवणीयता, अत्यधिक वर्षा, बाढ़ एवं वायुमंडलीय प्रदूषण (ओजोन, सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड्स) जैसे कारक पौधों के विकास में बाधा के कारण बनते हैं।

भाकृअनुप-भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल

वैश्विक स्तर पर अजैविक तनावों के कारण 30-50 प्रतिशत तक फसल क्षति होने का अनुमान है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग 80 मिलियन हैक्टर कृषि भूमि सूखे से प्रभावित है। इन विविध प्रकार के तनावों के परिणामस्वरूप पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित होती है। जलवायु परिवर्तन के विभिन्न कारकों जैसे-तापमान में वृद्धि, सूखा, वर्षा आदि पर सभी का ध्यान गया है। क्षारीय एवं लवणीय मृदा के क्षेत्र विस्तार ने एक नई चुनौती को जन्म दिया है।

क्षारीय एवं लवणीय मृदा की बढ़ती मात्रा एक गंभीर पर्यावरणीय और कृषि समस्या है, जो मृदा की गुणवत्ता, कृषि उत्पादन और पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित करती है। इसके साथ ही यह आज कृषि और पर्यावरण के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुकी है। इन मृदा में लवणों और सोडियम की अत्यधिक मात्रा पाई जाती है। इससे मृदा की संरचना, जलधारण क्षमता और उर्वराशक्ति प्रभावित होती है।

अत्यधिक सिंचाई, अनुचित जल निकासी, रासायनिक उर्वरकों का अधिक प्रयोग और जलवायु परिवर्तन इसके प्रमुख कारण हैं। जब खेतों में बार-बार सिंचाई की जाती है और जल

का निकास ठीक से नहीं हो पाता, तो जल वाष्प बनकर उड़ जाता है एवं लवण सतह पर जमा हो जाते हैं। इससे मृदा कठोर, बंजर और क्षारीय हो जाती है। इससे फसलों की जड़ें सही ढंग से पोषक तत्व नहीं ले पाती और उत्पादकता में भारी कमी आती है। लंबे समय तक यह स्थिति रहने पर भूमि कृषि कार्य के लिए अनुपयोगी हो जाती है।

इस समस्या के समाधान के लिए जैविक खाद का प्रयोग, जल निकासी सुधार, जिप्सम जैसे सुधारक पदार्थों का उपयोग और लवणता सहनशील फसलों की खेती जैसे उपाय आवश्यक हैं। यदि समय रहते प्रभावी कदम नहीं उठाए गए, तो यह समस्या कृषि अर्थव्यवस्था और खाद्य सुरक्षा पर गंभीर असर डाल सकती है।

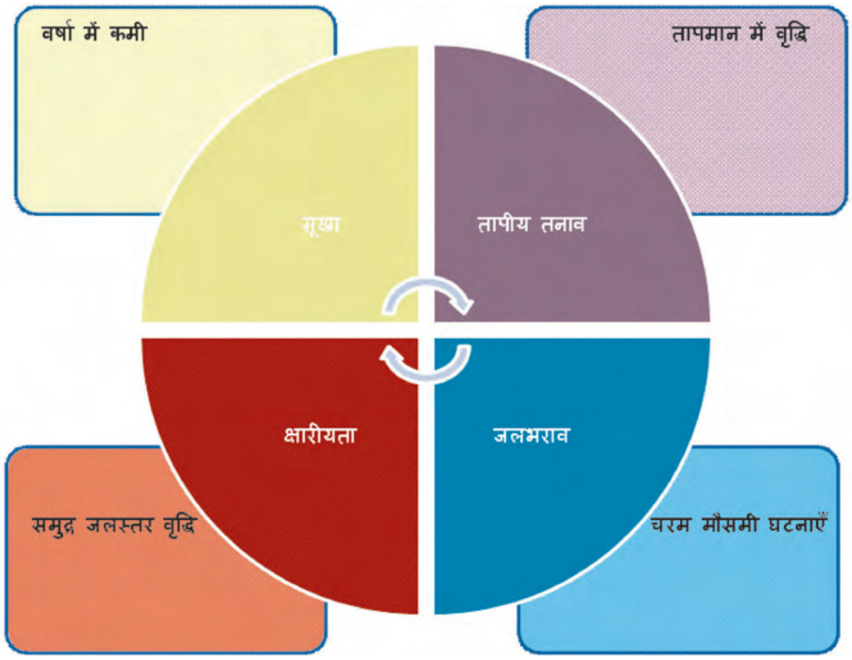

जलवायु परिवर्तन और अजैविक तनाव का संबंध

### गेहूं पर प्रभाव

भारत में वर्तमान गेहूं की औसत उत्पादकता लगभग 3.6 टन प्रति हैक्टर है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के कारण यह उत्पादकता गंभीर रूप से ग्रस्त हो रही है। आईपीसीसी (वर्ष 2021) की रिपोर्ट के अनुसार, वैश्विक औसत तापमान में 1.1 डिग्री सेल्सियस और भारत में 0.7 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो चुकी है। यह तापमान वृद्धि विशेष रूप से उत्तर भारत के गेहूं उत्पादक क्षेत्रों को प्रभावित कर रही है, जहां 10-15 प्रतिशत तक उत्पादकता में कमी दर्ज की गई है।

एक शोध के अनुसार, प्रत्येक 1 डिग्री सेल्सियस तापमान वृद्धि पर गेहूं की उपज में 6 से 10 प्रतिशत तक कमी आ सकती है। एक अनुमान के अनुसार, यदि तापमान में 2.5 से 4.9 डिग्री सेल्सियस तक वृद्धि होती है, तो गेहूं की पैदावार में 41 से 52 प्रतिशत तक जबकि धान की पैदावार में 32 से 40 प्रतिशत की कमी संभव है। विशेष रूप से गंगा के मैदानी क्षेत्रों में, वर्ष 2030 तक गेहूं की उपज में 25-30 प्रतिशत की कमी होने की आशंका है।

ताप तनाव के कारण गेहूं की उपज न केवल कम होती है, बल्कि गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। उच्च तापमान के कारण दानों का आकार छोटा और प्रोटीन की मात्रा घट जाती है। इसके साथ ही, जब तापमान 32 डिग्री सेल्सियस से अधिक हो जाता है, तो गेहूं के पौधों में पत्तियों का क्षेत्र सूखने लगता है और क्लोरोफिल की मात्रा में भी कमी देखी जाती है। इन सभी प्रभावों के परिणामस्वरूप, खेती की लागत में भी वृद्धि होती है। इससे किसानों पर आर्थिक बोझ और अधिक बढ़ता है।

## नीतिगत पहल एवं वैज्ञानिक प्रयास

भारत में जलवायु परिवर्तन एवं अजैविक तनावों से निपटने के लिए नीतिगत पहल और वैज्ञानिक प्रयास बहुस्तरीय ढंग से किए जा रहे हैं। सरकार द्वारा शुरू किया गया 'राष्ट्रीय अनुकूलन मिशन', सतत कृषि और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देने की दिशा में एक अहम कदम है। भाकृअनुप ने वैज्ञानिक अनुसंधान के तहत सूखा और लवणता प्रतिरोधी बीजों का विकास किया है। इससे संवेदनशील क्षेत्रों जैसे-पंजाब, उत्तर प्रदेश और मध्य भारत में फसल उत्पादकता को बनाए रखने में मदद मिल रही है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर, एफएओ और यूएनएफसीसी जैसी संस्थाएं वैश्विक अनुकूलन परियोजनाओं के माध्यम से तकनीकी और नीतिगत सहयोग दे रही हैं। भारत में किसानों को जल संरक्षण, सिंचाई और वर्षा जल संचयन जैसी तकनीकों का प्रशिक्षण देकर उन्हें आत्मनिर्भर और जलवायु अनुकूल बनाया जा रहा है। इसी दिशा में राष्ट्रीय जलवायु प्रतिरोधक कृषि परियोजना (एनआईसीआरए), जिसे भाकृअनुप द्वारा संचालित किया जा रहा है, प्रमुख भूमिका निभा रहा है। इसमें तनाव-प्रतिरोधी बीजों का वितरण, जल संचयन संरचनाओं की स्थापना और किसानों को प्रशिक्षित करने जैसे कार्य किए जा रहे हैं। इसके साथ ही, कीट और खरपतवार नियंत्रण के लिए समेकित कीट प्रबंधन (आईपीएम) और समेकित खरपतवार प्रबंधन (आईडब्ल्यूएम) जैसी तकनीकों को अपनाकर कृषि प्रणाली को अधिक अनुकूल और टिकाऊ बनाया जा रहा है।

## आर्थिक प्रभाव

### नुकसान का मूल्यांकन

इंडियन काउंसिल फॉर रिसर्च ऑन इंटरनेशनल इकोनॉमिक रिलेशंस (आईसीआर आईईआर) की एक रिपोर्ट के मुताबिक, वर्ष 2022 में केवल उष्मीय तनाव के कारण भारत को गेहूं उत्पादन में करीब 15,000 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ।

### कृषि बीमा पर असर

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएम एफवाईबी) के अंतर्गत, जलवायु से जुड़ी घटनाओं की वजह से दावों में तेजी देखी गई है। वर्ष 2021-22 में हीटवेव के कारण बीमा क्लेम में 28 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इससे सरकार पर वित्तीय बोझ बढ़ा है।

### निर्यात पर प्रभाव

भारत, गेहूं का महत्वपूर्ण निर्यातक है। वर्ष 2023 में उत्पादन घटने के कारण निर्यात में 18 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई। यह विदेशी मुद्रा आय को प्रभावित करता है और भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संतुलन को बिगाड़ता है।

### ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर दबाव

भारत में करीब 12 करोड़ लोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से गेहूं उत्पादन से जुड़े हैं। उत्पादन में कमी का असर श्रमिक, ट्रांसपोर्ट,

मंडी नेटवर्क और स्थानीय बाजारों तक फैलता है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक असमानता और तनाव और अधिक गहराता है।

### समाधान और नीतियां

**ताप सहिष्णु किस्मों का विकास और अंगीकरण**

भाकृअनुप और सिमिट जैसी संस्थान ताप सहनशील गेहूं की किस्में विकसित कर रहे हैं। इन किस्मों को बड़े पैमाने पर किसानों तक पहुंचाना होगा ताकि वे जलवायु जोखिमों से सुरक्षित रह सकें। विभिन्न क्षेत्रों के लिए अनुशंसित किस्में:

**उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों के लिए**

- **सिंचित, अगेती बुआई:** डीबीडब्ल्यू 370, डीबीडब्ल्यू 371, डीबीडब्ल्यू 372, पीबीडब्ल्यू 872, डब्ल्यूएच 1270, डीबीडब्ल्यू 303, डीबीडब्ल्यू 187, डीबीडब्ल्यू 332, डीबीडब्ल्यू 327।
- **सिंचित, समय से बुआई:** पीबीडब्ल्यू 826, एचडी 3406, डीबीडब्ल्यू 222, एचडी 3226, पीबीडब्ल्यू 723, एचपीबीडब्ल्यू 01, डब्ल्यूएच 1105, एचडी 3086।
- **सीमित सिंचाई:** एचआई 1653, एचआई 1654, एचयूडब्ल्यू 838, डीबीडब्ल्यू 296, एनआईए डब्ल्यू 3170, एचडी 3237, एचडी 3043, एचआई 1620, एचआई 1620।
- **सिंचित, पछेती बुआई:** जेकेडब्ल्यू 261, पीबीडब्ल्यू 752, डीबीडब्ल्यू 173।

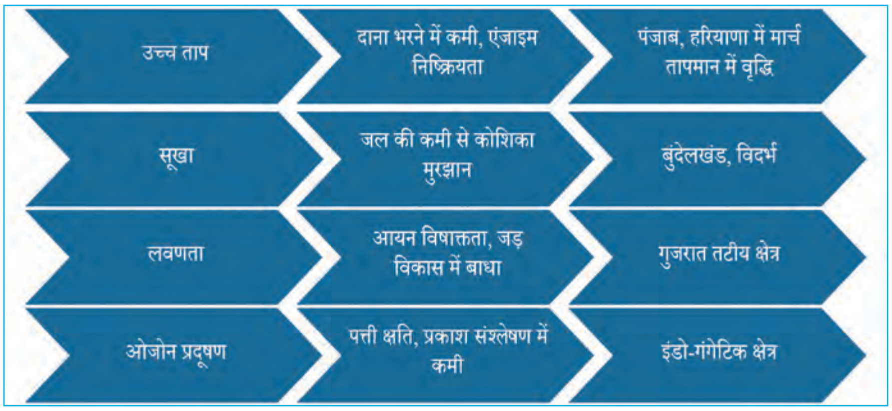


गेहूं उतपादन पर विभिन्न अजैविक तनावों का प्रभाव

**उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए**

- **सिंचित, समय से बुआई:** पीबीडब्ल्यू 826, डीबीडब्ल्यू 187, एनडब्ल्यू 5054, डीबीडब्ल्यू 39, डीबीडब्ल्यू 222, एच डी 2967, एच डी 3411, एच डी 3086।
- **सिंचित, पछेती बुआई:** डीबीडब्ल्यू 316, पीबीडब्ल्यू 833, डीबीडब्ल्यू 107, एच डी 2985, एचडी 3118, एचआई 1621, एचडी 3271।
- **सीमित सिंचाई:** एचडी 3293, डीबीडब्ल्यू 252, एचआई 1612।
- **वर्षा आधारित, समय से बुआई:** के 1317, एचडी 3171।

**मध्य क्षेत्रों के लिए**

- **सिंचित, समय से बुआई:** डीबीडब्ल्यू 303, डीबीडब्ल्यू 187, एचआई 1650, एमए सीएस 6768, जीडब्ल्यू 513, एच आई 1636, एचआई 1544, जीडब्ल्यू 366।
- **सिंचित, पछेती बुआई:** एचडी 3407, एचआई 1634, सीजी 1029, राज 4238 26, एमपी 3336, एमपी 1203।
- **सीमित सिंचाई:** सीजी 1036, एचआई 1655, डीबीडब्ल्यू 110, एमपी 3288।

**प्रायद्वीपीय क्षेत्रों के लिए**

- **सिंचित, समय से बुआई:** डीबीडब्ल्यू 168, एमएएसएस 6478, यूएएस 304, एमएसीएस 6222।
- **सिंचित, पछेती बुआई:** एचआई 1633, एचडी 3090, एकेएडब्ल्यू 4627, एचडी 2932।
- **सीमित सिंचाई:** एमपी 1358, एनआईएडब्ल्यू 3170, एचआई 1605।
- **वर्षा आधारित:** यूएएस 375, यूएएस 347।

**उत्तरी पर्वतीय क्षेत्रों के लिए**

- **वर्षा आधारित, अगेती बुआई:** एचएस 542, एचपीडब्ल्यू 251।
- **वर्षा आधारित, सीमित सिंचाई, समय से बुआई:** वीएल 2041, एचएस 562, एचपीडब्ल्यू 349, वीएल 907, एचएस 507।
- **सीमित सिंचाई, पछेती बुआई:** एचएस 490, वीएल 892।

**लवणीय एवं क्षारीय मृदा के लिए गेहूं एवं जौ की विकसित किस्में**

लवणीय एवं क्षारीय मृदा में खेती करना चुनौतीपूर्ण होता है। इनमें लवणों की अधिकता या पी-एच मान का उच्च स्तर फसलों की वृद्धि को प्रभावित करता है। भारत में कई संस्थानों ने ऐसी परिस्थितियों के लिए विशेष किस्में विकसित की हैं।

**गेहूं की किस्में:** केआरएल 1-4, केआरएल 210, केआरएल 19, राज 3077, केआरएल 213, केआरएल 283।

## अजैविक तनावों का प्रभाव

- दिन का तापमान 35 डिग्री सेल्सियस से अधिक होने पर गेहूं का विकास प्रभावित होता है। बाली में दाना भरने की प्रक्रिया के दौरान भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- वर्षा की अनियमितता और भूमिगत जल का अत्यधिक दोहन सिंचाई की उपलब्धता को सीमित करते हैं। इससे सूखा पड़ने की स्थिति में पौधों की कोशिकीय गतिविधि धीमी पड़ जाती है।
- अत्यधिक वर्षा होने से खेतों में जलभराव की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इससे फसलों की जड़ें सड़ने लगती हैं और पोषक तत्वों का अवशोषण बाधित हो जाता है।
- अनियमित सिंचाई और जल निकास की अव्यवस्था के कारण मृदा में लवणता बढ़ती है। इससे पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- वायुमंडल में उत्पन्न होने वाली ओजोन, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड एवं सल्फर डाइऑक्साइड जैसी गैसें पौधों की कोशिकाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं।
- प्रकाश की अपर्याप्तता के कारण पौधों की वानस्पतिक वृद्धि प्रभावित होती है, फलस्वरूप उपज में कमी आती है।

गेहूं की तनाव सहिष्णु किस्म

**जौ किस्मेः** के 125, आर 2552, बीएच 924, आरडी 2508, आईसीबी 100126।

**पौधों में सहनशीलता विकसित करना**

**जैव प्रौद्योगिकी एवं क्रिस्पर कैस-9 आधारित जीन संपादन**

आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी की मदद से ऐसे तनाव सहनशील जीनों की पहचान और समावेशन किया जा रहा है, जो पौधों को तापीय, जल-घटक या लवणीय परिस्थितियों में भी जीवित रहने और उत्पादक रहने में मदद करते हैं। उदाहरण के लिए, TaHSP (हीट शॉक प्रोटीन, जीन पौधों को उच्च तापमान से बचाता है। इन जीनों को लक्षित फसलों में स्थानांतरित कर उनकी सहनशक्ति में वृद्धि की जाती है।

**प्राकृतिक चयन और पारंपरिक प्रजनन**

पारंपरिक तरीके से प्राकृतिक चयन द्वारा उन पौधों का चयन किया जाता है, जो कठिन परिस्थितियों में जीवित रहते हैं। ऐसे पौधों का पुनः प्रजनन कर सहनशील किस्में तैयार की जाती हैं। यह जैविक दृष्टि से सुरक्षित एवं दीर्घकालिक समाधान होता है।

**सूक्ष्म जैविकीय समाधान**

कुछ लाभकारी जीवाणु और कवक, जैसे-एजोस्पिरिलम, बैसिलस और ट्राइकोडर्मा, पौधों की जड़ों के साथ सहजीविता में रहते हुए पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ाते हैं। हार्मोन उत्पन्न करते हैं और तनाव-सहिष्णुता में वृद्धि करते हैं। इससे पौधे जल-संरक्षण, लवणता और तापीय ताप के प्रति अधिक सहनशील बनते हैं।

**ब्रासिनोस्टेरॉइड (बीआरएस) का प्रयोग**

ब्रासिनोस्टेरॉइड एक प्रकार के पादप हार्मोन होते हैं, जो ताप सहिष्णुता बढ़ाने में विशेष भूमिका निभाते हैं। बीआरएस के प्रयोग से पत्तियों में क्लोरोफिल की मात्रा बनी रहती है और प्रोटीन संरचनाओं को उच्च तापमान में स्थायित्व मिलता है, जिससे पौधा लंबे समय तक सक्रिय रहता है।

**जैव उत्तेजकों (बायोस्टिमुलेंट्स) का उपयोग**

समुद्री शैवाल अर्क, ह्यूमिक एसिड और अमीनो अम्ल जैसे जैव उत्तेजक (बायोस्टिमुलेंट) पौधों की तनाव प्रतिक्रिया को नियंत्रित करते हैं। ये पदार्थ ऑक्सीकरण-रोधी एंजाइमों को सक्रिय कर कोशिकीय क्षति को कम करते हैं। जैव उत्तेजकों के प्रयोग से सूखा एवं लवणीय सहनशीलता में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है।

**स्मार्ट सिंचाई और जल प्रबंधन**

टपक और फव्वारा सिंचाई तकनीकें न केवल जल संसाधनों की बचत करती हैं, बल्कि जड़ क्षेत्रो में आवश्यक नमी स्तर बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। राज्य सरकारों को इन प्रणालियों पर अनुदान और तकनीकी समर्थन पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

गेहूं की उन्नत किस्म डीडब्ल्यू-327

**पूर्वानुमान आधारित निर्णय प्रणाली**

उपग्रह चित्रण, मौसम डेटा और मोबाइल एप्लीकेशन के माध्यम से किसानों को समय के अनुसार चेतावनी और परामर्श प्रदान किया जाता है। 'किसान सुविधा' जैसे डिजिटल प्लेटफॉर्म को उन्नत और सुलभ बनाया जाना चाहिए। विभिन्न डिजिटल प्लेटफार्मो से मिलने वाली सूचना के आधार पर मौसम पूर्वानुमान को देखते हुए कृषि क्रियाकलापों को क्रियान्वित एवं बदलाव किया जा सकता है।

**कृषि बीमा की पहुंच और पारदर्शिता**

बीमा योजनाओं को किसानों की जरूरतों के हिसाब से तैयार किया जाना चाहिए। मोबाइल के माध्यम से दावा दाखिल करना और उसकी स्थिति जानना आसान बनाना आवश्यक है।

जलवायु परिवर्तन एक गम्भीर वैश्विक समस्या है। इसका फसल उत्पादन एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक आपदाओं जैसे-सूखा, बाढ़, समुद्री तूफान, अलनीनो की बारम्बारता में बढ़ोत्तरी होती जा रही है।

आज बढ़ती मानवीय गतिविधियों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति, प्राकृतिक-संसाधनों का अंधाधुंध प्रयोग को इन समस्याओं की मूल माना जा रहा है। इनका उपयोग समुचित एवं सन्तुलित मात्रा में किया जाना आवश्यक है।

किसी स्थान की जलवायु स्थिरता वहां की कृषि, आमदनी, रोजगार, जल-जीवन, समाज एवं संस्कृति को प्रोत्साहित करते हुए स्थायित्व प्रदान करती है। इसलिए सभी को एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में पर्यावरणीय परितंत्र को स्वच्छ एवं स्थायी बनाए रखने में अपनी भूमिका निभाने के साथ-साथ पर्यावरणीय जागरुकता को जन-जन तक पहुंचाने की आवश्यकता है।

## पारिस्थितिकी पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन और अजैविक तनावों का पारिस्थितिकी पर गहरा और बहुआयामी प्रभाव पड़ रहा है। इससे पूरे पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता संकट में है। सबसे प्रमुख प्रभाव जैव विविधता में कमी के रूप में देखा जा रहा है, जहां अनेक पौधों, पशुओं और सूक्ष्म जीवों की प्रजातियां या तो लुप्त हो रही हैं या अपने पारंपरिक आवासों से विस्थापित हो रही हैं। इसके साथ ही, प्राकृतिक आवासों का विनाश जैसे जंगलों की कटाई, आर्द्र मृदा का सूखना और चरागाहों का सिमटना-पारिस्थितिकी को और कमजोर बना रहा है। इससे पारिस्थितिक सेवाएं, जैसे परागण, जल शुद्धिकरण और पोषक चक्र बाधित हो रहे हैं। तापमान और नमी में असंतुलन के कारण कीटों और रोगवाहक जीवों की संख्या में वृद्धि हो रही है, जिससे फसलें और मानव स्वास्थ्य दोनों प्रभावित हो रहे हैं। इन सभी परिवर्तनों का समग्र परिणाम यह है कि पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ गया है, जिससे खाद्य शृंखला, जैव-भौतिक प्रक्रियाएं और जलवायु नियमन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। यदि यह प्रवृत्ति जारी रही, तो यह न केवल पारिस्थितिक प्रणालियों को अपूरणीय क्षति पहुंचा सकती है, बल्कि मानव अस्तित्व को भी संकट में डाल सकती है।

# नवम्बर के मुख्य कृषि कार्य

**राजीव कुमार सिंह, कपिला शेखावत, एस.एस. राठौर, आदित्य सिंह** और **अंजली पटेल**

" नवम्बर, सर्दी का यह महीना किसानों के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है। इसमें किसान भाइयों का काम करने का साहस और उत्साह दोनों ही चरम पर होते हैं। इस महीने में खरीफ फसलों की कटाई लगभग पूरी हो जाती है और किसान अपनी भूमि को अगली फसल के लिए तैयार करते हैं। ठंड के मौसम की शुरुआत के साथ मृदा में पर्याप्त नमी रहती है, जो रबी फसलों जैसे-गेहूं, जौ, चना, मटर, सरसों, मसूर इत्यादि की बुआई के लिए अनुकूल होती है। नवम्बर में किसान खेत की जुताई, बुआई, खाद एवं सिंचाई जैसे कार्यों पर विशेष ध्यान देते हैं। इसके साथ ही, इस समय फलों और सब्जियों की नई फसलें भी लगाई जाती हैं। इस प्रकार, नवम्बर माह कृषि गतिविधियों की दृष्टि से एक सक्रिय और निर्णायक समय होता है, जो आने वाले मौसम की फसलों की उपज पर सीधा प्रभाव डालता है। इस अंक में नवम्बर माह में किये जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों का विस्तृत विवरण दिया जा रहा है। "

नवम्बर में मौसम में ठंडक और नमी की उपस्थिति फसलों की वृद्धि तथा अंकुरण के लिए अनुकूल रहती है। इससे किसान नए सीजन की तैयारी में जुट जाते हैं। इस माह विभिन्न रबी फसलों की बुआई की जाती है। मृदा में नमी बनाए रखना, पहली सिंचाई का उचित समय का निर्धारण करना अति आवश्यक है। इसके साथ ही विभिन्न कृषि कार्यों के संयोजन पर भी ध्यान देना आवश्यक है, जिसका विवरण इस प्रकार है:

सस्य विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110 012

**गेहूं**

- **बुआई का समय:** उत्तरी-पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में सिंचित दशा में गेहूं की बुआई का उपयुक्त समय नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा है तथा उत्तरी-पूर्वी भागों में मध्य नवम्बर तक इससे हर हाल में पूरी कर लें। इसी प्रकार बारानी क्षेत्रों में अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक बुआई करना उत्तम रहता है। यदि भूमि में संरक्षित नमी प्रचुर मात्रा में है तो बुआई 15 नवम्बर तक कर सकते हैं।
- **भूमि का चयन व तैयारी:** गेहूं की खेती के लिए अधिक जल धारण क्षमता वाली दोमट, बलुई दोमट और मटियार दोमट भूमि उपयुक्त होती है। इसका पी-एच मान 7-7.5 होना चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के पश्चात 3-4 जुताइयां मिट्टी पलटने वाले हल या कल्टीवेटर से करने के बाद पाटा लगाकर खेत को अच्छी तरह समतल कर लेना चाहिए। खेत की तैयारी करते समय यह ध्यान रखें कि बुआई के समय नमी की मात्रा उपयुक्त हो अन्यथा जमाव पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता हैं। अगर

सारणी 1. विभिन्न अवस्थाओं के लिए संस्तुत उन्नत प्रजातियां

| क्र.स. | क्षेत्र | सिंचित/ असिंचित | बुआई का समय | उन्नत किस्में |
|---|---|---|---|---|
| 1. | उत्तर-पश्चिमी एवं उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र | सिंचित | समय से बुआई (05 नवम्बर से 25 नवम्बर) | एचडी 3386, एचडी 3388, एचडी 3411, एचडी 3369, एचडी 3406, एचडी 3407, एचडी 3298 आदि। |
| 2. | उत्तर-पश्चिमी एवं उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र | सिंचित | देरी से बुआई (25 नवम्बर से 25 दिसम्बर) | एचडी-3271, एचआई-1621, एचडी-3018, एचडी-3167, (नई किस्में व सीमित सिंचाई), एचडी-3117, एचडी-3059, एचडी-3118, एचडी 2985, एचडी 2643, एचडी 2824, एचडी 2864, एचडी 2932, एचआई 1563, के-9533 एवं जेकेडब्ल्यू 261 आदि। |
| 3. | उत्तर-पश्चिमी एवं उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र | असिंचित | समय से बुआई (05 नवम्बर से 25 नवम्बर) | एचडी-3369, एचडी 3293, एचडी 3237, एचडी 2733, एचडी 2824 आदि। |
| 4. | लवणीय एवं क्षारीय मृदा के लिए | | | केआरएल 283, करण श्रिया (डीबीडब्ल्यू 252), केआरएल 19, केआरएल 213, केआरएल 210, एचकेआरएल 1-4, एस 240, एचएस 420, के-8434 (प्रसाद), एनडब्ल्यू-1067, डब्ल्यू 1142 आदि। |
| 5. | अत्यधिक जलवायु सहिष्णु (सूखा/नमी तनाव/जल तनाव/सीमित जल/कम वर्षा) प्रजातियां | | | डब्ल्यूएच 1124, डीबीडब्ल्यू 107, डब्ल्यूएच 1142, यूएएस 347 आदि। |
| 6. | उच्च टर्मिनल ताप/तापमान के प्रति सहनशील प्रजातियां | | | डब्ल्यूएच 1124, डीबीडब्ल्यू 107, छत्तीसगढ़ गेहूँ 4 (सीजी 1015), सीओडब्ल्यू 3 (ब्रेड गेहूं), डीबीडब्ल्यू 173 आदि। |
| 7. | ताप तनाव सहनशील प्रजातियां | | | पूसा गेहूं 1612 (एचआई 1612), पूसा गेहूं 8777 (एचआई 8777), एचडी 3293, सीजी 1029 (कनिष्कि आदि। |
| 8. | बायो-फोर्टिफाइड प्रजातियां | | | एचडी 3386 (प्रोटीन 11.07 प्रतिशत), एचडी 3410 (उच्च प्रोटीन 12.6 प्रतिशत), पूसा गेहूं 8802 (उच्च प्रोटीन 13.3 प्रतिशत), पूसा गेहूं 8805 (उच्च प्रोटीन 12.4 प्रतिशत और आयरन 40.4 पीपीएम), कृषि धारा सूर्या (यूएएस 478) (पीला रंगद्रव्य 7.7 पीपीएम, जिंक 38.1 पीपीएम और आयरन 37.8 पीपीएम) आदि। |

नमी उचित मात्रा में नहीं है, तो बुआई से पूर्व पलेवा अवश्य कर लें।

- **किस्मों का चयन:** गेहूं की खेती की सफलता एवं उससे प्राप्त लाभ विशेष रूप से उन्नतशील प्रजातियों के चयन पर आधारित है।
- **बीज दर:** बीज दर भूमि की दशा, दानों के आकार, अंकुरण प्रतिशत, बुआई का समय एवं बुआई की विधि पर निर्भर करती है। सिंचित क्षेत्रों में समय से बुआई के लिए 100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर बीज पर्याप्त होता है, जबकि देरी से बुआई के लिए 125 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर बीज की आवश्यकता होती है। बारानी क्षेत्रों में समय से बुआई के लिए 75 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर बीज की आवश्यकता होती है। लवणीय/क्षारीय मृदा के लिए बीज दर 125 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर रखनी चाहिए।
- **बीजोपचार:** बीजजनित रोगों से बचाव हेतु 2.0 ग्राम वीटावैक्स या 2.5 ग्राम कार्बेण्डाजिम या 2.0 ग्राम थीरम या 2.5 ग्राम मैंकोजेब नामक दवा से प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बुआई से पूर्व उपचारित करें। ईयर कॉकल तथा कंडुआ रोग से बचाव हेतु रोगग्रस्त बीजों को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोकर नीचे बचे स्वस्थ बीज को अलग छांटकर साफ पानी से धोयें। इसके बाद सुखाकर बुआई करें। दीमक के नियंत्रण हेतु 600 मि.ली. क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को आवश्यकतानुसार पानी में घोलकर 100 कि.ग्रा. बीजों पर समान रूप से छिड़ककर उपचारित करें।
- **बुआई की विधि:** सीडड्रिल से बुआई काफी लोकप्रिय हो रही है। इससे बीज की गहराई तथा पंक्तियों की दूरी नियंत्रित रहती है तथा अंकुरण अच्छा होता है। साथ ही विभिन्न परिस्थितियों में बुआई हेतु फर्टी-सीडड्रिल, जीरो टिलेज, फर्ब ड्रिल-मेड़ों पर बुआई, रोटरी टिलेज आदि मशीनों का प्रचलन भी बढ़ रहा है।
- इसी प्रकार फसल अवशेष को बिना साफ किए हुए अगली फसल के बीज बुआई के लिए रोटरी-टिल ड्रिल एवं हैपी सीडर भी उपयोग में लाई जा रही है। सामान्यत: गेहूं की फसल में पंक्तियों की दूरी बुआई के समय, मृदा की दशा एवं सिंचाइयों की उपलब्धता पर निर्भर करती है।
- सिंचित तथा समय से बुआई हेतु पंक्तियों की दूरी 22.5 सें.मी. एवं देरी से बुआई पर तथा ऊसर भूमि में पंक्तियों की दूरी 15-18 सें.मी. रखनी चाहिए। सामान्य दशाओं में बौनी प्रजाति के बीजों को लगभग 5 सें.मी. गहरा बोना चाहिए, ज्यादा गहराई में बुआई से अंकुरण तथा उपज पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
- **खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग:** अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद 10 टन प्रति हैक्टर बुआई के एक माह पहले डालें। तीन वर्ष में कम से कम एक बार खाद अवश्य डालें। उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना उचित रहता है।
- सिंचित एवं समय से बुआई के लिए 150:60:50 नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश कि.ग्रा./हैक्टर एवं सिंचित और देर से बुआई के लिए 120:60:50 नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश कि.ग्रा./हैक्टर एवं वर्षा आधारित बुआई के लिए 60:30:20 नाइट्रोजन, फॉस्फोरस

सारणी 2. गेहूं की फसल में रासायनिक खरपतवार प्रबंधन

| खरपतवार | शाकनाशी रसायन | मात्रा ग्राम ए.आई./हैक्टर | प्रयोग का समय |
|---|---|---|---|
| संकरी पत्ती वाले घास के लिए | क्लोडिनाफॉप (टोपिक 15 डब्ल्यू.पी.) | 60 (400) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | फीनाक्साप्रॉप-ईथाइल | | |
| | (प्यूमा सुपर 10 ई.सी.) | 100-120 (1000-1200) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | पीनाक्साडेन (एक्सिल 5 ई.सी.) | 35-40 (700-800) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | सल्फोसल्फ्यूरॉन (लीडर 75 डब्ल्यू.जी.) | 25 (33.3) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | आइसोप्रोटयूरॉन (एरिलान 75 डब्ल्यू.पी.) | 1000 (1333) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | पेण्डीमेथिलीन (स्टॉम्प 30 ई.सी.) | 1000-1500 (3333-4950) | बुआई के 1-3 दिनों के अंदर |
| चौड़ी पत्ती वाले घास के लिए | 2,4-डी.-ई (बीड वार 38 ई.सी.) | 500 (1315) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | मेटसलफ्यूरॉन (अलग्रिप 20 डब्ल्यू.पी.) | 4 (20) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | कारफेनटाजोन (अफ्रीनीटी 50 डब्ल्यू.डी.जी.) | 20 (50) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | पेण्डीमेथिलीन (स्टाम्प 30 ई.सी.) | 1000-1500 (3333-4950) | बुआई के 1-3 दिनों के अंदर |
| संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले घास के लिए | सल्फोसलफ्यूरॉन (लीडर 75 डब्ल्यू.जी.) | 25 (33.3) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | पेण्डीमेथिलीन (स्टाम्प 30 ई. सी.) | 1000-1500 (3333-4950) | बुआई के 1-3 दिनों अंदर |
| | आइसोप्रोट्फ्यूरॉन (एरिलान 75 डब्ल्यू.पी.)+2,4-डी.ई) | 750+500 (1000-1315) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | सल्फोसलफ्यूरॉन 75 प्रतिशत+मेटसलफ्यूरॉन 5 प्रतिशत) टोटल 80 (75+5) डब्ल्यू.डी.जी. | 30̣ 2 (40) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |
| | मीसोसलफ्यूरॉन+आयोडोसलफ्यूरॉन ऐटलेंनटीस 3+6 (3+6)डब्ल्यू.डी.जी. | 12̣2.2 (400) | बुआई के 30-35 दिनों बाद |

एवं पोटाश कि.ग्रा./हैक्टर (सम्पूर्ण मात्रा बुआई के समय) देनी चाहिए।

- गेहूं की फसल में यदि जिंक की कमी है, तो 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर की दर से बुआई के समय खेत में डालनी चाहिए। यदि इसके बाद भी जिंक की कमी दिखाई देती है, तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट का दो से तीन पर्णीय छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर अवश्य करें। गंधक की कमी को दूर करने के लिए गंधकयुक्त उर्वरक जैसे अमोनियम सल्फेट अथवा सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग अच्छा रहता है।
- **खरपतवार नियंत्रण:** गेहूं की फसल में पाये जाने वाले खरपतवार मुख्यत: दो श्रेणियों में रखे जाते हैं। एक संकरी पत्ती वाले जैसे-मोथा, गुल्ली डण्डा, जंगली जई आदि व दूसरे चौड़ी पत्ती वाले जैसे-बथुआ, खरतुवा, हिरनखुरी, कृष्णनील आदि।
- खरपतवारों का नियंत्रण खरपतवारनाशी रसायनों द्वारा करने से जहां एक ओर खरपतवारों का उचित समय पर नियंत्रण हो जाता है वहीं दूसरी ओर लागत एवं समय की भी बचत होती है।
- खरपतवारनाशी रसायनों का उपयोग करते समय यह ध्यान देना होगा कि उसकी उचित सान्द्रता को उचित विधि द्वारा उपयुक्त समय पर प्रयोग करें ताकि इनसे समुचित लाभ प्राप्त हो सके।
- **जल प्रबंधन:** गेहूं के अच्छे उत्पादन के लिए 4-6 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। पानी की उपलब्धता के अनुसार सिंचाई करनी चाहिए।

**जौ**

- **बुआई का समय:** जौ रबी मौसम की फसल है, आमतौर पर इसकी बुआई अक्टूबर से दिसम्बर तक की जाती है। असिंचित क्षेत्रों में 20 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक जौ की बुआई करनी चाहिए, जबकि सिंचित क्षेत्रों में 25 नवम्बर तक बुआई कर देनी चाहिए। पछेती जौ की बुआई 15 दिसम्बर तक कर सकते हैं।

जौ

सारणी 3. गेहूं की फसल में जल उपलब्धता के अनुसार सिंचाई का निर्धारण

| सिंचाई की उपलब्धता | शीर्ष जड़ निकलते समय (21-25) | कल्ले फुटाव के समय (40-45) | तने में गांठ बनते समय (60-65) | बालियां निकलते समय (80-85) | दानों में दूध भरते समय (105-110) | दाने सख्त होते समय (120-135) |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | पहली | - | - | - | - | - |
| 2 | पहली | - | - | दूसरी | - | - |
| 3 | पहली | - | दूसरी | - | तीसरी | - |
| 4 | पहली | दूसरी | - | तीसरी | चौथी | - |
| 5 | पहली | दूसरी | तीसरी | चौथी | पांचवीं | - |
| 6 | पहली | दूसरी | तीसरी | चौथी | पांचवी | छठी |

- **किस्मों का चयन:** विभिन्न परिस्थितियों के लिए निम्नानुसार किस्में संस्तुत की गई हैं:
- **सिंचित समय से बुआई के लिए संस्तुत उन्नत प्रजातियां:** डीडब्ल्यूआरबी 182, डीडब्ल्यूआरबी 160, डीएल 83, आरडी 2503, आरडी 2552 आदि।
- **सिंचित देर से बुआई के लिए उन्नत प्रजातियां:** आरडी 2508, डीएल 88, मंजुला, एनडीबी 1173, एनडीबी 1445, नरेन्द्र जौ-1, नरेन्द्र जौ-3, आजाद, मंजुला, बीएसएस 352, जेबी 58 आदि।
- **असिंचित समय से बुआई के लिए उन्नत प्रजातियां:** आरडी 2508, आरडी 2624, आरडी 2660, पीएल 419, के. 560, के 603, गीतांजलि आदि।
- **क्षारीय एवं लवणीय मृदा के लिए उन्नत प्रजातियां:** आरडी 2552, डीएल 88, एनडीबी 1173, नरेन्द्र जौ-1 आदि।
- **माल्ट हेतु उन्नत प्रजातियां:** प्रगति (के. 508), ऋतम्भरा (के. 551), डीडब्ल्यूआर-28, बीसीयू 73 (रेखा) आदि।
- **लवणता/मध्यम लवणता/क्षारीयता/क्षारीय मृदा के प्रति सहनशील प्रजातियां:** आरडी 2794, आरडी 2907, केबी 1425 (आजाद जौ-33) आदि।
- **बुआई:** जौ की प्रति हैक्टर बुआई के लिए 75 कि.ग्रा. बीज का प्रयोग करें। जौ की बुआई हल के पीछे कूड़ों में अथवा सीड ड्रिल से 20 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर 5-6 सें.मी. की गहराई में करें। यदि बीज प्रमाणित न हो, तो बुआई से पूर्व 1.0 कि.ग्रा. बीज को 2 ग्राम थीरम या 2.5 ग्राम कार्बेण्डाजिम नामक दवा से बुआई से पहले उपचारित करें।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम उर्वरक की लगभग 60:30:15 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर की दर से डालें। फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय मूल रूप में डालें, जबकि नाइट्रोजन की आधी-आधी मात्रा बुआई तथा सिंचाई से पहले दें।
- **खरपतवार प्रबंधन:** अधिक मात्रा में

## शीतकालीन मक्का

- **भूमि का चयन तथा तैयारी:** दोमट मृदा रबी मक्का के लिए उपयुक्त होती है। सामान्यत: 1-2 जुताई मिट्टी पलटने वाले हल या डिस्क हैरो से करके मिट्टी को भुरभुरी बना लें। यदि नमी की कमी हो, तो पलेवा करके खेत की तैयारी कर लें।

- **किस्मों का चयन:** रबी मक्का की बुआई के लिए संस्तुत उन्नत प्रजातियां जैसे संकर मक्का-एच.क्यू.पी.एम.-1, मीठी मक्का (स्वीटकॉर्न) के हरे भुट्टे हेतु प्रिया स्वीटकॉर्न, माधुरी स्वीटकॉर्न व चारा हेतु मक्का अफ्रीकन टॉल, जे.-1006 आदि हैं। ठंड/पाला/शीतकालीन ठंड के प्रति सहनशील मक्का की उन्नत प्रजातियां:-जीके 3150 हाइब्रिड एवं शालीमार मक्का हाइब्रिड 4 आदि प्रमुख हैं।
- **बुआई का समय, बीज दर एवं बुआई की विधि:** रबी मक्का की बुआई का उपयुक्त समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक है। रबी मक्का हेतु 20-22 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर का प्रयोग करें, जिससे लगभग 85-90 हजार पौधे प्रति हैक्टर प्राप्त हो सकें। बुआई के पूर्व बीज शोधन अवश्य करें, पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20-25 सें.मी. रखें। बीजजनित रोगों से बचाव हेतु बीज को कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत की 2 ग्राम अथवा थीरम 2.5 ग्राम मात्रा में प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करके बोना चाहिए।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** मृदा परीक्षण न होने पर बुआई के समय सामान्यत: संकर मक्का के लिए 150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 75 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 60 कि.ग्रा. पोटाश एवं 40 कि.ग्रा. सल्फर एवं संकुल मक्का के लिए 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश एवं 30 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हैक्टर और यदि भूमि में जिंक की कमी हो, तो बुआई से पहले 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट भूमि में अवश्य मिलाना चाहिए। पौधे के लगभग घुटने तक की ऊंचाई के होने या बुआई के लगभग 30-35 दिनों बाद यूरिया की टॉप ड्रेसिंग कर दें।
- **खरपतवार नियंत्रण:** मक्का की फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए 3-4 बार निराई-गुड़ाई की आवश्यकता रहती है। पहली निराई-गुड़ाई, बुआई के 20-25 दिनों बाद करें, जिससे खेत में खरपतवार न रहें। खड़ी फसल में अधिक नमी के कारण, खरपतवार का प्रकोप अधिक होता है। निराई-गुड़ाई की गहराई 4-5 सें.मी. से अधिक नहीं होनी चाहिए अन्यथा पौधों की जड़ों को नुकसान पहुंचने की आशंका बनी रहती है। खरपतवार के उगने के समय उखाड़ देना सबसे अच्छा उपचार माना जाता है। मक्का की फसल के लिए खरपतवारनाशी दवा का उपयोग भी किया जा सकता है।

सारणी 4. जौ की फसल में रासायनिक खरपतवार नियंत्रण

| खरपतवारनाशी | दवा की मात्रा (प्रति हैक्टर) | खरपतवार | प्रयोग विधि |
|---|---|---|---|
| पेण्डीमेथिलीन 30 प्रतिशत या<br>आइसोप्रोटफ्रॉन 75 प्रतिशत | 3.5 लीटर<br>1.25 कि.ग्रा | संकरी पत्ती वाले (जंगली जई, गुल्ली डंडा) | बुआई के 30-35 दिनों बाद 600-700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर में छिड़काव करें। |
| 2,4-डी (सोडियम लवण 80 प्रतिशत) | 650 ग्राम | चौड़ी पत्ती वाले (हिरनखुरी, बथुआ, वन गाजर) | बुआई के 30-35 दिनों बाद 600-700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर में छिड़काव करें। |
| आइसोगार्ड प्लस<br>2,4 डी, एस्टर<br>आइसोप्रोटफ्रॉन 75 प्रतिशत | 1.25 कि.ग्रा<br>750 ग्राम<br>1.0 कि.ग्रा | संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के लिए (जंगली जई, गुल्ली डंडा, हिरनखुरी, बथुआ, वन गाजर) | बुआई के 30-35 दिनों बाद 600-700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर में छिड़काव करें। |

खरपतवार होने पर शाकनाशी रसायनों का प्रयोग सावधानी पूर्वक करें।

- **जल प्रबंधन:** जौ की सफल खेती के लिए 2-3 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। यदि एक ही सिंचाई उपलब्ध हो, तो उसको बुआई के 30-35 दिनों बाद ही दें। दो सिंचाई की सुविधा होने पर पहली सिंचाई बुआई के 25-30 दिनों बाद तथा बुआई के 65-70 दिनों बाद दूसरी सिंचाई दें। लवणीय तथा क्षारीय मृदा में अधिक संख्या में हल्की सिंचाई देना, ज्यादा गहरी तथा कम सिंचाई देने की अपेक्षाकृत उत्तम माना जाता है।

चना

**चना**

- **बुआई का समय:** उत्तर भारत में धान, मक्का, ज्वार, बाजरा, कपास एवं गन्ने की फसल काटने के बाद जहां सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं, चने की बुआई नवम्बर के अन्त तक या दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक कर सकते हैं। जिन खेतों में उकठा रोग का प्रकोप अधिक होता है वहां इसकी बुआई देरी से करना लाभदायक रहता है।
- **किस्मों का चयन:** विभिन्न परिस्थितियों के लिए चने की निम्नानुसार किस्में संस्तुत की गई हैं:
- **पछेती बुआई के लिए उन्नत प्रजातियां:** पूसा चना विजय, एच.सी-5, जे.जी-12 एवं **काबुली प्रजातियां** जैसे पूसा 1003, राज विजय काबुली 101, जी.एन.जी. 1292, हरियाणा काबुली चना-4 आदि।
- **अत्यधिक जलवायु सहिष्णु उन्नत प्रजातियां (सूखा/नमी तनाव सहनशील/जल तनाव/सीमित जल/कम वर्षा के लिए):** पूसा 3043 (बीजी 3043), पूसा चना 10216 (बीजीएम 10216), सुपर एनिगेरी-1 (एमएबीसी-डब्ल्यूआर-एसएआई) आदि।
- **गर्मी तनाव/उच्च तापमान के प्रति सहनशील चना की उन्नत प्रजातियां:** पूसा 3043 (बीजी 3043) आदि।
- **चने की बायो-फोर्टिफाइड उन्नत प्रजातियां:** आईपीसी 2005-62 (देसी) (उच्च प्रोटीन 27.25 प्रतिशत), शालीमार चना-2 (उच्च प्रोटीन 27 प्रतिशत) आदि।
- **बीजोपचार:** अच्छे अंकुरण तथा स्वस्थ पौधों की पर्याप्त संख्या हेतु बीजों को कवकनाशी से बीज उपचार करने की सलाह दी जाती है। एक ग्राम बाविस्टीन या 5 से 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधन अवश्य करें। इसके अलावा बीज को राइजोबियम टीका द्वारा उपचारित करना अति आवश्यक है।
- एक हैक्टर क्षेत्रफल के लिए राइजोबियम टीके के दो पैकेट पर्याप्त होते हैं। बीज उपचार 10-12 घंटे पहले कर लेना चाहिए। इसके प्रयोग से चने की पैदावार में 15 से 20 प्रतिशत की बढ़ोतरी की जा सकती है। दलहनी फसलों के लिए फॉस्फेट पोषक तत्व अत्यधिक महत्वपूर्ण है। भूमि में अनुपलब्ध फॉस्फेट को उपलब्ध दशा में परिवर्तित करने में फॉस्फेट घुलनशील बैक्टीरिया का टीका बहुत ही सहायक होता है।
- **बुआई:** चने के बीजों की बुआई गहराई में करनी चाहिए, ताकि कम पानी में भी इसकी जड़ों में नमी बनी रहे। सिंचित क्षेत्र में 5-7 सें.मी. तथा बारानी क्षेत्रों में सरंक्षित नमी को देखते हुए 7-10 सें.मी. गहराई तक बुआई की जा सकती है। चने की पछेती बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 सें.मी. रखनी चाहिए।
- **उर्वरकों की मात्रा एवं प्रयोग:** चने की अच्छी फसल के लिए प्रति हैक्टर 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस का उपयोग बुआई के समय करना चाहिए। गंधक की कमी वाली मृदा में 20 कि.ग्रा. गंधक

प्रति हैक्टर तथा जस्ते की कमी वाली मृदा में 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर का प्रयोग लाभकारी होता है।

- **जल प्रबंधन:** सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने तथा जाड़े की वर्षा न होने पर बुआई के 45 तथा 75 दिनों बाद सिंचाई करना लाभप्रद होता है। बुआई के 30-35 दिनों के बाद निराई-गुड़ाई भी अवश्य कर लें।
- **कलिका तुड़ाई:** फसल के 35-40 दिनों बाद मुख्य कलिकाओं को ऊपर से अवश्य तोड़ें, ताकि नीचे से नई कलिकायें निकलकर प्रति पौधा अधिक शाखायें प्राप्त हो सकें।

**मटर**

- **बुआई का समय:** मटर की बुआई का उपयुक्त समय अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर के मध्य तक होता है। देर से बुआई करने से 'फलीबेधक' के प्रकोप की आशंका बढ़ जाती है, जिससे फसल की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- **किस्मों का चयन:** विभिन्न परिस्थितियों के लिए मटर की निम्न किस्में संस्तुत की गई हैं:
- **उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र के लिए उन्नत प्रजातियां:** आईपीएफडी 12-8 (आकाश), आईपीएफडी 13-2 (अनंत), मालवीय मटर 2 आदि।
- **उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र के लिए:**

## मसूर

- **बोने का समय:** धान के बाद खाली खेतों में विशेषकर मसूर को उगाया जाता है। उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र तथा मध्य क्षेत्र में नवम्बर का दूसरा पखवाड़ा बुआई का उचित समय है।
- **किस्मों का चयन:** विभिन्न परिस्थितियों के लिए मसूर की निम्न किस्में संस्तुत की गई हैं:
- **उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र व मध्य क्षेत्र के लिए उन्नत प्रजातियां:** एल-4717, एल-4729, पीएसएल-9, वीएल मसूर 148, कोटा मसूर 3, छत्तीसगढ़ मसूर-1 (नई प्रजाति) आदि।
- **जलवायु सहिष्णु प्रजातियां (सूखा/नमी तनाव सहनशील/जल तनाव/सीमित जल/कम वर्षा के लिए):** कोटा मसूर 2 (आरकेएल 14-20) और कोटा मसूर 3 (आरकेएल 605-03) आदि।
- **लवणता/मध्यम लवणता/क्षारीयता/क्षारीय मृदा के प्रति सहनशील उन्नत प्रजातियां:** पीएसएल-9, पीडीएल-1, पूसा श्वेता पीएसएल-19 आदि।

- **गर्मी से तनाव/उच्च तापमान के प्रति सहनशील उन्नत प्रजातियां:** कोटा मसूर 2 (आरकेएल 14-20), कोटा मसूर 3 (आरकेएल 605-03), बिधान दाल 16 आदि।
- **ठंड/पाला/शीतकालीन ठंड के प्रति सहनशील उन्नत प्रजातियां:** शालीमार मसूर -3 आदि।
- **मसूर की बायो-फोर्टिफाइड उन्नत प्रजातियां:** पूसा अगेती मसूर (एल 4717) (आयरन 65.0 पीपीएम) और आईपीएल 220 (आयरन 73.0 पीपीएम और जिंक 51.0 पीपीएम से भरपूर) आदि।
- **बुआई:** मसूर के बड़े दाने वाली प्रजातियों के लिए बीज दर 55-60 कि.ग्रा./हैक्टर तथा छोटे दानों वाली प्रजातियों के लिए बीज दर 40-45 कि.ग्रा./हैक्टर उचित है। मसूर की बुआई पंक्तियों में 20-25 सें.मी. की दूरी पर करनी चाहिए, जबकि पछेती बुआई के लिए यह दूरी घटाकर 15 सें.मी. कर देनी चाहिए। बीजजनित रोग से बचाव के लिए थीरम 2.5 ग्राम या जिंक मैंग्नीज कार्बोनेट 3.0 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बुआई से पूर्व शोधित कर लेना चाहिए।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** मृदा परीक्षण के आधार पर समस्त उर्वरक अन्तिम जुताई के समय हल के पीछे कूड़ में बीज की सतह से 2 सें.मी. गहराई एवं 5 सें.मी. साइड में देना सर्वोत्तम रहता है। 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एवं 50-60 कि.ग्रा. फॉस्फेट कूड़ में डालना चाहिए। यदि डीएपी उपलब्ध है, तो इसकी 100 कि.ग्रा. मात्रा/हैक्टर की दर से प्रयोग करें। गंधक की आपूर्ति हेतु 20 कि.ग्रा. गंधक/हैक्टर तत्व का प्रयोग करें। यदि जिंक की कमी हो, तो प्रति हैक्टर 25 कि.ग्रा. की दर से जिंक सल्फेट खेत की अंतिम तैयारी से पहले खेत में अच्छी तरह मिला दें।
- **खरपतवार नियंत्रण:** बुआई के 25-30 दिनों बाद एक निराई-गुड़ाई अवश्य कर दें। खरपतवार नियंत्रण हेतु 2.0 लीटर फ्लूक्लोरोलिन 45 ई.सी. की 2.2 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर लगभग 800-1000 लीटर पानी में घोलकर बुआई के तुरन्त पहले मृदा में मिलाना चाहिए अथवा एलाक्लोर 50 प्रतिशत ई.सी. की 4.0 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर उपरोक्तानुसार पानी में घोलकर फ्लैट फैन नॉजिल से बुआई के 2-3 दिनों के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें।

मटर

पन्त मटर 250, एचएफपी 1428, कोटा मटर 1 (केपीएफ 101), पंत मटर-5 आदि।

- **मध्य क्षेत्र के लिए:** जे.पी. 885, केपीएमआर 144-1, अंबिका, केपीएमआर 400 आदि।
- **पर्वतीय क्षेत्र के लिए:** मालवीय मटर 15, आईएफपीडी 1-10, पंत मटर 42, एचएफपी 9426 आदि।
- **मटर की बायो-फोर्टिफाइड उन्नत प्रजातियां:** अर्पण (आईपीएफडी 19-3) (प्रोटीन 20-22 प्रतिशत), आयरन 91.5 पीपीएम, जिंक 50.5 पीपीएम से भरपूर) आदि।
- **बीजोपचार:** बीजजनित रोग से बचाव के लिए 2.5 ग्राम कार्बेण्डाजिम या थीरम या कैप्टॉन/कि.ग्रा. बीज से उपचारित करके बोना लाभदायक रहता है। उचित राइजोबियम कल्चर का टीकाकरण भी जड़ों में ग्रन्थियों के विकास में सहायक होता है।
- **बुआई:** अगेती किस्मों के लिए 30×5 सें.मी. और पछेती किस्मों के लिए 45-60 सें.मी.×10 सें.मी. की दूरी रखें। बीजों को मृदा में 2-3 सें.मी. की गहराई पर बोएं। एक हैक्टर भूमि में बुआई के लिए 90-100 कि.ग्रा. बीज का प्रयोग करें।
- **खरपतवार नियंत्रण:** पौधों की पंक्तियों में उचित दूरी खरपतवार की समस्या के नियंत्रण में काफी सहायक होती है। एक या दो निराई-गुड़ाई पर्याप्त होती है। बुआई के 20-25 दिनों बाद प्रथम सिंचाई के पूर्व पहली और 40-45 दिनों बाद सिंचाई के उपरांत ओट आने पर दूसरी निराई-गुड़ाई कर दें। फ्लूक्लोरोलिन 45 ई.सी. की 2.2 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर लगभग 800-1000 लीटर पानी में घोलकर बुआई के तुरन्त पहले मिट्टी में मिलाना चाहिए अथवा एलाक्लोर 50 प्रतिशत ई.सी. की 4.0 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर उपरोक्तानुसार पानी में घोलकर फ्लैट फैन नॉजिल से बुआई के 2-3 दिनों के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें। बासालिन 0.75-1.0 कि.ग्रा./हैक्टर बुआई से पहले 800-1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव खरपतवार नियंत्रण के लिए लाभप्रद है।

**लाही, राई और सरसों**

- **बोने का समय:** इसकी बुआई अक्टूबर के अंतिम सप्ताह तक पूर्ण कर लेनी चाहिए। हालांकि सिंचित दशा में पछेती बुआई 15 नवम्बर तक कर सकते हैं।
- **किस्मों का चयन:** विभिन्न परिस्थितियों के लिए सरसों की निम्न किस्में संस्तुत की गई हैं:
- **सिंचित पछेती बुआई के लिए प्रमुख उन्नत प्रजातियां:** पूसा सरसों 32 (27.1 क्विंटल/हैक्टर और 2.0 प्रतिशत से कम इरूसिक एसिड), पूसा डबल जीरो सरसों 33 (26.44 क्विंटल/हैक्टर और 2.0 प्रतिशत से कम इरूसिक एसिड और ग्लूकोसाइनोलेट (30 पीपीएम से कम) आदि।
- **बारानी क्षेत्र के लिए:** आरबी 50, आरजी.एन. 48, गीता अरावली, पी.बी. आर. 97 एवं **क्षारीय एवं लवणीय** भूमि के लिए सी.एस. 52, सी.एस. 54, सी.एस. 56 आदि।
- **सरसों की अत्यधिक जलवायु सहिष्णु प्रजातियां (सूखा/नमी तनाव सहनशील/जल तनाव/सीमित जल/कम वर्षा के लिए):** आरजीएन-298, जीएम-3 (गुजरात सरसों-3), डीआरएमआर 1165-40, आरसीएच 1, पूसा डबल जीरो मस्टर्ड 33, बिरसा भाभा सरसों 1 (बीबीएम 1) आदि।
- **लवणता/मध्यम लवणता/क्षारीयता/**

पूसा सरसों

## बरसीम और जई

- **बरसीमः** बुआई के बाद 2-3 सिंचाई एक-एक सप्ताह में और फिर आवश्यकतानुसार प्रत्येक 20-25 दिनों पर करते रहें। बुआई के 45 दिनों के बाद पहली कटाई करें तथा चारा कटाई के बाद फिर से सिंचाई करें।
- **जईः** नवम्बर का पूरा महीना चारे हेतु जई बुआई के लिए अच्छा है। बीज को ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित कर बुआई करें। जई की केन्ट, यू.पी. ओ.-94, यू.पी.ओ.-212, क्लेमिंग गोल्ड आदि किस्में उपयुक्त हैं। एक हैक्टर के लिए 80-100 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त है।

**क्षारीय मृदा के प्रति सहनशील भारतीय सरसों की उन्नत प्रजातियां:** जेके समृद्धि गोल्ड (जेकेएमएस 2), सीएस-58, सीएस 60, सीएस 61, सीएस 62), सीएस 64 आदि।

- **गर्मी से तनाव/उच्च तापमान के प्रति सहनशील भारतीय सरसों की उन्नत प्रजातियां:** आरजीएन-298, जीएम-3 (गुजरात सरसों-3), डीआरएमआर 1165-40, राधिका (डीआरएमआर 2017-15), केएमआर 16-2 (सुरेखा) आदि।
- **ठंड/पाला/शीतकालीन ठंड के प्रति सहनशील ब्राउन सरसों की उन्नत प्रजातियां:** शालीमार सरसों-3 (केबीएस-3) आदि।
- **सरसों की बायो-फोर्टिफाइड प्रजातियां:** पूसा सरसों 30 (तेल में <2.0 प्रतिशत इरुसिक एसिड), पूसा डबल जीरो सरसों 31 (देश की पहली कैनोला गुणवत्ता वाली भारतीय सरसों की किस्म और तेल में <2.0 प्रतिशत इरुसिक एसिड और बीज में ग्लूकोसाइनोलेट्स <30.0 पीपीएम), पूसा सरसों 32 (तेल में <2.0 प्रतिशत इरुसिक एसिड) और पूसा सरसों 34 (तेल में <2.0 प्रतिशत कम इरुसिक एसिड) आदि।
- **थिनिंग:** राई की फसल में बुआई के 15-20 दिनों के बाद घने पौधों को निकाल करके पौधों की आपसी दूरी 10-15 सें.मी. कर लें। इसके साथ ही सिंचाई के पहले पौधों की छंटाई कर लें।
- **जल प्रबंधन:** बुआई के 30-35 दिनों के बाद पहली सिंचाई करें और ओट आने पर 75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।
- **खरपतवार नियंत्रण:** बुआई के लगभग 25 से 30 दिनों बाद निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। इससे पौधों के सांस लेने की क्षमता बढ़ जाती है तथा इससे पौधों का तेजी से अच्छा विकास होता है। पौधे घने होने और खरपतवार बढ़ने से लाही की उपज में 20-25 प्रतिशत की कमी हो सकती है। इसके लिए फ्लुक्लोरेलिन (45 ईसी) का घोल मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।
- **पौध संरक्षण:** आरा मक्खी चमकदार रंग की घरेलू मक्खी से आकार में छोटी लगभग 4-5 मि.मी. लम्बी मक्खी होती है। मादा मक्खी का अंडरोपक आरी के आकार का होने के कारण ही इसे आरा मक्खी कहते हैं। इस कीट की सुंडिया काले स्लेटी रंग की होती हैं। ये पत्तियों को किनारे से या विभिन्न प्रकार के छेद बनाती हुई बहुत तेजी से खाती हुई पूरा पौधा पत्ती विहीन कर देती हैं।
- इसके नियंत्रण के लिए 5 फेरोमोन ट्रैप (गंधाश)/हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। *बैसिलस थुरिंजिएन्सिस* 1.0 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से 400-500 लीटर पानी में घोलकर आवश्यकतानुसार 15 दिनों के अन्तराल पर सायंकाल छिड़काव करना चाहिए।
- रासायनिक नियंत्रण हेतु मैलाथियॉन 5 प्रतिशत धूल 20-25 कि.ग्रा. या मैलाथियॉन 50 प्रतिशत ई.सी. की 1.5 लीटर या डाइक्लोरोवॉस 76 प्रतिशत ई.सी. की 500 मि.ली. या क्विनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. 1.25 लीटर/हैक्टर की दर से 600-700 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त राई और सरसों के पौधों को झुलसाने वाले रोगों और सफेद गेरू से बचाने के लिए पर्याप्त पानी में 2 कि.ग्रा. जिंक मैंग्नीज कार्बामेट 75 प्रतिशत दवा का छिड़काव करें।

**शरदकालीन गन्ना**

- **बुआई:** शीतकालीन गन्ने की बुआई 15 नवम्बर से पहले अवश्य पूरी कर लें। 15 नवम्बर के बाद तापमान में कमी से बोये गये गन्ने का अंकुरण अच्छा नहीं होता। फसल की अच्छी बढ़वार के लिए 12-15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें और बुआई के 25-30 दिनों बाद निराई-गुड़ाई अवश्य कर लें।

गन्ना

- **किस्मों का चयनः** विभिन्न परिस्थितियों के लिए शरदकालीन गन्ने की निम्न किस्में संस्तुत की गई हैं:
- **गन्ने की मध्य या देर से पकने वाली उन्नत प्रजातियांः** को.शा. 767, को.शा. 802, को.शा. 07250, को. शा. 7918, सीओएलके 8102 आदि में से उपलब्धतानुसार प्रजातियों का प्रयोग करें।
- **उत्तर-पूर्व और उत्तर मध्य भारत के लिए उन्नत प्रजातियांः** सीओ 0232, सीओ 0233 आदि।
- **अत्यधिक जलवायु सहिष्णु प्रजातियां (सूखा/नमी तनाव सहनशील/जल तनाव/सीमित जल/कम वर्षा के लिए):** संकेश्वर 049 (सीओ एसएनके 05103), संकेश्वर 814 (सीओ एसएनके 05104), सीओबीआईएन 02173 (22/94) डी01 वाईएएनजी, सीओ 0212 आदि।
- **बाढ़/जलमग्नता/जल जमाव/गहरे पानी के प्रति सहनशील उन्नत प्रजातियांः** संकेश्वर 049 (सीओ एसके 05103), संकेश्वर 814 (सीओएसएनके 05104), गुजरात गन्ना 5, गुजरात गन्ना 7, सीओए 08323, सीओएलके 09204 (इक्षु-3), सीओए 11321, सीओओआर 10346 (चर्चिका), सीओएलके 12207 (इक्षु-6), रंगा (सीओ वी 15-356), कलिंगा गन्ना-346 आदि।
- **लवणता/मध्यम लवणता/क्षारीयता/क्षारीय मृदा के प्रति सहनशील उन्नत प्रजातियांः** संकेश्वर 814 (सीओएसएनके 05104), सीओ 0212, दिव्यांशी-सीओएन 15071 आदि।
- **ठंड/पाला के प्रति सहनशील गन्ना की उन्नत प्रजातियांः** सीओ 16030 (करन एल 6) आदि।
- **पोषक तत्व प्रबंधनः** संवर्धित ट्राइकोडर्मा 20 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से 200 कि.ग्रा. गोबर की खाद या प्रेसमड के साथ मिलाकर नालियों में प्रयोग करें या संवर्धित ट्राइकोडर्मा मिलाकर प्रेसमड केक 10 टन/हैक्टर की दर से गन्ना पंक्तियों में डालने से पेड़ी का फुटाव अच्छा होता है। इसके अलावा यदि मृदा परीक्षण नहीं किया गया है, तो एनपीके 300:100:200 कि.ग्रा./हैक्टर की सामान्य अनुशंसा का पालन करें। 625 कि.ग्रा./हैक्टर सुपर फॉस्फेट को नालियों में डालें और कुदाल से मिलाएं। जिंक और आयरन की कमी वाली मृदा में 37.5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट/हैक्टर और 100 कि.ग्रा. फेरस सल्फेट/हैक्टर डालें। गन्ने की उपज और रस की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए सल्फर की कमी वाली मृदा में 500 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से जिप्सम के रूप में सल्फर का प्रयोग करें।
- **पेड़ी प्रबंधनः** अच्छी पेड़ी लेने के लिए गन्ने की कटाई सतह से करें, ताकि फुटाव अच्छा हो। कटाई के बाद जल्द फुटाव के लिए ठूंठों पर इथरेल (12 मि.ली./100 लीटर पानी) का छिड़काव करें। गन्ना (पेड़ी) पंक्तियों से सटाकर गहरी जुताई कर संस्तुत उर्वरक (200:130:100 कि.ग्रा. यूरिया, डीएपी एवं पोटाश/हैक्टर) मात्रा का प्रयोग करें। कटाई के एक सप्ताह बाद खेत में सिंचाई करें।

### सब्जी फसलें

#### आलू

- आलू की बुआई यदि अक्टूबर में न हो पायी हो तो अब जल्दी पूरी कर लें। अक्टूबर में बोये गये आलू की सिंचाई करें। बुआई के 25-30 दिनों बाद 90-100 कि.ग्रा. यूरिया की टॉप ड्रेसिंग करके मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। बीज के लिए लगाये गये आलू के खेत में दोबारा मिट्टी चढ़ाएं तथा लगायी गयी फसल में बार-बार न जाएं अन्यथा सम्पर्क से विषाणु रोग फैलने की आशंका रहती है।
- **किस्मों का चयनः** विभिन्न परिस्थितियों के लिए संस्तुत आलू की किस्में निम्न हैं:
- **आलू की उन्नत पछेती प्रजातियांः** कुफरी सतलज, कुफरी आनन्द, कुफरी अशोक, कुफरी बादशाह, कुफरी बहार तथा आलू की लाल छिलके वाली किस्में-कुफरी लालिमा, कुफरी सिन्दूरी तथा प्रसंस्करण हेतु आलू की कुफरी चिपसोना-1, कुफरी चिपसोना 2, कुफरी चिपसोना 3, कुफरी चिप्सोना-4, कुफरी फ्राइसोना आदि।
- **आलू की अन्य उन्नत प्रजातियांः** कुफरी अलंकार, कुफरी अरुण, कुफरी चमत्कार, कुफरी देवा, कुफरी फ्रायोएम आदि।
- **आलू की बायो-फोर्टिफाइड उन्नत प्रजातियांः** कुफरी जामुनिया (पोषण की मात्रा ज्यादा, एंथोसायनिन की उच्च मात्रा, इसके जीवंत बैंगनी गूदे में पाए जाने वाले शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर), कुफरी माणिक (शुष्क वजन के आधार पर आयरन 21.34 पीपीएम और जिंक 49.14 पीपीएम जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर, 0.68 यूजी/ग्राम एफ.डब्ल्यू. एंथोसायनिन और 33 यूजी/100 ग्राम एफ.डब्ल्यू. कैरोटीनॉयडस से भरपूर, कुफरी नीलकंठ (विशेष आलू) उच्च एंटीऑक्सीडेंट वाले कंद (100 यूजी/100 ग्राम) और कैरोटीनॉयडस

आलू

(100-350 यूजी/100 ग्राम) से भरपूर आदि।

- **पौध संरक्षण:** अगेती तथा पछेती झुलसा रोग से बचाव के लिए इंडोफिल एम 45 या रिडोमिल एमजेड दवा के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव 2-3 बार अवश्य करें।

**लहसुन**

- **बुआई:** यदि लहसुन की बुआई नहीं हुई हो, तो इस माह पूरी कर लें। लहसुन के लिए यमुना सफेद (जी-282) प्रजाति उपयुक्त है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 15 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सें.मी. रखते हैं। लहसुन की पत्ती को 5-7.5 सें.मी. की गहराई पर नुकीला भाग ऊपर रखकर भूमि में बुआई करते हैं।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** लहसुन के खेत की तैयारी के समय 25-30 टन गोबर की खाद या 7-8 टन नाडेप कम्पोस्ट प्रति हैक्टर की दर से मिला दें और 35-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फेट एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश बुआई से पहले अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करना चाहिए। बुआई के 35-40 दिनों बाद लगभग 74 कि.ग्रा. यूरिया की प्रथम टॉप ड्रेसिंग कर दें।

लहसुन

**खरपतवार नियंत्रण**

- इसके लिए प्रति हैक्टर पेण्डीमेथिलीन का 3-4 लीटर मात्रा का छिड़काव बुआई के तुरंत बाद करना चाहिए।

**पालक एवं मेथी**

- **बुआई तथा प्रबंधन:** मैदानी क्षेत्रों में पत्तेदार सब्जियों की बुआई सर्दी के मौसम में सितम्बर से नवम्बर तक करते हैं। पालक की उन्नत किस्में जैसे ऑलग्रीन, पूसा ज्योति, पूसा हरित, पूसा भारती तथा जोबनेर ग्रीन एवं मेथी की उन्नत किस्में जैसे-पूसा अर्ली बंचिंग एवं पूसा कस्तूरी की बुआई करें। अक्टूबर में बोयी गयी इन सब्जियों की आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई व सिंचाई अवश्य करें।

पालक

- **पौध संरक्षण:** पालक में यदि सफेद

## टमाटर

- **मृदा:** टमाटर की खेती के लिए उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट से चिकनी काली कपासीय मृदा और लाल मृदा उचित होती है। हालांकि, रेतीली दोमट मृदा, जिसमें जैविक पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं, इस फसल की पैदावार के लिए अच्छी मानी जाती है।

- **जलवायु:** रबी टमाटर की अक्टूबर से नवम्बर के अंत तक बुआई व रोपाई की जा सकती है। टमाटर गर्म मौसम की फसल है, पाला सहन नहीं कर सकती हैं। 18 से 27 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त है।
- **किस्मों का चयन:** टमाटर की उन्नत प्रजातियां जैसे-पूसा दिव्या, पूसा गौरव, पूसा संकर 1, पूसा संकर 2, पूसा आदि उपयुक्त हैं।
- **बीज दर व रोपाई:** एक हैक्टर खेत की रोपाई के लिए उन्नत किस्मों की 350-400 ग्राम और संकर किस्मों की 200-250 ग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है। पौध की रोपाई 60 सें.मी. की दूरी पर बनी पंक्तियों में एवं पौधे से पौधे की दूरी 45-60 सें.मी. रखते हुए शाम के समय करें।
- **पोषक तत्व प्रबंधन:** टमाटर की अच्छी पैदावार लेने के लिए 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन के साथ 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश एवं **संकर प्रजातियों** के लिए 213 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 240 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 250 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रयोग करनी चाहिए। इस फसल को खाद देते समय ध्यान रहें कि रोपाई के समय नाइट्रोजन देने के लिए यूरिया की जगह आप दूसरी मिश्रित खाद या अमोनियम सल्फेट का प्रयोग कर सकते हैं या फिर टॉप ड्रेसिंग हेतु भी यूरिया का प्रयोग कर सकते हैं।
- **पौध संरक्षण:** झुलसा रोग का प्रकोप दिखाई दे तो बचाव के लिए मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

रतुआ के लक्षण दिखाई दें, तो रिडोमिल एमजैड 72 या मैंकोजेब दवा का 2.5 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

**मूली**

- मूली अक्टूबर से दिसम्बर तक की बुआई के लिए उपयुक्त किस्में जैसे-व्हाइट आइसिकिल, रैपिड रेड, व्हाइट टिप्ड व पूसा मृदुला, जो 25-30 दिनों में तैयार एवं जापानी सफेद, जो 55-60 दिनों में तैयार होती है, प्रमुख हैं। सितम्बर से नवम्बर तक बुआई के लिए उपयुक्त किस्में जैसे-पूसा चेतकी, पूसा मृदुला, पूसा जामुनी, पूसा गुलाबी मूली, पूसा विधु, पालम हृदय जो 40-45 दिनों में तैयार हो जाती है, को लगाएं।

मूली

**गाजर**

- नवम्बर माह गाजर की बुआई के लिए उत्तम है। गाजर की उन्नत किस्मों में पूसा रुधिरा, पूसा मेघाली, पूसा यमदग्नि, पूसा आसिता, चौंटनी,

## रबी प्याज

**पौधशाला लगाना**

- प्याज के बीज की बुआई का समय मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर उपयुक्त है। रबी प्याज की फसल के लिए पौधशाला में बीज की बुआई करें। प्याज की प्रजाति जैसे-एग्री फाउन्ड, लाइट रेड, पूसा रेड, पूसा माधवी, पूसा रिद्धी, व्हाइट फ्लैट, पूसा व्हाइट राउंड प्रजातियां हैं। पौधशाला में बुआई के लिए प्रति हैक्टर 8-10 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त होता है। प्याज की पौध भूमि की सतह से उभरी हुई क्यारियों में तैयार करनी चाहिए।

**पोषक तत्व प्रबंधन**

- प्याज के खेत में गोबर की खाद 20-25 टन/हैक्टर, नाइट्रोजन 60-70 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 70 कि.ग्रा व पोटाश 60 कि.ग्रा./हैक्टर बुआई से पहले अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करना चाहिए।

**खरपतवार नियंत्रण**

- रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु स्टॉम्प का 3.5 लीटर/हैक्टर की दर से रोपाई के बाद सिंचाई से पहले छिड़काव करें।

## सब्जी मटर

**जलवायु**

- सब्जी मटर के लिए ठंडी जलवायु की आवश्यकता है। पाले का असर फूल तथा फल आने की अवस्था में अधिक होता है। बीजजमाव के लिए न्यूनतम 5 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा अधिकतम 22 डिग्री सेल्सियस उचित है। सब्जी मटर की बुआई नवम्बर के प्रथम पखवाड़े तक कर सकते हैं।

**किस्मों का चयन**

- मटर की उन्नत किस्में-पूसा प्रबल, आजाद पी-1, आजाद पी-3, आजाद पी-5, बोनविले, लिंकन, वी.एल.3, पंत उपहार, जवाहर मटर-1, काशी शक्ति, पालम प्रिया एवं अर्केल आदि हैं।

**बुआई व पोषक तत्व प्रबंधन**

- पछेती किस्मों के लिए 80-100 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है। बुआई 30 सें.मी. की दूरी पर पंक्तियों में करें। बुआई से पूर्व बीज शोधन एवं बीजोपचार अवश्य करें। बुआई के समय एक हैक्टर खेत में 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फेट एवं 30 कि.ग्रा. पोटाश मिला दें।

**खरपतवार नियंत्रण**

- एक या दो हाथों से निराई करने से फसल की जड़ क्षेत्र में वायु संचार बढ़ जाता है तथा खरपतवार नियंत्रित होने से उत्पादन में वृद्धि होती है। रसायनों द्वारा नियंत्रण हेतु पेण्डीमेथिलीन (स्टॉम्प) 2.5 से 3 लीटर प्रति हैक्टर बुआई से 1 से 3 दिनों के अंदर 500 से 700 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर सकते हैं।

**पौध संरक्षण**

- तनाछेदक की रोकथाम हेतु बुआई के समय फोरेट 10 जी को 10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बुआई के समय मिट्टी में मिला दें।

## शलजम

### बुआई

- शलजम की किस्में जैसे-पूसा स्वर्णिमा एवं पूसा चन्द्रिमा की बुआई अक्टूबर से दिसम्बर तक कर सकते हैं। यह 60-65 दिनों में तैयार हो जाती है। इनकी बुआई 45 सें.मी. दूर बनी मेड़ों पर 1.5 से 2 सें.मी. गहराई पर करें और पौधों में 15-20 सें.मी. अन्तर बनाएं।

### पोषक तत्व प्रबंधन

- शलजम के खेत की तैयारी के समय 10-15 टन गोबर की खाद, 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फेट एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश बुआई से पहले अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करना चाहिए। इसमें बोरॉन तत्व का प्रभाव भी काफी होता है। अत: इसकी कमी को दूर करने के लिए बुआई के समय 20-30 कि.ग्रा. बोरैक्स प्रति हैक्टर की दर से मिट्टी में मिला दें।

### खरपतवार नियंत्रण

- इसके लिए बुआई से पहले स्टॉम्प नामक खरपतवारनाशी 3 लीटर/हैक्टर की दर से छिड़कें, जिससे जड़ बनने की अवस्था तक खरपतवार नियंत्रित रहें और तब पौधों को मिट्टी चढ़ाएं। समय-समय पर सिंचाई करके पर्याप्त नमी बनाए रखें।

## फूलगोभी तथा बंदगोभी

### फूलगोभी

- पछेती फूलगोभी की बुआई सितम्बर से नवम्बर तक कर सकते हैं। फूलगोभी की उन्नत किस्में जैसे-पूसा स्नोबॉल के-1 एवं पूसा स्नोबॉल की बुआई करें।

### बंदगोभी

- पछेती बंदगोभी की बुआई अक्टूबर से नवम्बर तक कर सकते हैं। पछेती बंदगोभी की उन्नत किस्में जैसे-गोल्डन एकड़, पूसा मुक्ता, पूसा ड्रम हैड, संकर किस्म केजीएमआर 1 की बुआई करें।

नैनटिस, चयन नं 223 आदि किस्में इस माह बोई जा सकती हैं।

### धनिया एवं जीरा

- यह समय धनिया एवं जीरा की बुआई के लिए भी उचित है। धनिया की

धनिया

बुआई के लिए आर.सी.आर. 20, आर.सी.आर. 41, आर.सी.आर. 435, आर.सी.आर. 436 एवं जीरे की बुआई के लिए आर.एस.-1, आर.जेड.-209, आर.जेड-223, जी.सी. 4 एवं आर जेड-19 आदि उन्नत प्रजातियां हैं। बुआई से पूर्व जीरे के बीज को 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम या 6 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। बुआई के तुरंत बाद फसल की हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

## बागवानी फसलें

### आम

- आम एवं अन्य फलों के बाग की सफाई करें एवं बगीचों में निराई-गुड़ाई करके खरपतवार नष्ट कर दें। नये लगे छोटे वृक्षों की पंक्तियों के बीच में मटर, मसूर एवं चना की बुआई अवश्य करें। आम के मिलीबग कीट के नियंत्रण हेतु तने और थाले के आसपास फॉलीडाल धूल का बुरकाव तथा तने के चारों ओर एल्काथिन की पट्टी लगाएं। आम के वृक्षों में थालों की सफाई कर दें

आम

## पुष्प एवं सगंधीय पौधे

- ग्लैडियोलस में स्थानीय मौसम के अनुसार सप्ताह में एक या दो बार सिंचाई करें।
- देसी गुलाब की कलम काटकर अगले वर्ष के स्टॉक हेतु क्यारियों में लगा दें।
- कारनेशन के पौधों से कटिंग लेकर जड़ें बनाने के लिए डालें।
- गुलदाउदी में फूलों की तुड़ाई करें।
- लिलीयम को खेतों में लगाएं।
- गेंदे के बीजों को एकत्रित करें।

अमरूद

तथा सूखी एवं रोगग्रस्त टहनियों को काट दें।

**अमरूद**

- अमरूद में छाल खाने वाले कीटों की रोकथाम हेतु डाइक्लोरोवॉस 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छेदों में भरकर चिकनी मिट्टी से लेप कर दें। पत्ती खाने वाले कीट का प्रकोप दिखाई दे, तो उसके नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफॉस या क्विनालफॉस दवा का 1.5 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल पर 2 छिड़काव करें।

**पपीता**

- नमी की कमी अथवा अधिकता के कारण फल उत्पादन कम हो जाता है। इसलिए जाड़े के दिनों में 15 दिनों के अंतराल पर तथा गर्मी के दिनों में 7-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। जब वृक्ष फल से लदा हो, तो उस समय सिंचाई करना अति आवश्यक है।

**आंवला**

- आंवला में सिंचाई करें। आंवले की तुड़ाई एवं विपणन की व्यवस्था करें। दीमक से बचाव हेतु फोरेट 10 जी प्रति पौधा 25-30 ग्राम डालकर मिट्टी में मिला दें। आंवला फल सड़न (अल्टरनेरिया अल्टरनेटा) को प्रतिबंधित करने के लिए फल तोड़ने के 15 दिनों पूर्व 0.1 प्रतिशत कार्बेण डाजिम का छिड़काव करना चाहिए।

आंवला

**लीची**

- लीची के पूर्ण विकसित पौधे, जिनमें फल लगना प्रारम्भ हो गया हो, उसमें फूल आने के 3-4 माह पूर्व पानी नहीं देना चाहिए।

**बेर**

- बेर में चूर्णिल आसिता से बचाने हेतु गंधकयुक्त दवा का 1.0 प्रतिशत छिड़काव करें।

**केला**

- केले में प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया का प्रयोग करें तथा 10 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें। केले में पर्ण धब्बा एवं सड़न रोग के लिए 1 ग्राम कार्बेण डाजिम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें।

केला

# लवणीय जल के उपचार हेतु चुम्बकीय जल कंडीशनर

शुष्क और अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों में खारे और लवणीय जल की समस्या लंबे समय से किसानों के सामने सबसे बड़ी चुनौती रही है। इससे फसल उत्पादन प्रभावित होता है, मृदा की उर्वराशक्ति कमजोर होती है और सिंचाई लागत भी बढ़ती जाती है। ऐसे परिदृश्य में जैसलमेर जिले के नवप्रवर्तक श्री दिलीप सिंह गहलोत ने एक अनोखा और किफायती समाधान प्रस्तुत किया है-चुम्बकीय जल कंडीशनर। यह साधन खारे पानी को खेती योग्य बनाने की दिशा में एक उपयोगी कदम है। यह तकनीक न केवल उत्पादन बढ़ाती है, बल्कि किसानों की लागत भी घटाती है और कृषि को टिकाऊ बनाती है।

किसानों के लिए पानी की गुणवत्ता खेती की सफलता का आधार है। राजस्थान, हरियाणा और गुजरात जैसे राज्यों में खारे तथा लवणीय पानी से सिंचाई करना एक बड़ी समस्या रही है, जिससे फसल उत्पादन प्रभावित होता है और लागत बढ़ जाती है। ऐसे परिदृश्य में खेतों तक पहुंचने वाला यह पानी अगर खेती योग्य बन जाए तो किसान की बड़ी चुनौती आसान हो सकती है। इसी दिशा में जैसलमेर जिले के किसान श्री दिलीप सिंह गहलोत ने खेती में आने वाली समस्याओं को समझने और हल निकालने की दिशा में काम किया। इसी दौरान उन्होंने खारे पानी की समस्या को देखते हुए यह उपकरण विकसित किया।

मृदा स्वास्थ्य हेतु लवणीय जल उपचार जरूरी

**लाभ**

- उत्पादन में 15-30 प्रतिशत तक वृद्धि
- बीज व खाद की लागत में कमी
- पौधे स्वस्थ रहते हैं, उनकी वृद्धि बेहतर होती है और उनमें रोग प्रतिरोध क्षमता भी बढ़ती है
- उपकरण की कीमत 10-15 हजार रुपये, स्थिरता 15 वर्ष तक
- कम रखरखाव और पर्यावरण अनुकूल

**संरचना और कार्यप्रणाली**

यह उपकरण 3-4 फीट लंबी स्टील (304 ग्रेड) या तांबे की पाइप से बनाया गया है। पाइप पर 4-6 शक्तिशाली नीओडिमियम चुम्बक (5000-14000 गेज क्षमता वाले) आमने-सामने लगाए गए हैं। जब खारा पानी इस पाइप से गुजरता है, तो चुम्बकीय प्रभाव के कारण उसका सतही तनाव घट जाता है। परिणामस्वरूप पानी मृदा में आसानी से रिसता है और पौधों की जड़ों में जल्दी अवशोषित होता है।

**संभावना**

भारत में भूमि का एक बड़ा भाग लवणीय जल की समस्या से प्रभावित है। विशेष रूप से राजस्थान, हरियाणा और गुजरात में इसका प्रभाव व्यापक है। इन क्षेत्रों में यह उपकरण छोटे और सीमांत किसानों के लिए लाभकारी हो सकता है। यदि इसे योजनाबद्ध ढंग से प्रचारित किया जाए, तो इसका बड़ा असर हो सकता है।

खारे और लवणीय जल वाले क्षेत्रों में खेती हमेशा से किसानों के लिए चुनौतीपूर्ण रही है। ऐसे पानी के लगातार उपयोग से मृदा की उर्वराशक्ति घटती है और फसल की वृद्धि प्रभावित होती है। राजस्थान के रेगिस्तानी इलाकों में यह समस्या विशेष रूप से गंभीर है। इसी चुनौती का व्यावहारिक समाधान जैसलमेर के किसान श्री दिलीप सिंह गहलोत ने अपने नवाचार, चुम्बकीय जल कंडीशनर के माध्यम से पेश किया है।

यह उपकरण सरल, किफायती और टिकाऊ तकनीक है। 3-4 फीट लंबी स्टील या तांबे की पाइप में लगाए गए शक्तिशाली नीओडिमियम चुम्बक पानी के अणुओं को चुम्बकीय प्रभाव से पुनर्गठित करते हैं। इसके परिणामस्वरूप खारा पानी मृदा और पौधों की जड़ों में तेजी से अवशोषित होता है।

चुंबकीय जल कंडीशनर

किसानों के अनुभव बताते हैं कि इससे फसल की पैदावार 15-30 प्रतिशत तक बढ़ जाती है, सिंचाई और बीज/खाद की लागत घटती है और पौधों की स्वास्थ्य स्थिति में सुधार होता है।

हालांकि, इस तकनीक की व्यापक प्रभावशीलता को सिद्ध करने के लिए वैज्ञानिक अध्ययन और प्रमाणन आवश्यक है। जल और मृदा के गुणों, फसल वृद्धि और दीर्घकालिक प्रभाव का परीक्षण यह तय करेगा कि इसे बड़े पैमाने पर अपनाया जा सकता है या नहीं। इसके लिए कृषि विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संस्थानों के सहयोग की आवश्यकता है।

यदि इस नवाचार को सरकारी और संस्थागत समर्थन मिले, तो यह तकनीक न केवल राजस्थान के किसानों के लिए, बल्कि देश के अन्य लवणीय जल प्रभावित क्षेत्रों के किसानों के लिए भी समाधान का साधन बन सकती है। चुम्बकीय जल कंडीशनर पानी की समस्या का स्थायी और व्यावहारिक समाधान प्रदान करते हुए खेती को अधिक टिकाऊ, लाभकारी और पर्यावरण-अनुकूल बना सकता है। ■

(**स्रोत:** विकसित कृषि संकल्प अभियान संकलन)

पंजीकरण संख्या 14252/57 पंजीयक, समाचार पत्र, भारत सरकार
दिल्ली पोस्टल पंजीकृत संख्या DL(C)-12/1145/10-12
ISSN 0023-1088
मूल्य: ₹50

डा. अनुराधा अग्रवाल, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली-110092 से लेजरटाईपसैट एवं मुद्रित। संपादक: सुनीता अरोड़ा